इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय
मानविकी विद्यापीठ

# BHDG -173
# समाचार पत्र और फीचर लेखन

खंड

# 4

## साहित्यिक लेखन, साक्षात्कार और व्यक्ति-चित्र


इकाई 17

पुस्तकों और पत्र–पत्रिकाओं की समीक्षा 329

इकाई 18

नाट्य प्रस्तुतियों, फिल्मों और कला प्रदर्शनियों की समीक्षा 349

इकाई 19

साक्षात्कार : तैयारी, संपादन और संयोजन 377

इकाई 20

व्यक्ति–चित्र 399

# खण्ड 4 परिचय

'समाचार पत्र और फीचर लेखन' के पाठ्यक्रम का यह चौथा और अंतिम खण्ड है। इस खण्ड में इकाई संख्या सत्रह से लेकर इकाई संख्या बीस तक कुल चार इकाइयाँ हैं। इकाई संख्या सत्रह पुस्तकों और पत्र–पत्रिकाओं की समीक्षा से सम्बन्धित है। इस इकाई में इस बात पर विचार किया गया है कि पुस्तकों और पत्रिकाओं की समीक्षा लिखने के लिए किस प्रकार की तैयारी की आवश्यकता है और एक अच्छे पुस्तक समीक्षक में क्या–क्या गुण होने चाहिए।

**इकाई संख्या अठारह** नाट्य प्रस्तुतियों, फिल्मों और कला प्रदर्शनियों की समीक्षा से सम्बन्धित है। आजकल समाचार–पत्रों में इसके लिए पर्याप्त जगह होती है। इस इकाई में सिनेमा, कला आर रंगमंच के विषय में लिखी गई समीक्षा की विशेषताओं पर विचार करने के साथ ही अच्छे समीक्षक के गुणों पर भी चर्चा की गई है।

**इकाई संख्या उन्नीस** में साक्षात्कार के सम्बन्ध में चर्चा की गई है। इस इकाई में यह बताया गया है कि समाचार–पत्रों आदि के लिए साक्षात्कार लेते समय साक्षात्कारकर्ता से क्या–क्या उम्मीदें होती हैं। इस इकाई में इस बात की चर्चा की गई है कि एक अच्छा साक्षात्कार लेने के लिए किस प्रकार की तैयारी अपेक्षित होती है।

**इकाई संख्या बीस** व्यक्ति–चित्र के विषय में है। इस इकाई में यह बताया गया है कि किसी व्यक्ति का व्यक्ति–चित्र तैयार करने के लिए क्या–क्या आवश्यक होता है और किसी के व्यक्ति चित्र के कौन–कौन से पक्ष हो सकते हैं। इस इकाई में यह भी बताया गया है कि किसी संस्था का प्रोफाइल कैसे तैयार करते हैं।

इस खंड की प्रत्येक इकाई में बोध प्रश्न और अभ्यास भी दिए गए हैं जो आपके लिए लाभप्रद सिद्ध होंगे। इन प्रश्नों के उत्तर लिखकर आप स्वयं अपना मूल्यांकन कर सकेंगे। खण्ड के अंत में कुछ महत्वपूर्ण पुस्तकों की सूची भी दी गई है। आप अतिरिक्त जानकारी चाहें तो पुस्तकालय आदि से इन्हें प्राप्त कर इनका भी अध्ययन कर सकते हैं।

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

# इकाई 17 पुस्तकों और पत्र–पत्रिकाओं की समीक्षा

**इकाई की रूपरेखा**


17.0 उद्देश्य

17.1 प्रस्तावना

17.2 पुस्तक समीक्षा का अभिप्राय

- 17.2.1 पुस्तक समीक्षा और आलोचना में अंतर
- 17.2.2 पुस्तक समीक्षा का महत्व

17.3 पुस्तक समीक्षा के विभिन्न पक्ष

- 17.3.1 पुस्तक का परिचय
- 17.3.2 विषय का महत्व
- 17.3.3 आलोचनात्मक मूल्यांकन
- 17.3.4 प्रकाशन संबंधी सूचनाएँ

17.4 एक अच्छे समीक्षक के गुण

- 17.4.1 विशेषज्ञता
- 17.4.2 विस्तृत सामान्य ज्ञान
- 174.3 पूर्वाग्रहमुक्तता
- 17.4.4 दृष्टि–सम्पन्नता
- 17.4.5 वस्तुनिष्ठता
- 17.4.6 संतुलित लेखन
- 17.4.7 सामाजिक दायित्व बोध

17.5 पुस्तक समीक्षा की विशेषताएँ

- 17.5.1 वस्तुनिष्ठता
- 17.5.2 पूर्वाग्रहमुक्तता
- 17.5.3 प्रासंगिकता
- 17.5.4 केंद्रीय बिंदु की पहचान
- 17.5.5 सोद्देश्यता
- 17.5.6 निजता
- 17.5.7 भाषा और शैलीगत विशेषताएँ

17.6 पत्र–पत्रिकाओं की समीक्षा

17.7 सारांश

17.8 बोध प्रश्नों/अभ्यासों के उत्तर


ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

## 17.0 उद्देश्य

फीचर लेखन के चौथे खंड की यह पहली इकाई है। इस इकाई में आप पुस्तकों और पत्र–पत्रिकाओं की समीक्षा की विशेषताओं से परिचित हो सकेंगे। इसे पढ़ने के बाद आप :

- पुस्तक समीक्षा का अभिप्राय समझा सकेंगी/सकेंगे;
- पुस्तक समीक्षा के विभिन्न पक्षों का विश्लेषण कर सकेंगी/सकेंगे;
- एक अच्छे समीक्षक के गुणों पर प्रकाश डाल सकेंगी/सकेंगे;
- पुस्तक समीक्षा की विशेषताओं का उल्लेख कर सकेंगी/सकेंगे और
- पत्र–पत्रिकाओं की समीक्षा की विशेषताओं को रेखांकित कर सकेंगी/सकेंगे।

## 17.1 प्रस्तावना

फीचर लेखन पाठ्यक्रम की यह इकाई पुस्तक और पत्र–पत्रिकाओं की समीक्षा लेखन से संबंधित है। इस इकाई में समीक्षा लेखन के विभिन्न पक्षों और विशेषताओं का परिचय दिया गया है।

समीक्षा लेखन में सक्रिय होने के पूर्व किसी भी नये समीक्षक के लिए वह समीक्षा के विभिन्न पक्षों की जानकारी प्राप्त कर लें। इसी उद्देश्य से सबसे पहले समीक्षा का अर्थ स्पष्ट किया गया है। 'समीक्षा' और 'आलोचना' पदों को लेकर विद्वानों में भी पर्याप्त मतभेद है। विवादों में पड़े बिना इतना समझना जरूरी है कि समीक्षा का अर्थ पुस्तक के कथ्य और शैली का विश्लेषण है और आलोचना का दायरा पुस्तक समीक्षा से विस्तृत है। एक अच्छा समीक्षक बनने के लिए समीक्षक के गुण और समीक्षा की विशेषताओं की जानकारी अवश्य होनी चाहिए। इस दृष्टि से इस इकाई में कुछ मुद्दों की चर्चा की गयी है। आप इन विशेषताओं को ध्यान में रखकर समीक्षा के क्षेत्र में कदम रख सकते हैं।

आप ज्यादा से ज्यादा समीक्षाएं पढ़ें और अच्छी समीक्षा और साधारण समीक्षा में अंतर स्पष्ट करें। आम तौर पर सभी पत्र–पत्रिकाओं और कई समाचार पत्रों में पुस्तक समीक्षा का स्तंभ होती है। हिन्दी में एक–दो पत्रिकाएं ऐसी भी हैं जो पुस्तक समीक्षाएँ प्रमुखता से प्रकाशित करती हैं। इसके अलावा पत्र–पत्रिकाओं की समीक्षाएँ भी प्रकाशित होती हैं। हम उनकी भी चर्चा करेंगे।

## 17.2 पुस्तक समीक्षा का अभिप्राय

**समीक्षा का शब्दिक अर्थ है** : सम्यक् अवलोकन, सम्मति, अन्वेषण आदि। पुस्तक समीक्षा में किसी पुस्तक का सम्यक् विश्लेषण किया जाता है। इस विश्लेषण से पाठक को पुस्तक विशेष के विभिन्न पहलुओं की जानकारी मिलती है। पुस्तक समीक्षा में एक पुस्तक की पूरी छानबीन की जाती है। समीक्षक पाठक को पुस्तक से परिचित कराता है। इस क्रम में वह पुस्तक के लेखक, विषय वस्तु, शिल्प, प्रकाशन स्तर आदि पर प्रकाश डालता जाता है। इसके साथ ही वह समग्र रूप में पुस्तक का आलोचनात्मक मूल्यांकन भी करता है। इस प्रकार पुस्तक विशेष के संबंध में समीक्षक अपनी राय भी व्यक्त करता है।

पुस्तक समीक्षा का पहला और प्राथमिक दायित्व पाठकों को पुस्तक से परिचित कराना है। लेकिन परिचय का अर्थ पुस्तक की विषयवस्तु का सारांश भर देना नहीं है निश्चय ही पुस्तक की विषयवस्तु के बारे में जानने की उत्सुकता ही पाठक को पुस्तक समीक्षा पढ़ने के लिए प्रेरित करती है परंतु यह भी सही है कि वह समीक्षा के द्वारा पुस्तक की विषयवस्तु, संरचना और भाषिक सर्जनात्मकता के संबंध में समीक्षक की विशेषज्ञतापूर्ण राय जानना चाहता है। वह समीक्षक से विश्लेषण और आलोचनात्मक विवेचन की भी अपेक्षा करता है। इसलिए समीक्षा लिखते समय समीक्षक को सतर्क रहना चाहिए कि उसकी समीक्षा पुस्तक का सारांश मात्र बनकर न रह जाए।

### 17.2.1 पुस्तक समीक्षा और आलोचना में अंतर

समीक्षा और आलोचना को आम तौर पर एक समझ लिया जाता है। लेकिन यहाँ हम इन्हें दो भिन्न अर्थों में प्रयुक्त कर रहे हैं। समीक्षा, जिसे अंग्रेजी में रिव्यू (Review) कहा जाता है, का प्रयोग पुस्तक समीक्षा (Book review) के अर्थ में किया गया है जबकि आलोचना (criticism) अधिक व्यापक अर्थ वाला शब्द है।

वस्तुतः समीक्षा आलोचना विधा की एक शाखा या उपशाखा है। समीक्षा का तात्पर्य पुस्तक समीक्षा से है। निश्चित रूप से वह आलोचना के दायरे में आती है पर आलोचना के दायरे में और भी बहुत कुछ आता है, जैसे किसी विधा, लेखक, प्रवृत्ति आदि का मूल्यांकन। पुस्तक समीक्षा में पुस्तक केन्द्र में होती है और आलोचना में विधा, लेखक और प्रवृत्ति भी केन्द्र में हो सकती हैं। लेकिन ऐसा नहीं है कि पुस्तक समीक्षा में विधा, लेखक और प्रवृत्ति की चर्चा नहीं होती या आलोचना में किसी पुस्तक की चर्चा नहीं होती, होती है पर संदर्भ के रूप में किसी पुस्तक पर समीक्षा लिखते समय समीक्षक उस धारा या प्रवृत्ति और उस क्षेत्र के समकालीन लेखकीय रूझान की चर्चा करता है या कर सकता है, पर चर्चा के केन्द्र में वह पुस्तक ही रहेगी। इसी प्रकार किसी विषय विशेष पर विचार करते समय आलोचक विभिन्न पुस्तकों का संदर्भ के तौर पर उल्लेख कर सकता है, उन पर अपनी राय व्यक्त कर सकता है, पर केन्द्र में वह विषय विशेष ही रहेगा न कि कोई पुस्तक। मसलन, अगर कोई लेखक भीष्म साहनी के उपन्यास 'मय्यादास की माड़ी' का विश्लेषण करता है, तो यह पुस्तक समीक्षा का उदाहरण होगा, और कोई साहित्यकार भीष्म साहनी के उपन्यास शिल्प का विश्लेषण करता है और इसके लिए वह संदर्भ के तौर पर 'तमस' और 'मय्यादास की माड़ी' का उपयोग करता है तो वह आलोचना का उदाहरण होगा।

कभी–कभी पुस्तक समीक्षा आलोचना के दायरे में प्रवेश कर जाती है। जब पुस्तक समीक्षक पुस्तक के बहाने उस लेखक के संपूर्ण लेखन या पुस्तक के विषय को आधार बनाकर एक स्वतंत्र लेख लिख दे। उदाहरण के लिए जवाहरलाल नेहरू की पुस्तक 'भारत की खोज' के प्रसिद्ध इतिहासविद् दामोदर धर्मानंद कोसंबी द्वारा लिखित समीक्षा को सिर्फ पुस्तक समीक्षा नहीं कहा जा सकता। वह एक स्वंतत्र लेख की तरह महत्वपूर्ण है। इस प्रकार के आलोचनात्मक मूल्यांकन के माध्यम से लेखक पुस्तक समीक्षा करते हुए कुछ ऐसी महत्वपूर्ण स्थापनाएँ कर जाता है जो पुस्तक से अलग भी अपना महत्व रखती हैं। साहित्यिक विषयों पर लिखी गयी समीक्षाओं में भी इसकी संभावना रहती है कि समीक्षक पुस्तक के बहाने रचनाकार के संपूर्ण लेखन या किसी खास प्रवृत्ति या उसकी भाषिक और शैलीगत विशेषताओं का ऐसा मूल्यांकन प्रस्तुत करें जो उस 'समीक्षा' को आलोचना के दायरे में पहुँचा दे।

अब तक आप एक बात समझ गये होगें कि आलोचना का क्षेत्र समीक्षा से व्यापक होता है। यहाँ व्यापकता का अर्थ क्षेत्र विस्तार से नहीं, बल्कि विश्लेषण की व्यापकता से है। समीक्षा का दायरा छोटा होता हैं, उसमें विश्लेषण किसी पुस्तक तक सीमित रहता है। यह विश्लेषण ही समीक्षा और आलोचना को एक दूसरे से जोड़ता है। दोनों में शोध–प्रवृत्ति भी होती है। किसी पुस्तक की समीक्षा करते समय समीक्षक तथ्यों की गहरी छानबीन करता है। आलोचना में खोजबीन का यह दायरा और भी बड़ा और मूल्य–आधारित हो जाता है।

वस्तुतः समीक्षा और आलोचना एक दूसरे से जुड़े अवश्य हैं पर एक नहीं है। समीक्षा आलोचना का एक अंग है पर उसका अपना अस्तित्व है, एक अलग पहचान है। इसलिए आलोचना और समीक्षा को एक दूसरे का पर्याय नहीं समझना चाहिए।

### 17.2.2 पुस्तक समीक्षा का महत्व

अब सवाल यह उठता है कि पुस्तक समीक्षा क्यों? इसका उद्देश्य क्या है? ऐसे कुछ सवाल आपके दिमाग में पनप रहे होंगें। आइए, इन सवालों का हल ढूँढ़ा जाए।

दरअसल, साहित्य में पुस्तक समीक्षा की अहम भूमिका है। समीक्षा पाठक और पुस्तक को एक दूसरे से जोड़ती है। पाठक के सामने बराबर यह समस्या रहती है कि वह कौन सी किताब पढ़े। उसके इस सवाल का समाधान पुस्तक समीक्षा कर देती है। इसके अलावा पाठक वर्ग का एक हिस्सा ऐसा भी होता है जो पूरी किताब नहीं पढ़ना चाहता या उसके पास इतना समय नहीं है कि वह सभी पुस्तकों को पढ़े। यहाँ समीक्षा उसकी मदद करती है। इस प्रकार एक बार में पुस्तक को ढेर सारे पाठकों तक पहुचाँ देती है। इसके दो फायदे होते हैं। एक तो पाठक को प्रकाशित होने वाली पुस्तकों की जानकारी मिलती रहती है, दूसरे वह नये लेखकीय रूझानों से भी परिचित होता चलता है। साहित्य, संस्कृति, विज्ञान, समाज विज्ञान, खेलकूद आदि क्षेत्रों से सम्बद्ध पुस्तकों की जानकारी समीक्षा के माध्यम से पाठकों तक पहुचँती है।

पुस्तकों के इस व्यापक संसार में पाठक के लिए सही पुस्तक का चुनाव मुश्किल काम है। समीक्षा इस मुश्किल को कम करती है। इसके अतिरिक्त वह लेखक को पाठक से जोड़ने का सामाजिक दायित्व भी निभाती है। साथ ही इसकी मदद से पाठक किसी लेखक या कृति के बारे में अपनी समझ विकसित कर सकता है और अपनी राय बना सकता है।

**बोध प्रश्न–1**

**निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर संक्षेप में दें।**

1) पुस्तक समीक्षा से आप क्या समझते हैं? दो पंक्तियों में उत्तर दीजिए।

........................................................................................................

........................................................................................................

........................................................................................................

........................................................................................................

........................................................................................................

........................................................................................................

2) पुस्तक समीक्षा और आलोचना में क्या अंतर हैं? (सही उत्तर के सामने (√) का निशान लगाइए)

क) पुस्तक समीक्षा में सिर्फ पुस्तक का सारांश और आलोचना में आलोचनात्मक दृष्टि अपनाया जाता है। ( )

ख) पुस्तक समीक्षा में पुस्तक केंद्र में होती है और आलोचना में पुस्तक का संदर्भ के रूप में उपयोग किया जाता है। ( )

ग) पुस्तक समीक्षा और आलोचना में कोई अंतर नहीं है। ( )

घ) आलोचना का दायरा पुस्तक समीक्षा की अपेक्षा व्यापक होता है। ( )

3) पुस्तक समीक्षा का क्या महत्व है? (पाँच पंक्तियों में उत्तर दें)

..........................................................................................................................................

..........................................................................................................................................

..........................................................................................................................................

..........................................................................................................................................

..........................................................................................................................................

## 17.3 पुस्तक समीक्षा के विभिन्न पक्ष

अब तक के विश्लेषण से आप पुस्तक समीक्षा के विभिन्न संकेत पा चुके हैं, मसलन, पुस्तक का परिचय, विषय का प्रतिपादन और आलोचनात्मक मूल्यांकन। कुल मिलाकर पुस्तक समीक्षा इन्हीं पक्षों को समेट कर चलती है। समीक्षक पाठकों को पुस्तक से परिचित कराता है, उसमें वर्णित विषय पर प्रकाश डालता है और उसका आलोचनात्मक मूल्यांकन करता है। समीक्षा में पुस्तक के प्रकाशन से संबंधित सूचनाएं भी दी जाती हैं। आइए, इन पर अलग–अलग विचार करें।

### 17.3.1 पुस्तक का परिचय

पुस्तक का सही परिचय प्रस्तुत करना समीक्षक का मुख्य दायित्व है। समीक्षा लिखते समय आरंम्भ में पुस्तक की सामान्य जानकारी पाठक को देनी चाहिए। सामान्य जानकारी का तात्पर्य है पुस्तक की विधा, उसकी विषय वस्तु के बारे में बताना, पुस्तक कब लिखी गई और उसका महत्त्व क्या है और विधा का भी उल्लेख करना। इस तरह की जानकारी से पाठक को यह तय करने में सुविधा रहती है कि प्रस्तुत पुस्तक उसकी अभिरुचि के अनुकूल है या नहीं। इस प्रारंभिक परिचय से ही वह समीक्षा पढ़ने की ओर प्रवृत्त होता है। निम्नलिखित उदाहरण पुस्तक समीक्षा के परिचयात्मक अंश को उजागर करता है।

**'जहालत के पचास वर्ष'**

प्रसिद्ध उपन्यास 'राग दरबारी' के रचयिता श्रीलाल शुक्ल व्यंग्य–लेखन में माहिर माने जाते हैं। उनकी तमाम रचनाओं में व्यंग्य अलग–अलग रूपों में, अलग–अलग तेवरों में और तीखेपन के साथ मौजूद है। 'जहालत के पचास वर्ष' श्रीलाल शुक्ल के अब तक के समग्र व्यंग्य लेखों का संग्रह है। यह आजाद भारत के सांस्कृतिक, धार्मिक,

राजनीतिक और आर्थिक विकास का एक ऐसा एलबम है जहां भारतीय जीवन की कमजोरियों और अंतर्विरोधों को दिखाया गया है।

श्रीलाल शुक्ल प्रगतिशील, धर्मनिरपेक्ष, उदारवादी और राष्ट्र के अधोपतन से चिंतित विचारक के रूप में सामने आते हैं। राष्ट्र के प्रति उनकी चिंता हर निबंध में मुखर है। ये रचनाएं इतनी तीखी और नुकीली हैं कि अपने गिरेबान में झांककर देखने को विवश करती हैं। लेखक खुद सफेद कॉलर वाला व्यक्ति रहा है और भारतीय नौकरशाही का अंग होने के कारण उसकी रग–रग से परिचित है। सफेद कॉलर वालों की नौकरशाही पर चोट कर सबसे अधिक कुठाराघात उन्होंने अपनों पर ही किया है। 'मम्मी जी का गधा' न केवल मध्यवर्ग के चरित्र को उजागर करता है, बल्कि भूमंडलीकरण, उदारीकरण, और बाजारवाद पर भी उंगली उठाता है। उनके मारक घेरे में मध्यवर्ग के साथ–साथ नौकरशाह भी आते हैं और इन दोनों पर चोट करते समय लेखक तनिक भी कंजूसी नहीं बरतता है।

श्रीलाल जी की वे रचनाएं ज्यादा अपील करती हैं जिनमें लेखक समाज की विद्रूपता और अंतर्विरोध को उभारने में सफल हुआ है। उनकी रचनाएं केवल भावनात्मक आवेश और मानसिक–शाब्दिक ऊहापोह और क्रीड़ा से नहीं उपजी हैं, बल्कि वे रचना और रचनाकार के आंतरिक संघर्ष और द्वंद्व का प्रतिफलन हैं। यही व्यंग्य की शक्ति है, यही श्रीलाल शुक्ल की विशिष्टता है, यही 'जहालत के पचास वर्ष की ऊर्जा और संजीवनी है।'

उपर्युक्त अंशों में पुस्तक का परिचय प्रस्तुत किया गया है। इनके लेखन और प्रस्तुति ढंग अलग–अलग हो सकते हैं, पर चार बातें कमोबेश पूरी समीक्षा में दृष्टिगोचर होती हैं। ये हैं –

- पुस्तक का सामान्य परिचय
- लेखक का संक्षिप्त परिचय
- लेखक के पहले की पुस्तकों का उल्लेख
- पुस्तक की विषय वस्तु का संकेत।

उपर्युक्त चारों बातों से पाठक को लेखक, उसके रचनात्मक क्षेत्र, पुस्तक के विषय और उसकी विधा का परिचय मिल जाता है। इस परिचय से प्रेरित होकर वह पुस्तक समीक्षा को आगे पढ़ना जारी रखता है। स्पष्ट है कि पुस्तक समीक्षा पुस्तक के परिचय पर समाप्त नहीं होती बल्कि उससे आरंभ होती है। वास्तविक समीक्षा तो इसके बाद आती हैं। पाठक समीक्षा पढ़ें, इसके लिए आवश्यक है कि आरंभ आर्कषक हो और बिना किसी लफ्फाजी के सीधी बात कहें।

### 17.3.2 विषय का महत्व

पुस्तक का सामान्य परिचय प्राप्त कर लेने के बाद पाठक पुस्तक की विषयवस्तु या कथ्य से परिचित होना चाहता है। जानना चाहता है कि पुस्तक का संबंध ज्ञान के किस क्षेत्र से है। मसलन साहित्य, कला, संस्कृति, विज्ञान, इतिहास, राजनीति विज्ञान, समाजशास्त्र, खेल–कूद आदि। विषय के परिचय के साथ उसकी प्रस्तुति की शैली की भी जानकारी आवश्यक है। अर्थात पुस्तक निबंधात्मक, आत्मकथात्मक, डायरी, उपन्यास, कहानी, प्रश्नोत्तर आदि में लिखी गई है।

तीसरी जानकारी यह आवश्यक है कि लेखक ने यह पुस्तक किस पाठक वर्ग के लिए लिखी है। यह जानना इसलिए आवश्यक है कि पाठक वर्ग की भिन्नता एक ही विषय पर लिखी गई पुस्तकों में बहुत बड़ा अंतर ला देती है। यह अंतर विषय की प्रस्तुति से लेकर भाषा के चयन तक में नजर आता है।

उपर्युक्त बातों का उल्लेख करने के साथ ही विषय वस्तु के संबंध में विचार करना चाहिए। यह देखना चाहिए कि पुस्तक की प्रासंगिकता क्या है? दूसरे, पुस्तक में विषय की प्रस्तुति किस रूप में है? क्या लेखक अपनी बात को प्रभावशाली रूप में रखने में सफल रहा है? तीसरे, लेखक ने विषय के किन–किन पक्षों को पेश किया है और ये पक्ष मूल विषय को स्पष्ट करने में कहाँ तक सहायक हुए हैं।

गिरिराज किशोर के उपन्यास 'परिशिष्ट' पर समीक्षा लिखते हुए डॉ. गोपाल ने इसकी विषय वस्तु के महत्व और उसकी प्रासंगिकता को उजागर किया है –

*''उदाहरण 'गिरिराज किशोर' ने अपने कथा संसार के केन्द्रीय मंच के रूप में एक आई.आई.टी. संस्थान को चुना है जहाँ अधिकतर उच्च वर्ग और सम्पन्न समाज के छात्र प्रतियोगिता परीक्षाओं में सफलता प्राप्त कर प्रवेश पाते हैं। इनमें से अधिकतर छात्र ऐसे पब्लिक और मिशनरी स्कूलों से आते हैं जहाँ न केवल अंग्रेजी के माध्यम से शिक्षा दी जाती है, वरन् अंग्रेजी उनकी घुट्टी में ही पिला दी जाती है। ये लड़के विलायती रहन–सहन, विलायती रीतिरिवाज, विलायती मैनर्स, विलायती लहजे, विलायती अनुभव आदि के इतने अभ्यस्त हो जाते हैं कि हिन्दी या क्षेत्रीय भाषाओं में बोलने, भारतीय ढंग से अभिवादन करने, भारतीय ढंग से कपड़े पहनने आदि में इन्हें शर्म आती है। इनके बीच अनुसूचित जाति के छात्र अपने आप को अजनबी महसूस करते हैं। उच्च जाति के छात्र बहुमत में तो होते ही हैं, वे दलित छात्रों के प्रति आक्रामक भी होते है। वे उच्चवर्गीय छात्र दलित छात्रों को अवांछित और घुसपैठिया समझते हैं, जैसे मन्दिर के प्रांगण में दो–चार सुअर घुस आये हों। इन पॉश संस्थाओं में रहन–सहन, खानपान, वेशभूषा, बातचीत, वैगरह का ऐसा कृत्रिम ढाँचा बन गया हैं कि भारत का औसत किसान वहाँ पहुँच कर अनुभव करता है कि वह शायद अपने देश में नहीं है। दलित किसान–मजदूर के लिए तो वह दूसरी दुनिया ही है। इन संस्थानों के अधिकतर शिक्षक और उच्चवर्गीय छात्र आरक्षण की व्यवस्था के विरोधी हैं, और वे इसका बदला अल्पसंख्यक दलित छात्रों से जाति मतभेद की नीति अपना कर करते हैं। कक्षाओं में, खेल के मैदान में, मेस में, छात्रावास में, अतिथि भवन में सर्वत्र उच्च वर्गीय छात्र अल्पसंख्यक दलित छात्रों का अपमान करते हैं, डराते धमकाते हैं, और उत्तेजित होने पर मारपीट भी करते हैं। इन संस्थाओं की शिक्षा पद्धति भी इस ढंग की है कि आरक्षण पर आये छात्र सर्वाधिक परीक्षाओं में उर्तीण नहीं हो पाते हैं, वे क्विज, मिड सेमिस्टर, सेमिस्टर और बैक लॉग की दुर्लभ्य दीवारों को लांघ नहीं पाते। सारी पढ़ाई अंग्रेजी में होती है, अंग्रेजी में ही बातचीत होती है, जिससे सामान्य स्कूलों से पढ़ कर आये छात्रों को न केवल पढ़ाई समझने में कठिनाई होती है वरन् फरार्टे से अंग्रजी न बोल सकने के कारण अपमानित भी होना पड़ता है। इस सबका परिणाम यह होता है कि तकनीकी संस्थाओं में एससी एसटी, कोटा के अधिकतर छात्र सफलतापूर्वक अपनी पढ़ाई संपन्न नहीं कर पाते, अनेक छात्र बीच में ही पढ़ाई छोड़ कर भाग जाते हैं और कई तो आत्महत्या तक कर लेते हैं।''*

**('समीक्षा', वर्ष 18, अंक 4)**

### 17.3.3 आलोचनात्मक मूल्यांकन

किसी पुस्तक का सामान्य परिचय देने और उसकी विषयवस्तु पर प्रकाश डालने के बाद समीक्षक पुस्तक के आलोचनात्मक मूल्यांकन की ओर अग्रसर होता है। यह बात यहाँ ध्यान रखने की है कि आलोचनात्मक मूल्यांकन और परिचय को समीक्षा में अलग–अलग रखा जाए, यह आवश्यक नहीं है। बेहतर यही है कि पुस्तक के परिचय में ही उसका आलोचनात्मक मूल्यांकन भी निहित हो। यह इसलिए जरूरी है कि पुस्तक समीक्षा में इतना अवकाश संभव नहीं होता कि दोनों कार्य स्वतंत्र रूप से किये जा सकें।

किसी पुस्तक का मूल्यांकन समीक्षक को पूर्वाग्रह से मुक्त होकर करना चाहिए। यह पूर्वाग्रह लेखक के प्रति भी हो सकता है और उसके लेखन या विधा के प्रति भी इससे हमेशा बचने की कोशिश करनी चाहिए। किसी पुस्तक का संतुलित मूल्यांकन बहुत कुछ समीक्षक की उस विषय पर पकड़, समझ और दृष्टि संपन्नता पर निर्भर करता है। पुस्तक के मूल्यांकन का काम उत्तरदायित्व पूर्ण होता है, क्योंकि इसके आधार पर पाठक एक राय बनाता है। इस प्रकार इसके माध्यम से समीक्षक एक सामाजिक दायित्व का भी निर्वाह करता है। आइए, कुछ उदाहरण के माध्यम से समीक्षा के आलोचनात्मक पक्ष पर नजर डालें।

गिरिराज किशोर के उपन्यास 'परिशिष्ट' पर डॉ. गोपाल की समीक्षा के कुछ अंशों का आपने अवलोकन किया है। यहाँ समीक्षा का जो अंश प्रस्तुत किया जा रहा है, वह पुस्तक के आलोचनात्मक मूल्यांकन से सम्बद्ध है –

*''इसमें सन्देह नहीं कि इस उपन्यास के मूल में एक समस्या है। इस समस्या की भयावहता का बोध कराने के लिए ही उपन्यास लिखा गया है पर रचना या कला की दृष्टि से समस्या की प्रमुखता कहीं बाधक नहीं बनी है। उपन्यासकार ने अपने कथा संसार के माध्यम से समस्या को प्रस्तुत ही किया है, कहा नहीं है। यहाँ तक की उपन्यास के पात्र भी इस समस्या पर कहीं अपने विचार प्रस्तुत नहीं करते। कथा के पात्र इस समस्या के बीच से गुजरते हैं, इसे जीते हैं, भोगते हैं, अनुभव करते हैं। उपन्यास पढ़ने पर इस बात का बोध होता है कि उपन्यासकार को यह विजन उसके चारों ओर की परिस्थितियों से प्राप्त हुआ होता है। हम जानते हैं कि गिरिराज किशोर आई.आई.टी. कानपुर से सम्बद्ध हैं। यह वस्तुतः उस मानसिकता के विरूद्ध अभियान है जिसके शिकार उच्च वर्ग के बहुसंख्यक लोग हैं। इस मानसिकता का एक रूप वह भी हो सकता है जो उपन्यास में प्रस्तुत है। यदि इस उपन्यास के आईने में हम अपने चेहरे देख सकें और उन्हें पहचान सकें तो सम्भवतः उपन्यास की यह सबसे बड़ी सफलता होगी।*

*दलितों की जिन्दगी पर आधारित एक महत्वपूर्ण उपन्यास, 'नाच्यो बहुत गोपाल' अमृतलाल नागर ने लिखा है। निस्सन्देह इस जीवन यर्थाथ की गहरी समझ, प्रमाणिक अनुभव, गहन अनुभूति, पात्रों और स्थितियों की जीवन्त सृष्टि, सही शिल्प प्रविधि के चुनाव और भाषा के सर्जनात्मक उपयोग की दृष्टि से 'परिशिष्ट' 'नाच्यो बहुत गोपाल' की अगली कड़ी है। इस उपन्यास के प्रकाशन के साथ गिरिराज किशोर हिन्दी की अगली पंक्ति के उपन्यासकारों के बीच अपनी स्थायी जगह बनाने में सफल हो गये हैं।''*

**('समीक्षा', वर्ष 18, अंक 4)**

आलोचनात्मक मूल्यांकन को निषेधात्मक या नकारात्मक समझने की भूल नहीं करनी चाहिए। आलोचनात्मक मूल्यांकन में पुस्तक की सीमा और विशेषता दोनों का विश्लेषण करना चाहिए। आलोचनात्मक मूल्यांकन करने के क्रम में समीक्षक पुस्तक के केन्द्रीय विषय शिल्प और भाषा की गहरी छानबीन करते हुए अपनी राय देता है। इसके अतिरिक्त वह उस पुस्तक की तुलना उसी विषय पर लिखी गयी दूसरी पुस्तक से भी करता है। उदाहरण के लिए डॉ. गोपाल ने परिशिष्ट का मूल्यांकन करते हुए 'नाच्यो बहुत गोपाल' की भी चर्चा की है। अन्त में, समीक्षक मूल्यांकन संबंधी अपना निष्कर्ष भी प्रस्तुत करता है। कभी–कभी वह यह भार पाठकों पर भी छोड़ देता है।

## 17.3.4 प्रकाशन संबंधी सूचनाएँ

पुस्तक के प्रकाशन स्तर और प्रकाशन संबंधी सूचनाओं से पाठक को अवगत कराना समीक्षा का दायित्व है। यानी पुस्तक का प्रकाशन कैसा हुआ है, उसके मुद्रण का स्तर क्या है, मूल्य कितना है, आदि प्रूफ संबंधी त्रुटियाँ पाठक को पुस्तक पढ़ने से विरक्त करती हैं। विश्वकोश आदि में तो ये गलतियाँ अक्षम्य हैं।

पुस्तक के प्रकाशन स्तर के साथ–साथ प्रकाशन संबंधी दूसरी जानकारियों से भी पाठक को अवगत कराना चाहिए। इसके अन्तर्गत लेखक का परिचय, अगर अनूदित पुस्तक हो तो अनुवादक का नाम, प्रकाशक का नाम और पता, प्रकाशन वर्ष, पुस्तक का आकार, पृष्ठ संख्या का प्रमाणिक ब्योरा देना चाहिए। ये ब्योरे पादटिप्पणी में दिए जाने चाहिए। समीक्षा लेखन में दोनों ही विधियों का चलन है।

उदाहरण के लिएः

1 पहली विधि

पाद टिप्पणी

1 परिशिष्ट, लेखक–गिरिराज किशोरः प्रकाशक–राजकमल प्रकाशन, 8, नेताजी सुभाष मार्ग नई दिल्लीः प्रथम संस्करण–1984, आकार डिमार्ड, पृ.सं. 308, सजिल्द मूल्य 50. 00

2 दूसरी विधि

पुस्तक की प्रकाशन संबंधी सूचना कहाँ दी जाए, यह उतना महत्वपूर्ण सवाल नहीं है। यह पत्र–पत्रिका में स्थान और उसके गेटअप आदि पर निर्भर करता है। महत्वपूर्ण बात यह है कि प्रकाशन संबंधी सूचनाएँ तथ्यात्मक और प्रमाणिक हों। विशेषकर, इसका महत्व शोधार्थियों के लिए अधिक है। अगर प्रकाशन संबंधी सूचना में भूल रह गई और शोधार्थी ने अपने शोध में शामिल कर लिया, तो उसका शोध ग्रन्थ त्रुटिपूर्ण हो जाएगा। समीक्षक को इसका ख्याल रखना चाहिए।

नरवानरः शरणकुमार लिंबाले

अनुवादः निशिकांत ठाकुर, प्रकाशकः राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण–2003,पृ.172 मूल्य 150/–

**बोध प्रश्न –2**

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर संक्षेप में दें।

1) पुस्तक का परिचय देने के क्रम में किन–किन बातों का उल्लेख किया जाता है? किन्हीं तीन के बारे में बताइए।

........................................................................................................................

........................................................................................................................

........................................................................................................................

........................................................................................................................

........................................................................................................................

2) विषय वस्तु का परिचय देते हुए किन–किन बातों का उल्लेख करना चाहिए? पाँच पंक्तियों में उत्तर लिखिए।

........................................................................................................................

........................................................................................................................

........................................................................................................................

........................................................................................................................

........................................................................................................................

3) पुस्तक का आलोचनात्मक मूल्यांकन करते समय किन बातों का ध्यान रखना चाहिए? पाँच पंक्तियों में उत्तर दीजिए।

........................................................................................................................

........................................................................................................................

........................................................................................................................

........................................................................................................................

........................................................................................................................

## 17.4 एक अच्छे समीक्षक के गुण

आपको एक अच्छा समीक्षक बनना है तो यह जानना जरूरी है कि एक अच्छे समीक्षक में कौन–कौन से गुण होने चाहिए। पहली बात यह कि समीक्षक की भाषा साफ–सुथरी, स्पष्ट और बोधगम्य होनी चाहिए। एक अच्छा समीक्षक बनने के लिए जरूरी है कि आप उसी क्षेत्र या विधा की पुस्तक की समीक्षा करें जिससे आप अच्छी तरह परिचित हों। समीक्षक का सामान्य ज्ञान भी विस्तृत होना चाहिए। समीक्षा लिखते समय समीक्षक को व्यक्तिगत और साहित्यिक पूर्वाग्रहों से मुक्त रहना चाहिए। दृष्टि सम्पन्नता और वस्तुनिष्ठता भी समीक्षक का एक प्रमुख गुण है। उसका लेखन संतुलित होना चाहिए। सामाजिक दायित्व से रहित व्यक्ति अच्छा समीक्षक नहीं हो सकता। आइए, समीक्षक के गुणों पर संक्षेप में विचार करें।

### 17.4.1 विशेषज्ञता

एक अच्छे और कुशल समीक्षक का पहला काम यह है कि वह उन्हीं पुस्तकों की समीक्षा करे जिनसे वह भली भाँति परिचित हो। अगर आपकी रुचि साहित्य में है तो आप साहित्य की ही समीक्षा करें। अगर आप का क्षेत्र इतिहास है और आप विज्ञान संबंधी पुस्तक की समीक्षा लिखेंगे तो संभव है कि विषय की जानकारी न होने के कारण आप पुस्तक के वास्तविक महत्व को न पहचान पाएँ। इस तरह आप पुस्तक के साथ न्याय नहीं कर सकेगें। अगर आप की रुचि खेल में है और आप कला से संबंधित पुस्तक की समीक्षा करने बैठ गये, तो आप गलत रास्ता अख्तियार करेंगे। एक उदाहरण से यह बात और स्पष्ट हो जाएगी। सुनील गावसकर प्रसिद्ध क्रिकेट खिलाड़ी और खेल विशेषज्ञ हैं। अगर वे क्रिकेट से संबंधित किसी पुस्तक की समीक्षा करेगें, तो एक श्रेष्ठ समीक्षक के रूप में सामने आएगें, लेकिन अगर उन्होने मकबूल फिदा हुसैन की चित्रकला पर लिखी गई पुस्तक की समीक्षा की तो वे असफल समीक्षक ही सिद्ध होगें। इतना ही नहीं अगर वे फुटबॉल या दूसरे किसी खेल की पुस्तक पर समीक्षा लिखेगें तो भी उनकी पकड़ उतनी मजबूत नहीं हो सकेगी। अतः किसी पुस्तक की समीक्षा करने से पूर्व आप अपने को ठोक बजा कर देख लें कि आप उस विषय की जानकारी रखते हैं या नहीं। अगर आप उस विषय में भली भाँति परिचित हैं तो बेहिचक समीक्षा कर्म में प्रवृत हों। इसके अभाव में असफलता ही हाथ लगेगी।

### 17.4.2 विस्तृत सामान्य ज्ञान

किसी खास क्षेत्र में निपुण होने के साथ–साथ समीक्षक से यह अपेक्षा भी की जाती है कि उसका सामान्य ज्ञान भी विस्तृत हो। इससे समीक्षा समृद्ध होती है। मान लीजिए कि आप खेल के विशेषज्ञ हैं, लेकिन राजनीति की सामान्य जानकारी भी आपको नहीं है तो खेल संबंधी पुस्तक में नस्लवाद, रंगभेद, खेलों का बहिष्कार आदि प्रसंग आने पर आप उनका महत्व नहीं समझ पाएंगें। इसी प्रकार भारत में जातिवाद पर लिखी किसी समाजशास्त्रीय पुस्तक का मूल्यांकन करने के लिए जाति प्रथा के इतिहास की जानकारी आवश्यक है। वास्तव में ज्ञान के विभिन्न क्षेत्र एक दूसरे से जुड़े हुए और परस्पर निर्भर होते हैं। इसलिए समीक्षक का सामान्य ज्ञान विस्तृत होना आवश्यक है।

### 17.4.3 पूर्वाग्रहमुक्तता

संतुलित और वैज्ञानिक समीक्षा के लिए समीक्षक का पूर्वाग्रह मुक्त होना भी लाजिमी है पूर्वाग्रह व्यक्तिगत भी हो सकता है और विषयगत भी। व्यक्तिगत पूर्वाग्रह समीक्षा कर्म में बिल्कुल त्याज्य है। व्यक्तिगत मित्रता और विरोध का समीक्षा कर्म से कोई वास्ता नहीं होता। अगर आप किसी व्यक्ति को निजी कारणों से पंसद न करते हों और उसकी पुस्तक प्रशंसनीय है, तो जानबूझकर उसकी निंदा न करें। दूसरी तरफ आपके घनिष्ठ मित्र की पुस्तक आपकी नजर में श्रेष्ठ नहीं है, तो आप बेहिचक उसकी खामियों की ओर इशारा करें। व्यक्तिगत पूर्वाग्रह छोड़े बिना कोई भी व्यक्ति सफल समीक्षक नहीं बन सकता।

पूर्वाग्रह का दूसरा पक्ष आपके निजी मत और मान्यता से संबंधित है। समीक्षा में जबरन अपनी मान्यता को लादने की कोशिश न करें। अगर कोई पुस्तक आपकी मान्यता के विपरीत है, तो आप तर्कसंगत ढंग से उसका विवेचन करें। अगर लेखक की बातों में दम है तो आप उन पर ढंग से विचार करें। समीक्षा कर्म के इसी क्षेत्र में अधिकांश समीक्षक फिसल जाते हैं।

### 17.4.4 दृष्टि सम्पन्नता

समीक्षक की दृष्टि खुली होनी चाहिए : दृष्टिगत संकीर्णता समीक्षा को कमजोर बनाती है। दृष्टिगत संकीर्णता के मुख्यतः दो कारण हैं– अज्ञान और किसी मतवाद के प्रति आग्रहशील होना। अज्ञानता किसी व्यक्ति के दृष्टिकोण को स्वभावतः संकीर्ण बना देती है। वह अपने अल्प ज्ञान को ही सब कुछ समझता है, और उसकी स्थिति कुएँ के मेंढक के समान हो जाती है। दूसरी ओर अगर कोई व्यक्ति किसी खास विचारधारा में विश्वास रखता है परंतु दूसरों की विचारधारा का सम्मान नहीं करता तो उसके लेखन में वैचारिक पूर्वाग्रह उत्पन्न हो जाएगा। अतः यह आवश्यक है कि समीक्षक को अपना दृष्टिकोण रखते हुए भी उदार और पूर्वाग्रहमुक्त होना चाहिए। एक कुशल समीक्षक को वैचारिक संकीर्णताओं से मुक्त होना पड़ता है और दुनिया में घट रही घटनाओं पर व्यापक दृष्टि डालनी पड़ती है। उसे अपना एक तर्कसंगत दृष्टिकोण भी स्थापित करना होता है। व्यापक दृष्टिकोण को लेकर ही वह किसी पुस्तक की सम्यक् समीक्षा कर सकता है।

### 17.4.5 वस्तुनिष्ठता

एक अच्छे समीक्षक का दृष्टिकोण वस्तुनिष्ठ होना चाहिए। अपने सभी दुराग्रहों और सभी पूर्वाग्रहों को त्यागकर किसी भी पुस्तक का वस्तुनिष्ठ मूल्यांकन करना समीक्षक का प्रमुख दायित्व है। वस्तुनिष्ठ समीक्षा में समीक्षक यथासाध्य तटस्थ रहकर पुस्तक का मूल्यांकन करता है और अपने व्यक्तिगत राग–द्वेष से उसे प्रभावित नहीं होने देता। वह पुस्तक के सभी पक्षों को उसके सही परिप्रेक्ष्य में जाँचता परखता है। उसपर आत्मनिष्ठ ढंग से विचार करने के बजाए महत्व के अनुसार विश्लेषण करता है। वस्तुनिष्ठता के बिना समीक्षक पुस्तक को सही परिप्रेक्ष्य में नहीं जाँच सकता। वस्तुनिष्ठ होकर ही पूर्वाग्रहमुक्त और आत्मनिष्ठता से मुक्त हो सकता है।

### 17.4.6 संतुलित लेखन

समीक्षा में संतुलित लेखन का विशेष महत्व है। इसका संबंध भी पूर्वाग्रहमुक्तता, दृष्टि सम्पन्नता और वस्तुनिष्ठता से है। किसी पुस्तक की अनावश्यक प्रशंसा या निंदा से समीक्षा कर्म में बाधा उत्पन्न होती है। समीक्षक का यह दायित्व है कि वह निष्पक्ष रहकर पुस्तक का आलोचनात्मक मूल्यांकन करे। अगर उसे पुस्तक का कोई पक्ष अच्छा लगता है या कोई बात उसे पसन्द नहीं आती है, तो बिना किसी हिचक के उसे तार्किकता और शिष्टता के साथ अपनी बात कहनी चाहिए। इसके अतिरिक्त उसे पुस्तक के सभी पक्षों, जैसे विषय वस्तु, भाषा, शिल्प आदि का मूल्यांकन प्रस्तुत करना चाहिए। समीक्षक को कभी जान बूझकर किसी पुस्तक की प्रशंसा या निंदा नहीं करनी चाहिए। पुस्तक का सम्यक मूल्यांकन करना एक अच्छे समीक्षक का अपरिहार्य गुण है।

### 17.4.7 सामाजिक दायित्व बोध

समीक्षक समाज का एक अंग होता है। समाज के प्रति उसका एक दायित्व है। पुस्तकों से पाठकों को परिचित कराना एक सामाजिक कार्य है। इसके माध्यम से वह ज्ञान के क्षेत्र में होने वाली हलचलों से लोगों को परिचित कराता है और उन्हें उनमें शामिल होने के लिए प्रेरित करता है। पुस्तकों को पढ़ने की प्रवृति किसी समाज के सभ्य और सुसंस्कृत होने की निशानी है। इसीलिए पुस्तक समीक्षक का दायित्व बढ़ जाता है। पुस्तकों का चयन करने से लेकर समीक्षा लिखने तक उसे अपने कार्य में

इस सामाजिक पहलू को ध्यान में रखकर चलना चाहिए। उसे यह विचार करना चाहिए कि समाज की उन्नति के लिए किस तरह की पुस्तकों को प्रोत्साहित करना जरुरी है। यह भी कि पुस्तक समीक्षा में कौन से पहलू उभारे जाने चाहिए और मूल्यांकन का आधार क्या होना चाहिए? बेगम अनीसा किदवई की संस्मरणात्मक पुस्तक 'आजादी के छाँव में' स्वतंत्रता प्राप्ति के तत्काल बाद होने वाले दंगों से जुड़े संस्मरणों की उल्लेखनीय किताब है। इस पुस्तक के ऐतिहासिक महत्व पर प्रकाश डालते हुए निम्नलिखित समीक्षा अंश में कहा गया–

''आजादी के छाँव में' उस भयानक समय की विस्तृत और व्यक्तिगत डायरी है जब विभाजन के समय रोज नये–नये दल आकर दिल्ली में ठहरते थे और आगे पाकिस्तान जाने की राह देखते थे–हर व्यक्ति या परिवार के पीछे आग, अगवा, लूटमार की पृष्ठभूमि थी, या थी वह दहशत, जो इन्हें अपने नये शरणास्थल की ओर धकेल रही थी। उन्हीं राहत कैंपों की प्रामाणिक और झकझोर देने वाली ये डायरियाँ उस काल की विभीषिका का धड़कता दस्तावेज हैं।''

**('हंस' अगस्त 1990 में प्रकाशित गिरिराज किशोर की समीक्षा से उद्‌भत)**

**बोध प्रश्न 3**

**निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर संक्षेप में दें।**

1) समीक्षक को समीक्षा के लिए अपनी विशेषज्ञता का क्षेत्र ही क्यों चुनना चाहिए? तीन पंक्तियों में उत्तर दीजिए।

.....................................................................................................................

.....................................................................................................................

.....................................................................................................................

.....................................................................................................................

.....................................................................................................................

2) समीक्षक की विशेषताएँ बताइए।

.....................................................................................................................

.....................................................................................................................

.....................................................................................................................

.....................................................................................................................

.....................................................................................................................

3) सही कथन के आगे (√) का और गलत कथन के आगे (x) का चिह्न लगाएँ

क) अपने पूर्वाग्रहों को त्यागकर समीक्षक कमजोर समीक्षा ही लिख सकता है।

ख) समीक्षक की दृष्टि वस्तुनिष्ठ होनी चाहिए।

ग) सामान्य ज्ञान की जानकारी समीक्षा कर्म में बाधक होती है।

घ) दृष्टिगत संकीर्णता समीक्षक की असफलता की कुंजी है।

## 17.5 पुस्तक समीक्षा की विशेषताएँ

पुस्तक समीक्षा के विभिन्न पक्षों और एक अच्छे समीक्षक के गुणों की चर्चा पहले की जा चुकी है। पुस्तक समीक्षा की विशेषताएँ इन्हीं से जुड़ी हुई हैं। पुस्तक समीक्षा के विभिन्न पक्षों पर विचार करने के क्रम में आपने अच्छी पुस्तक समीक्षा के उदाहरण भी देखे हैं। एक अच्छे समीक्षक के गुणों का प्रतिफलन अच्छी समीक्षा में होता है। पुस्तक समीक्षा की विशेषताओं को विचार करते समय आप यह महसूस करेंगे कि यहाँ बहुत सी बातें दोहराई गई हैं। मसलन वस्तुनिष्ठता और पूर्वाग्रहमुक्तता जैसे गुणों की चर्चा एक अच्छे समीक्षक के गुण के अन्तर्गत भी हो चुकी है। इसका कारण यह है कि एक अच्छे समीक्षक के प्रयत्नों का परिणाम समीक्षा में झलकता है। इसी कारण इन दोनों गुणों का उल्लेख समीक्षा की विशेषताओं में भी किया गया है।

### 17.5.1 वस्तुनिष्ठता

एक अच्छी समीक्षा की पहली शर्त है–वस्तुनिष्ठता। पुस्तक समीक्षा पढ़कर पाठक को यह महसूस होना चाहिए कि इसमें पुस्तक के साथ न्याय किया गया है और समीक्षक ने अनावश्यक रूप से भर्त्सना या स्तुति नहीं की है। समीक्षा करते हुए ध्यान रखना चाहिए कि आपकी समीक्षा कहीं पुस्तक का विज्ञापन तो नहीं बन रही है। केवल प्रशंसात्मक, प्रचारात्मक और परिचायात्मक लेखन समीक्षा को विज्ञापन का रूप दे देता है। समीक्षा व्यक्तिगत राग–द्वेष से मुक्त होनी चाहिए और उसमें निहित मूल्यांकन संतुलित होना चाहिए। उदाहरण के तौर पर, आप इस इकाई में दी गयी समीक्षाओं को फिर से पढ़ सकते हैं।

### 17.5.2 पूर्वाग्रहमुक्तता

पुस्तक समीक्षा की इस विशेषता का उल्लेख एक अच्छे समीक्षक के गुण के अन्तर्गत भी किया जा चुका है। पहले उसका उल्लेख समीक्षक के संदर्भ में किया गया, अब समीक्षा के संदर्भ में किया जा रहा है, हालाँकि दोनों एक दूसरे से अभिन्न हैं। आप जानते हैं कि पुस्तक समीक्षा वस्तुनिष्ठ होनी चाहिए। यह वस्तुनिष्ठता तभी आ सकती है, जब समीक्षा पूर्वाग्रह से मुक्त हो। जैसे कि हम पहले चर्चा कर चुके हैं, पूर्वाग्रह समीक्षक के व्यक्तिगत और विषयगत दोनों ही दृष्टिकोणों से प्रभावित हो सकता है। पाठक को यह नहीं महसूस होना चाहिए कि समीक्षा समीक्षक के पूर्वाग्रहों से ग्रस्त है। समीक्षक को अपनी बात कहने का हक है, पर उसे ऐसा तर्क–संगत और वैज्ञानिक विवेचन के आधार पर करना चाहिए।

### 17.5.3 प्रासंगिकता

समीक्षा की जीवंतता के लिए उसका प्रासंगिक होना जरूरी है। एक सजग पाठक लगतार नयी पुस्तकों की जानकारी प्राप्त करते रहना चाहता है। अतः नयी पुस्तकों की समीक्षा यथाशीघ्र होनी चाहिए। समीक्षा में विलम्ब होने से उसके अप्रासंगिक हो जाने का खतरा रहता है। देर से प्रकाशित समीक्षाओं में पाठक की रूचि नहीं रह जाती है क्योंकि वह दूसरे स्रोतों से पुस्तक से परिचित हो जाता है। कभी–कभी कोई पुस्तक भी किसी कालखंड में ही प्रासंगिक रहती है। आपातकाल समाप्त होते ही श्री शंकरदयाल सिंह ने 'इमरजेंसी : क्या सच क्या झूठ' नामक पुस्तक लिखी थी। उस समय वह पुस्तक प्रासंगिक थी, आज उसकी प्रासंगिकता शायद उतनी नहीं है। इस पुस्तक पर उस समय लिखी गयी समीक्षा भी प्रासंगिक थी और अब अगर उसी

पुस्तक पर समीक्षा लिखी जाए तो वह उतनी महत्त्वपूर्ण नहीं होगी। कभी–कभी कोई पुस्तक काफी दिनों बाद भी खबरों में आ जाती है। मसलन, पुस्तक विशेष पर कोई पुरस्कार प्राप्त हो या उस पर कोई विवाद उठ खड़ा हो, आदि। इस स्थिति में प्रकाशन के काफी बाद में की गई समीक्षा भी प्रासंगिक हो जाती है। वस्तुतः समीक्षा की प्रासंगिकता पुस्तक की प्रासंगिकता से जुड़ी हुई है।

### 17.5.4 केंद्रीय बिंदु की पहचान

समीक्षा का मुख्य उद्देश्य पाठक को पुस्तक के मूल कथ्य से परिचित कराना होता है। इसे केंद्रीय विषय, केंद्रीय बिंदु, मुख्य विचार आदि भी कहते हैं। जैसा कि हम पहले भी कह चुके हैं कि पुस्तक का सिर्फ सारांश प्रस्तुत करना समीक्षा नहीं होता। उपन्यास, कहानी, कविता, नाटक में वर्णित कथा को दुहराना भी समीक्षा नहीं है। अच्छी समीक्षा में पुस्तक के केंद्रीय विषय को सहज रूप में उजागर कर दिया जाता है। 'परिशिष्ट' के पीछे उद्धृत समीक्षा पढ़ते हुए आपने महसूस किया होगा कि समीक्षक ने उपन्यास में वर्णित समस्या की ओर पाठक का ध्यान आकृष्ट किया है। उसने उपन्यास की कथा उठाकर समीक्षा में नहीं रख दी है। यह बात पहले भी कही जा चुकी है कि कोई पाठक सिर्फ पुस्तक का सार जानने के लिए समीक्षा नहीं पढ़ता। पाठक समीक्षा के द्वारा पुस्तक की विषय वस्तु के संबंध में समीक्षक की विशेषज्ञतापूर्ण राय जानना चाहता है। इसलिए अच्छी समीक्षा केंद्रीय बिंदु या केंद्रीय कथ्य को उभारने का कार्य करती है।

### 17.5.5 सोद्देश्यता

पुस्तक समीक्षा पुस्तक और पाठक के बीच पुल का काम करती है। पुस्तक समीक्षा पाठक को पुस्तक से जोड़ती है। पुस्तक समीक्षा के माध्यम से वह पुस्तक से पहला परिचय प्राप्त करता है। वह उसकी विषय वस्तु से परिचित होता है, उसके महत्व और प्रासंगिकता को जानकर यह तय करता है कि उसे यह पुस्तक पढ़नी चाहिए या नहीं। इसलिए यह जरूरी है कि समीक्षा सोद्देश्यपूर्ण हो। समीक्षा लिखते हुए समीक्षक को ध्यान रखना चाहिए कि वह एक दायित्वपूर्ण कार्य कर रहा है। पुस्तक की समीक्षा इस तरह प्रस्तुत करनी चाहिए कि पाठक के सामने सारी तस्वीर स्पष्ट हो जाए। पाठक के मन में यह जिज्ञासा होती है कि पुस्तक का केंद्रीय कथ्य क्या है, उसकी भाषा और शैली कैसी है, लेखक का दृष्टिकोण क्या है, आदि। समीक्षा पाठक की ऐसी जिज्ञासाओं को ध्यान में रखकर लिखी जानी चाहिए, अन्यथा समीक्षा अपना उद्देश्य पूरा नहीं कर सकेगी, पाठक समीक्षा से निराश होगा और उसकी उपयोगिता पर प्रश्न चिह्न लग जाएगा।

### 17.5.6 निजता

प्रत्येक समीक्षक का दृष्टिकोण और उसकी लेखन शैली अलग–अलग होती है। इसकी झलक भी समीक्षा में मिलती है। समीक्षक की विश्लेषण क्षमता के कारण भी समीक्षाओं का स्वरूप अलग–अलग हो जाता है। लेखन की यह निजता समीक्षा का खास गुण है। प्रत्येक नए समीक्षक को अपने में यह गुण विकसित करना चाहिए। लेकिन निजता के नाम पर दुरूहता, अत्यधिक विद्वता या गुरुडम पाठक पसंद नहीं करता। समीक्षा में स्पष्टता और सहजता पसंद की जाती है। पुस्तक समीक्षा आलोचना का प्रथम चरण है। उसमें बहुत गम्भीर होने या अपने मत को बहुत दृढ़ता और विस्तार से प्रस्तुत करने की खास आवश्यकता के लिए आलोचना या निबंध में ज्यादा अवकाश रहता है।

### 17.5.7 भाषा और शैलीगत विशेषताएँ

समीक्षा की भाषा सहज, सरल और समूह में चलने लायक होनी चाहिए। समीक्षा का उद्देश्य होता है पाठकों को पुस्तक की जानकारी देना। इसलिए समीक्षा में भाषा का दुरूहपन ठीक नहीं है। कठिन और दुरूह भाषा में पाठक उलझकर रह जाता है और पुस्तक की सही जानकारी हासिल करने में उसे कठिनाई महसूस होती है। समीक्षा की भाषा के साथ–साथ उसकी शैली भी सुपाठ्य और आकृष्ट करने वाली होनी चाहिए। समीक्षा का लेखन और विश्लेषण इस ढंग का होना चाहिए कि पाठक शुरू से लेकर अंत तक समीक्षा पढ़ने को बाध्य हो जाय और पूरी तस्वीर उसके सामने स्पष्ट हो जाए। लेखन शैली की यह परिपक्वता समीक्षक के विस्तृत ज्ञान और प्रस्तुति की कुशल क्षमता पर निर्भर होती है। समीक्षक तर्कसंगत ढंग से चरण–दर–चरण पुस्तक का विश्लेषण कर अपनी शैली को आर्कषक और सम्प्रेष्य बना सकता है। समीक्षा जितनी अधिक सहज और सम्प्रेष्य होगी, उसकी महत्ता उतनी ज्यादा होगी। भाषा और शैली की दुरूहता में जकड़ी समीक्षा कभी भी श्रेष्ठ समीक्षा नहीं हो सकती। समीक्षा भाषा–शैली का निम्नलिखित उदाहरण देखिए–

*"सत्येन के इन दोनों संग्रहों में दो तरह की कहानियाँ हैं––लंबी और छोटी। मुझे चार लंबी और चार छोटी कहानियाँ अच्छी लगीं। इसलिए कि मैंने इन्हें एकाधिकबार पढ़ा है और मैं समझता हूँ कि जो कहानी पाठक को याद रहती है या हांट करती है अथवा पुनः पढ़ने को उकसाती है और दोबारा पढ़ने पर नया रस देती हैं, वही मूल्यवान भी है। पचास साठ वर्षों से निरंतर कहानियाँ पढ़ते और उनमें रस पाते हुए बेगिनती कहानियों के नाम या कथानक मेरे दिमाग में सुरक्षित हैं। लेकिन ऐसी कहानियाँ बहुत ही कम हैं। जिन्हें बार–बार पढ़ने की इच्छा हो। सत्येन की यहाँ चंद ऐसी कहानियाँ हैं यह बात उसके कथाकार के सामर्थ्य की द्योतक है (सत्येन कुमार के दो कहानी संग्रहों पर लिखी उपेन्द्रनाथ अश्क की समीक्षा का अंश, हंस जनवरी 1989 से उद्धृत)"*

## 17.6 पत्र–पत्रिकाओं की समीक्षा

पत्रकारिता के क्षेत्र में प्रवेश करते ही आपकी मुलाकात पत्र–पत्रिकाओं की समीक्षा से भी हो सकती है। आप किसी अखबार के दफ्तर में जाएँ और संपादक आपको कहे कि आपने इस महीने जो पत्रिकाएँ पढ़ी हैं या कुछ पत्रिकाओं के विशेषांक छपे हैं, उन पर एक समीक्षात्मक लेख लिखकर लाएँ। हाल के वर्षों में साहित्यिक पत्रिकाओं की संख्या काफी बढ़ी है और विशेषांक निकालने का चलन शुरू हुआ है। इसलिए उनकी समीक्षाएँ भी छपने लगी हैं।

पत्र–पत्रिकाएँ तो आप पढ़ते ही होंगे। इनमें से कोई एक पत्रिका उठाइए और पढ़ डालिए। पत्रिका पढ़ने के बाद पहली प्रतिक्रिया लिख लीजिए। आपको जो–जो रचनाएँ अच्छी लगीं, बुरी लगीं, सामान्य लगीं, उसके कारण लिखना जरूरी है। केवल अच्छा, बुरा, सामान्य कहने से आपकी टिप्पणी और सम्मति विश्वसनीय नहीं बन पाएगी।

समाचार पत्र में विश्वसनीयता का विशेष महत्व है। इससे समाचार पत्र की साख बनती या बिगड़ती है। आपकी प्रतिक्रिया से हजारों–लाखों पाठक प्रभावित होते हैं। इससे पत्रिका की बिक्री पर भी असर पड़ता है।

पत्रिका की समीक्षा और पुस्तक समीक्षा में कोई बुनियादी फर्क नहीं है। मसलन, जिस प्रकार पुस्तक समीक्षा लिखते समय आप पहले पुस्तक के लेखक परिचय से आगे बढ़ते हुए विवेचन, विश्लेषण और मूल्यांकन की ओर जाते हैं वही विधि पत्रिका की समीक्षा करते समय अपनानी पड़ती है। पत्रिका के कलेवर, उसके लेखों, कहानियों, कविताओं आदि में संपादक की दृष्टि और परख के साथ–साथ सम्मिलित रचनाओं की भी समीक्षा प्रस्तुत की जाती है। विभिन्न पत्र–पत्रिकाओं में छपे संपादक के नाम पाठकों के पत्र आप पढ़ें––इसके लिए यहाँ एक छोटा उदाहरण दिया जा रहा है, पर विस्तार के लिए आप 'हंस', 'वागर्थ', 'समकालीन भारतीय साहित्य', 'वर्तमान साहित्य', 'पहल' 'आलोचना', 'बसुधा', 'तद्भव' और 'कथादेश' जैसी पत्रिकाओं के अंक निकाल कर देख सकते हैं।

'वर्तमान साहित्य' का हर अंक उपलब्धि परक होता है। साहित्य, कला, और सोच की इस पत्रिका में साहित्य और सोच अपने विशिष्ट रंग–रूपों में है। लेकिन नाटक और सिनेमा तथा दूसरी कला विधाओं पर सामग्री नदारद है। (वर्तमान साहित्य : अगस्त, 2005 अंक में केशव शरण, वाराणसी का पाठक–मंच में शामिल पत्र से उद्धृत)।

कहने का तात्पर्य यह कि समाचार पत्र पढ़नेवाले पाठक को विभिन्न पत्रिकाओं की जानकारी देना और उनकी गुणवत्ता और सीमाओं से पाठक को रू–ब–रू कराना पत्रिका समीक्षा का लक्ष्य भी है और उत्तरदायित्व भी। इसे लिखने के लिए समीक्षा और समीक्षक के उन्हीं गुणों को अपनाइए। जिनका जिक्र हम इसी इकाई के भाग 17. 3, 17.4, 17.5, में कर आए हैं। इसलिए फिर से उन विशेषताओं को यहाँ दोहराया नहीं जा रहा है।

समाचार–पत्र में छपने वाली पत्रिका समीक्षाओं का कॉलम सूचनात्मक होता है। समाचार–पत्र में छपने वाली समीक्षाएँ सूचनात्मक और कभी–कभी सनसनी फैलानेवाली होती हैं। अखबार में समीक्षा छापने का प्रमुख उद्देश्य होता है–प्रचार। एक अखबार को रोज चालीस–पचास हजार लोग जरूर पढ़ते हैं। लेकिन समाचारों और सूचनाओं पर सरसरी निगाह डालते हुए आगे बढ़ जाते हैं। उनके पास विस्तृत समीक्षा पढ़ने का समय नहीं होता। सुबह का समय होता है, दफ्तर की हड़बड़ी होती है। इसलिए ज्यादा समीक्षाएँ रविवार को निकलती हैं। लेकिन यह कोई नियम नहीं है। हर अखबार अपनी योजना खुद तैयार करता है।

समीक्षा लिखने के लिए यह जरूरी है कि आप जानें कि आपका पाठक वर्ग कौन है। मसलन, यदि आप 'आलोचना' जैसी पत्रिका के लिए कोई पुस्तक समीक्षा लिख रहे हैं तो निश्चित रूप से इसमें विवेचन, विश्लेषण और मूल्यांकन पर ज्यादा जोर देना होगा लेकिन जब 'इंडिया टुडे' और 'आउटलुक' जैसी पत्रिकाओं और 'जनसत्ता', 'राष्ट्रीय सहारा', 'दैनिक जागरण' जैसे समाचार पत्रों के लिए समीक्षा लिख रहे होगें तो आपको समीक्षा खबर में तब्दील करनी होगी और इसकी प्रस्तुति रोचक, संगुफित और सूचनात्मक बनानी होगी। अखबार में साहित्य कम जगह पाता है। अतः इसमें समीक्षा लिखने वालों को गागर में सागर भरने की कला आनी चाहिए।

**बोध प्रश्न 4**

**निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर संक्षेप में दें।**

1) एक अच्छी समीक्षा को वस्तुनिष्ठ और पूर्वाग्रहमुक्त क्यों होना चाहिए? सही उत्तर के सामने (√) का चिन्ह लगाएँ :

क) वस्तुनिष्ठ और पूर्वाग्रहमुक्त हुए बिना भी अच्छी समीक्षा लिखी जा सकती है। ( )

ख) पुस्तक का संतुलित विवेचन हो, इसलिए समीक्षा का वस्तुनिष्ठ और पूर्वाग्रह रहित होना जरूरी है। ( )

ग) वस्तुनिष्ठ और पूर्वाग्रह रहित समीक्षा कमजोर मानी जाती है। ( )

घ) उपर्युक्त कोई उत्तर सही नहीं है। ( )

2) समीक्षा की प्रसंगिकता से आप क्या समझते हैं। दो पंक्तियों में उत्तर दें।

..........................................................................................................

..........................................................................................................

..........................................................................................................

..........................................................................................................

..........................................................................................................

3) केंद्रीय बिंदु की पहचान न कर पाने से समीक्षा में क्या खतरा रहता है, सही उत्तर के सामने सही (√) का और गलत उत्तर के सामने (x) का चिन्ह लगाएँ।

क) समीक्षा पुस्तक का सारांश बन जाती है। ( )

ख) पुस्तक का सम्यक मूल्यांकन हो जाता है। ( )

ग) समीक्षा में पुस्तक की विषय वस्तु का सही मूल्यांकन नहीं हो पाता। ( )

घ) केंद्रीय बिंदु को पहचानने या न पहचानने से समीक्षा में कोई फर्क नहीं पड़ता। ( )

4) समीक्षा की भाषा और शैली कैसी होनी चाहिए? पाँच पंक्तियों में उत्तर दें।

..........................................................................................................

..........................................................................................................

..........................................................................................................

..........................................................................................................

..........................................................................................................

## 17.7 सारांश

- इस इकाई में आपने समीक्षा के विभिन्न पक्षों की सैद्धांतिक जानकारी प्राप्त की। अब आप समीक्षा का अर्थ, समीक्षा और आलोचना में अंतर, समीक्षा की विशेषताएँ और एक अच्छे समीक्षक के गुणों से अवगत हो गये हैं।
- पुस्तक समीक्षा में पुस्तक का परिचय और मुल्यांकन प्रस्तुत किया जाता है। पुस्तक समीक्षा और आलोचना आपस में जुड़ी हैं, पर परिभाषा की दृष्टि से उनमें अंतर है। पुस्तक समीक्षा और आलोचना का मूल अंतर यह है कि समीक्षा में जहाँ पुस्तक केन्द्र में होती है, वहीं आलोचना में पुस्तक संदर्भ के रूप में शामिल की जाती है।

- अच्छा समीक्षक अपनी विशेषज्ञता के क्षेत्र में ही हाथ डालता है। उसका लेखन संतुलित होता है, क्योंकि वह पूर्वाग्रह से ग्रस्त नहीं होता और उसकी दृष्टि वस्तुनिष्ठ होती है।
- अच्छी समीक्षा के प्रमुख गुण हैं––वस्तुनिष्ठता, पूर्वाग्रहरहित होना, प्रासंगिकता, केन्द्रीय बिंदु को पहचानना और सरल भाषा–शैली का प्रयोग।

**अभ्यास**

1) किसी पुस्तक का परिचय दीजिए जिनमें पुस्तक के लेखक, विषय और विधा का उल्लेख हो। उत्तर लगभग दस पंक्तियों में लिखें।

......................................................................................................................................

......................................................................................................................................

......................................................................................................................................

......................................................................................................................................

......................................................................................................................................

2) किसी पठित पुस्तक में जो आपके पास उपलब्ध हो उसमें दी गयी प्रकाशन संबंधी सूचनाएँ नोट करें।

......................................................................................................................................

......................................................................................................................................

......................................................................................................................................

......................................................................................................................................

......................................................................................................................................

3) किसी पठित पुस्तक पर प्रकाशित समीक्षा पढ़कर इकाई में बताई गयी विशेषताओं के आधार पर उसका मूल्यांकन कीजिए।

......................................................................................................................................

......................................................................................................................................

......................................................................................................................................

......................................................................................................................................

......................................................................................................................................

4) उपर्युक्त पुस्तक की समीक्षा स्वयं लिखने का प्रयास कीजिए।

......................................................................................................................................

......................................................................................................................................

......................................................................................................................................

......................................................................................................................................

......................................................................................................................................

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

## 17.8 बोध प्रश्नों/अभ्यासों के उत्तर

**बोध प्रश्न 1**

1) पुस्तक समीक्षा में पुस्तक की विषय वस्तु का संक्षिप्त परिचय देते हुए उसके विभिन्न पक्षों को प्रस्तुत किया जाता है। देखें उपभाग 17.2

2) क) x ख) √ ग) x घ) √

3) पुस्तक समीक्षा पाठक समुदाय से पुस्तक का परिचय कराती है। साथ ही पुस्तक का संक्षिप्त परंतु समग्र मूल्यांकन भी करती है। विस्तृत उत्तर के लिए इकाई का अध्ययन करें।

**बोध प्रश्न–2**

1) क) पुस्तक का सामान्य परिचय

ख) लेखक का संक्षिप्त परिचय

ग) पुस्तक के विषय वस्तु का संकेत

2) द्रष्टव्य, उपभाग 17.3.2 का प्रथम पैराग्राफ

3) मूल्यांकन संतुलित हो, पूर्वग्रह–मुक्त हो, तर्क–संगत हो, आदि। देखें उपभाग 17. 3.3

**बोध प्रश्न 3**

1) समीक्षक अपनी विशेषज्ञता के आधार पर पुस्तक का सही मूल्यांकन कर सकता है।

देखें 17.4.1

2) इकाई के अध्ययन के पश्चात् स्वयं उत्तर लिखें।

3) क) √ ख) x ग) √ घ) x

**बोध प्रश्न–4**

1) क) x ख) √ ग) x घ) x

2) स्वयं लिखें।

3) क) √ ख) x ग) √ घ) x

4) स्वयं लिखें।

**अभ्यास**

इकाई के गहन अध्ययन के पश्चात दिए गए प्रश्नों के उत्तर स्वयं लिखें।

# इकाई 18 नाट्य प्रस्तुतियों, फिल्मों और कला प्रदर्शनियों की समीक्षा

**इकाई की रूपरेखा**


18.0 उद्देश्य

18.1 प्रस्तावना

18.2 अखबारों में कला समीक्षा का अभिप्राय

18.3 कला समीक्षक का महत्त्व

18.4 कला समीक्षा के लिए आवश्यक पृष्ठभूमि

18.5 कला समीक्षा के क्षेत्र

- 18.5.1 रंगमंच
- 18.5.2 सिनेमा
- 18.5.3 कला प्रर्दशनी

18.6 कला समीक्षा के विविध पक्ष

- 18.6.1 रंगकर्म : आवश्यक पृष्ठभूमि
- 18.6.2 रंगमंच पर समीक्षा की विशेषताएं
- 18.6.3 सिनेमाः आवश्यक पृष्ठभूमि
- 18.6.4 सिनेमा पर लेखन की विशेषताएं
- 18.6.5 कला समीक्षाः आवश्यक पृष्ठभूमि
- 18.6.6 कला समीक्षा की विशेषताएं

18.7 कला समीक्षक के लिए आवश्यक योग्यता

18.8 अच्छे समीक्षक के गुण

- 18.8.1 विशेषज्ञता
- 18.8.2 वस्तुनिष्ठता
- 18.8.3 दृष्टिसंपन्नता

18.9 कला समीक्षा के अहम पहलू

- 18.9.1 इतिहास का ज्ञान
- 18.9.2 दृष्टि विकसित करना
- 18.9.3 रचनाएं और रचनाकार

18.10 कला समीक्षा की भाषा और शैली

- 18.10.1 प्रस्तुति
- 18.10.2 विश्लेषण
- 18.10.3 शीर्षक

18.11 कुछ अन्य महत्त्वपूर्ण टिप्स


ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

18.12 सारांश

18.13 बोध प्रश्नों/अभ्यासों के उत्तर

## 18.0 उद्देश्य

इस इकाई में आप समाचारपत्रों और पत्रिकाओं में लिखी जाने वाली सिनेमा, रंगमंच, और कला प्रदर्शनियों की समीक्षा के बारे में व्यावहारिक ज्ञान हासिल कर सकेंगे। इस इकाई को पढ़ने के बाद आप :

- सिनेमा, रंगमंच और कला पर लिखी जाने वाली समीक्षा की विषयवस्तु और उससे जुड़ी पृष्ठभूमि की समझ हासिल कर सकेंगी/सकेंगे;
- अखबारों में कला समीक्षा के महत्त्व और पत्रकारिता में उसकी जरूरत को समझ सकेंगी/सकेंगे और यह जान सकेंगी/सकेंगे कि किन पहलुओं में कला समीक्षा लिखी जा सकती है;
- सिनेमा, रंगमंच और कला प्रदर्शनियों की समीक्षा के लिए व्यक्तिगत स्तर पर आवश्यक तैयारी कर सकेंगी/सकेंगे और इस विधा के बारे में व्यावहारिक ज्ञान हासिल कर सकेंगी/सकेंगे;तथा
- समीक्षा की प्रस्तुति, उसके विश्लेषणात्मक पहलू और भाषा–शैली की तकनीकी जानकारी हासिल कर सकेंगी/सकेंगे, अच्छी समीक्षा लिखे जाने के लिए आवश्यक पृष्ठभूमि की जानकारी ले सकेंगी/सकेंगे और खुद को बेहतर समीक्षक के तौर पर विकसित कर सकेंगे।

## 18.1 प्रस्तावना

इस इकाई में हम आपको सिनेमा, रंगमंच और कला प्रदर्शनियों पर लिखी जाने वाली समीक्षा के बारे में जानकारी देंगे। इसमें हम आपको बताएंगे कि अच्छी समीक्षा के लिए किन बातों का ध्यान रखने की जरूरत है। हम यह भी समझने का प्रयास करेंगे कि इन विशिष्ट विधाओं की समीक्षा के लिए हमें किस तरह दृष्टि और समझ विकसित करनी चाहिए। हम संक्षेप में कलाओं की पृष्ठभूमि और भारत के आर्थिक–सामाजिक परिदृश्य में आए बदलावों के संदर्भ को जानने का प्रयास करेंगे। कुछ श्रेष्ठ समीक्षकों के उदाहरणों को पढ़कर तथा उनका विश्लेषण करते हुए यह देखेंगे कि वे कौन से प्रमुख बिंदु हैं, जिनकी मदद से एक अच्छी समीक्षा लिखी जा सकती है। अच्छी समीक्षा में प्रयोग होने वाली भाषा–शैली और उसकी बुनावट पर अलग से विचार किया जाएगा। इससे आपको अपनी समीक्षा को बेहतर बनाने में मदद मिलेगी।

## 18.2 अखबारों में कला समीक्षा का अभिप्राय

अखबारों में कला समीक्षा से अभिप्राय सिनेमा, रंगमंच, संगीत, नृत्य और कला प्रदर्शनियों के बारे में छपने वाली उन रिपोर्टों से है, जिनमें समीक्षात्मक टिप्पणियां भी शामिल होती हैं। इसमें हम इन कला विधाओं पर छपने वाले समीक्षात्मक लेखों को भी शामिल कर सकते हैं। आम तौर पर कला समीक्षा उस तरह से अखबार का अनिवार्य हिस्सा नहीं होती, जैसे अन्य कॉलम होते हैं, मगर हाल में मीडिया के विस्तार ने एक

नए तरीके से अन्य माध्यमों की तरफ ध्यान आकृष्ट किया है। इन विधाओं की प्रस्तुति में प्रयोगशीलता आने और व्यापक प्रचार–प्रसार के कारण कई बार ये विवादों से घिर जाती है। आम तौर पर अभिव्यक्ति का कोई न कोई माध्यम किसी न किसी वजह से सुर्खियों में छाया रहता है। उदाहरण के तौर पर, मेल गिब्सन की फिल्म 'द पैशन ऑफ क्राइस्ट' अपनी अलग दृष्टि के कारण पूरी दुनिया की मीडिया में चर्चा का विषय बन गई। अपने देश में जाने माने हिन्दी कवि तथा कला समीक्षक विष्णु खरे ने भी इस फिल्म के बारे में विस्तार से लिखा है–

*''मेल गिब्सन की फिल्मों में शारीरिक यंत्रणा और अत्याचार–जनित मृत्यु बार–बार आई है। वैसे तो उनकी यह फिल्म कैथोलिक संप्रदाय के एक कर्मकांड पर आधारित है जिसमें ईसा की मर्मांतक वेदना (दरअसल 'पैशन' का मूल अर्थ 'पीड़ा' ही है, बाद में वह भावोन्माद या वासना तक हो गया) का अभिनय या स्मरण किया जाता है। लेकिन उन्होंने ईसा पर बीसियों कोड़े पड़ते दिखाए हैं और उसके बाद उन्हें कंटीले मुग्दरों, लाठियों, तलवारों आदि से मारा जाता भी दिखाया है। सिर्फ एक लंगोटी पहने ईसा के पूरे शरीर की चमड़ी उधेड़ दी जाती है,उनकी कुछ पसलियां दिखने लगती हैं एक आंख लगभग चली जाती है। चमड़ी, मांस और चिपचिपा हो जाता है।''*

**'पावन हिंसा से छिटकते खून के छींटे' (विष्णु खरे)**

सिर्फ राष्ट्रीय स्तर पर नहीं, बल्कि क्षेत्रीय अखबारों में कला समीक्षा ने जोर पकड़ा है। दिल्ली और प्रदेशों की राजधानियों के अलावा देश के सभी प्रमुख शहरों में रंगमंच और कला के बढ़ने के कारण अखबारों में इन्हें जगह मिलने लगी है। स्थानीय अखबार इनकी कवरेज भी विस्तार से करते हैं। अब तो सिनेमा की समीक्षा भी स्थानीय स्तर पर होने लगी है, जिसमें प्रतिक्रियाओं को शामिल करने का चलन बढ़ता जा रहा है। लेकिन अखबारों में पर्याप्त जगह मिलने के बावजूद इनकी समीक्षा किसी दृष्टि और अपेक्षित जानकारी के अभाव में सपाट बनकर रह जाती है। नतीजा यह होता है कि जिन पाठकों को ध्यान में रखकर इन्हें छापा जाता है। उनके मतलब की भी नहीं रह जातीं। कला समीक्षा के बारे में थोड़ी सी समझ भी इन समीक्षाओं, को बेहतर स्वरूप प्रदान कर सकती है।

## 18.3 कला समीक्षक का महत्व

यहाँ हम हिंदी की ऐतिहासिक पत्रिका 'सुधा' के सितंबर 1932 को प्रकाशित अंक के खंड में 'भारतीय फिल्में' शीर्षक से प्रकाशित लेख के अंश को दिलचस्प उदाहरण के रूप में देख सकते हैं–

*''उचित तो यह था कि सिनेमा–चित्रपटों से भारतीय नाट्यकलाकार शिक्षा ग्रहण करते और इन गुणों का अपनी निज कला में यथासंभव सम्मिश्रण करते। यदि ऐसा होता, तो टॉकी का अविष्कार भारतीय नाट्यकला पर एक आशीर्वाद स्वरूप होता। परंतु देखा गया है कि इन गुणों पर कुछ भी विचार नहीं किया गया। भारतीय फिल्मों में मोटर और घोड़ों के उपयोग, मारपीट, स्त्री अपहरण आदि पुराने दृश्यों की भद्दी नकलें तो की गईं परंतु चरित्र–चित्रण, अभिनय, अर्थ–गांभीर्य, कला, इनका रत्ती भर भी ध्यान नहीं किया गया, और जब टॉकी फिल्में बनीं, तो रहा–सहा सौंदर्य भी नष्ट हो गया। आज जो भी सिनेमा–फिल्म टॉकी और मूक हैं, वे प्रायः एक भंड पाखंड हैं। बहुधा इन फिल्मों के बनाने वाले धार्मिक प्लाट लेते हैं, पर वे पौराणिक गपोड़ों और अंधकथाओं*

*के आधार पर होते है। अर्थ–गांभीर्य तो वहां हो ही क्या सकता था, सुरुचि और शिक्षा भी उनमें नहीं है।''*

यह उदाहरण दर्शाता है कि कैसे कला विधाओं की समीक्षा एक सामाजिक दस्तावेज का रूप ग्रहण कर लेती है। लिहाजा एक बात तो यहां स्पष्ट हो जाती है कि कला समीक्षा को किसी भी तरह से 'हल्की' या 'आसान' विधा के रूप में नहीं देखा जा सकता। यह पर्याप्त गंभीरता, अध्ययन और परिश्रम की मांग करता है। यह दोहरी जिम्मेदारी का काम है। समीक्षक की पहली जिम्मेदारी अपने उस पाठक के प्रति होती है, जिसके लिए वह लिख रहा है–किसी भी फिल्म, नाट्य प्रस्तुति या कलाकृति के आस्वादन से लेकर उसके बारे में कोई राय कायम करने में समीक्षक ही मध्यस्थता की भूमिका निभाता है। दूसरी जिम्मेदारी उस रचनाकार के प्रति बनती है। जिसकी कृति की वह समीक्षा कर रहा है। इसमें उस कृति को सही परिप्रेक्ष्य में समझना, उसके साथ न्याय करना और उसे अन्य समकालीन कलाकृतियों या रचनाओं के बीच उचित स्थान दिलाने की कोशिश करना भी शामिल है। तीसरी और सबसे बड़ी सामाजिक जिम्मेदारी यह है कि हम कलाकृति के माध्यम से किन प्रवृत्तियों को प्रोत्साहित कर रहे हैं, हम परंपरागत शैलियों और कथ्य की जकड़बंदी में कहीं किसी 'क्रांतिकारी' रचना को नजरअंदाज तो नहीं कर रहे, या फिर 'नएपन' का भ्रम रचकर धोखा देने वाली रचनाओं के जाल में तो नहीं फंस रहे हैं।

## 18.4 कला समीक्षा के लिए आवश्यक पृष्ठभूमि

अखबारों में आम तौर पर सिनेमा, रंगमंच और चित्र और शिल्प प्रदर्शनियों को ही प्रमुखता से जगह मिलती है। शास्त्रीय संगीत और नृत्य पर रिपोर्ट भी कुछ अखबार छापते हैं, जिनमें हिन्दी के 'जनसत्ता', 'दैनिक हिन्दुस्तान' तथा अंग्रेजी का 'द हिन्दू' प्रमुख है। यह माना जाता है कि कला दृष्टि एक है और सभी विधाओं में सतत मौजूद है। एक हद तक इसे मानते हुए भी यह कहना अनिवार्य है कि किसी भी विधा की समीक्षा से पहले उसके इतिहास, प्रमुख प्रवृत्तियों और समकालीन रूझानों का पर्याप्त अध्ययन कर लिया जाए इसके बिना अच्छी समीक्षा की कल्पना नहीं की जा सकती। मगर यहां हम ध्यान दिलाना चाहेंगे कि सिनेमा, थिएटर और आर्ट की 'पृष्ठभूमि' एक अच्छी समीक्षा लिखने में मदद नहीं कर सकती। इसके लिए वह 'दृष्टि' आवश्यक है, जिसकी मदद से आप किसी भी कला माध्यम में प्रस्तुत की गई रचना का सामान्यीकरण करते हुए अपने पाठकों तक उसकी बात को पहुंचा सकें। उदाहरण देखें –

*''राशोमोन' में कुल चार पात्र हैं। एक समूराई यानी जापानी योद्धा, उसकी पत्नी, एक डाकू और एक लकड़हारा। एक ही घटना को चारों लोग अपने–अपने दृष्टिकोण से बताते हैं और चारों की कहानी सच भी लगती है। लेकिन दर्शक को अंत तक यह पता नहीं लगता कि दरअसल हुआ क्या था। कुरोसावा घटनाक्रम को हर बार इस तरह दर्शाते हैं कि एक सस्पेंस बना रहता है कि आगे क्या होने वाला है। लेकिन असल में वे कहना यह चाहते हैं कि सत्य एकमुखी नहीं, बहुमुखी है और यही दार्शनिक प्रश्न 'राशोमोन' को अद्वितीय फिल्म बना देता है।''*

**कुरोसावा के सपने (के. बिक्रम सिंह, जनसत्ता, 28 सितंबर 2003)**

## 18.5 कला समीक्षा के क्षेत्र

जैसा कि हमने ऊपर कहा, अखबारों में छपने वाली कला समीक्षा मुख्य रूप से फिल्म, रंगमंच और कला प्रदर्शनियों को केंद्र में रखती हैं। वैसे तो इसमें लोक कलाएं, स्थापत्य, भित्ति–चित्र, स्वांग, समूह नृत्य, रीति–रिवाज आदि को भी शामिल किया जा सकता है, मगर यहां हम इन्हीं तीन विधाओं और इन पर लिखी जाने वाली समीक्षा की विस्तार से चर्चा करेंगे। शहरी जीवन में इन्हीं तीन विधाओं में होने वाली गतिविधियों की ही प्रमुखता होती है। जहां कहीं भी हम सामान्य रूप से 'कला', 'कलाकार', 'रचना', 'सर्जक' जैसी शब्दावली का इस्तेमाल करेंगे तो उसका आशय व्यापक होगा और वह इन तीनों प्रमुख विधाओं को समेटे हुए होगा।

### 18.5.1 रंगमंच

रंगमंचीय प्रस्तुतियां किसी भी समीक्षक के लिए बड़ी चुनौती है। इस विधा में सबसे ज्यादा प्रयोग होते हैं और इसमें विश्लेषण की काफी संभावनाएं होती हैं। यह विधा एक साथ 'शास्त्रीय' और 'आधुनिक' है। इसकी व्याख्या के विविध पहलू हैं। मसलन, नाट्य लेखन, अभिनय, मंच सज्जा, निर्देशन, भाषा, वेशभूषा, संवाद अदायगी, प्रकाश व्यवस्था, संगीत, कलाकारों का मेकअप आदि। इसके लिए यह आवश्यक है कि रंगमंच के बुनियादी पहलुओं का ज्ञान हासिल किया जाए। साथ ही निरंतर हो रहे परिवर्तनों से अवगत होना भी बहुत जरूरी है। मौजूदा दौर के रंगकर्म का विश्लेषण करते हुए जानेमाने रंगकर्मी देवेंद्र राज अंकुर 'जनसत्ता' में प्रकाशित अपने आलेख 'नाट्य रचना' के बदलते तेवर में लिखते हैं –

*''उन्नीसवीं–बीसवीं सदी में यदि ज्यादातर नाटक सिर्फ गद्य में लिखे गए और लिखे जा रहे हैं तो उसके लिए पिछली दो–तीन शताब्दियों में हुई तकनीकी और वैज्ञानिक क्रांतियाँ जिम्मेवार हैं। नई–नई खोजों और आविष्कारों ने जहां मनुष्य की सोच, शिक्षा–दीक्षा और रहन–सहन को प्रभावित किया वहीं उसके संप्रेषण के लिए एक नई भाषा की आवश्यकता पर भी बल दिया।''*

अब उसका काम सपनों, आदर्शों और फंतासी से जुड़ी काव्य भाषा से चलने वाला नहीं था, उसे चाहिए थी एक ऐसी भाषा जो उसे जीवन के दिन–प्रतिदिन के रूखे–सूखे, कटु–मीठे यथार्थ से परिचित करा सके। ऐसा नहीं कि उस यथार्थ का सामना कविता में नहीं किया जा सकता। लेकिन जिस तरह के यथार्थवादी अभिनय पर वर्तमान दौर में जोर दिया जा रहा है उसके लिए कविता से अधिक गद्य ही ज्यादा उपयुक्त है।

इस तरह देखें तो सिर्फ रंगमंच या नाट्य शास्त्र की बुनियादी बातें ही नहीं उनमें आ रहे बदलावों तथा प्रवत्तियों में हो रही तब्दीली पर भी निगाह रखनी होगी। तभी एक साथ समीक्षा लिखी जा सकती है। इसके लिए राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय से प्रकाशित होने वाली पुस्तकों, वहीं से प्रकाशित पत्रिका 'रंग–प्रसंग' और नेमिचंद्र जैन के संपादन में निकले 'नटरंग' के पुराने अंकों से काफी मदद मिल सकती है।

### 18.5.2 सिनेमा

सिनेमा विश्व की सबसे 'लोकप्रिय' विधा है न सिर्फ अपनी संप्रेषणीयता में बल्कि यह मीडिया के भी आकर्षण का केंद्र बना रहता है। प्रदर्शित होने वाली फिल्मों की

समीक्षाओं से लेकर फिल्म समारोहों की रिपोर्ट, आने वाली फिल्मों की जानकारी और फिल्मों पर उठे विवाद तक अखबारों में छाए रहते हैं। हाल के वर्षों में फिल्म चर्चा की मौजूदगी अखबारों में पहले से ज्यादा हुई है। इस लिहाज से समाचार पत्रों में सिनेमा के विशेषज्ञों का महत्व बढ़ा है। एक अच्छा फिल्म समीक्षक सिर्फ 'रिव्यू' भर प्रस्तुत करके नहीं रह जाता, बल्कि वह अपने पाठकों को सिनेमा विधा के नए पहलुओं से भी अवगत कराता है। आगे दिए उदाहरण से यह बात और स्पष्ट हो जाएगी –

*''ईरान का मखमलबाफ परिवार विश्व सिनेमा का अनोखा परिवार है। सिनेफैन में ट्रिब्यूट खंड में इस परिवार पर फोकस किया गया है। मोहसिन मखमलबाफ और उनकी बेटी समीरा आज अंतर्राष्ट्रीय सिनेमा के चर्चित नाम हैं। समीरा की 2000 में बनी फिल्म 'द ब्लैकबोर्ड' एक समकालीन कालजयी फिल्म मानी जाती है। 19 साल की उम्र में अपनी पहली फीचर फिल्म 'द एप्पल' बनाने वाली समीरा कई चर्चित फिल्में बना चुकी हैं। अब्बास कियारोस्तायी सरीखे निर्देशकों ने बरसों पहले ईरानी सिनेमा के गहरे मानवतावाद पर फोकस किया था। उसके बाद ईरानी सिनेमा के बच्चे, बूढ़े, स्त्रियां, उजाड़ और जर्जर लैंडस्केप विश्व सिनेमा की अद्‌भुत धरोहर बन गए हैं। किसी भी देश के सिनेमा ने शायद बच्चों की मदद से इतनी बड़ी बातें नहीं कही हैं।''*

***खामोश पानी और उसका शोर*** **(विनोद भारद्वाज, रंग प्रसंग, अक्तूबर–दिसंबर 2004)**

### 18.5.3 कला प्रदर्शनी

*''प्रदर्शनी में काडिंस्की, कुपका, फ्रांसिस पिकाबिया, पॉल क्ले, मौद्रियान, मार्सेल दूशा, जॉन केज जैसे दिग्गजों का काम एक सिलसिले से देखने का सुख सचमुच दीप्त था। कई कृतियां जब एक थीम के इर्द–गिर्द संयोजित की जाती हैं तो उनके कुछ नए अर्थ प्रसंगातर से खुलने लगते हैं। यह बात आम तौर पर ध्यान में नहीं आती कि नाद और संगीत आधुनिक कला के स्थायी सरोकार रहे हैं। प्रदर्शनी में जहां–तहां कलाकारों की कुछ उक्तियां भी उद्धृत थीं। दो मैंने विशेष रूप से नोट कीं– पहली है जॉन केज की– 'मेरे पास कहने को कुछ नहीं है और मैं यह कह रहा हूं। दूसरी के रचयिता का नाम ध्यान से उड़ गया है, पर उक्तियाँ है : 'प्राणघाती कुकुरमुत्ते होते हैं, लेकिन कोई भी आवाज प्राणघाती नहीं होती।''*

**नाद बिंब की आधुनिकता (अशोक वाजपेयी 'जनसत्ता' अपने स्तंभ कभी–कभार में)**

हिन्दी के जाने–माने कवि तथा आलोचक अशोक वाजपेयी के स्तंभ से लिया गया उपरोक्त उदाहरण कला समीक्षा के कई पहलू आपके सामने खोलता है। अब तक आपके सामने यह तो स्पष्ट हो गया कि कला प्रस्तुतियों को सिर्फ 'रिपोर्ट' नहीं किया जा सकता है। सिर्फ तथ्यों को जस का तस रख देने पर आपका लेखन उबाऊ हो जाएगा और उसमें पाठकों को कोई दिलचस्पी नहीं होगी। इस लिहाज से कला समीक्षाओं में खुद का 'पर्यवेक्षण' ही काम आता है। इसके लिए यह आवश्यक है कि समीक्षक के पास अपनी जानकारी तथा पहले के कला अनुभवों से तुलनात्मक विश्लेषण की क्षमता हो। साथ ही यह भी जरूरी है कि आप समीक्षित कलाकृति को उसके सारे संदर्भो के साथ ग्रहण कर सकें। सूचनाओं की मदद से समीक्षा लिखी जा सकती है। मगर उसे दिलचस्प और पठनीय बनाने के लिए अपनी अंतर्दृष्टि काम में लानी होगी।

## 18.6 कला समीक्षा के विविध पक्ष

अब तक आपको यह अंदाजा हो गया होगा कि कला समीक्षा किसी भी अन्य अखबारी लेखन के मुकाबले ज्यादा मुश्किल और परिश्रम की मांग करने वाली विधा है, बशर्ते कि इसे गंभीरता से लिया जाए। एक अच्छी कला समीक्षा के लिए आपको संबंधित विषय की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि, उसकी बदलती वैचारिक प्रवृत्तियों और कलाकारों की सोच के संपर्क में रहना होगा। विभिन्न कला विधाओं जैसे सिनेमा, रंगमंच और फाइन आर्ट की प्रस्तुतियों से सीधे रू–ब–रू होते हुए उन पर नोट्स तैयार करना भी काफी मदद कर सकता है। अखबारों और पत्रिकाओं में छपने वाली श्रेष्ठ समीक्षाओं को पढ़ते रहना भी जरूरी है। इससे समीक्षा के क्षेत्र में आने वाली नई प्रवृत्तियों का पता लगता है।

### 18.6.1 रंगकर्मः आवश्यक पृष्ठभूमि

नाट्य प्रस्तुतियों की समीक्षा लिखना इसकी व्यापकता के कारण कठिन साबित होता है। आवश्यक पृष्ठभूमि के तौर पर हम भारतीय और पश्चिमी रंगदर्शन के अध्ययन का सुझाव दे सकते हैं, परंतु भारतीय रंग प्रस्तुतियों में पश्चिम के मुकाबले काफी विविधता है, इसे समझे बिना अच्छी समीक्षा नहीं तैयार की जा सकती। इस विविधता को हम भरतमुनि के 'नाट्यशास्त्र' से लेकर विभिन्न क्षेत्रों की लोक शैलियों और आधुनिक प्रयोगों तक में देख सकते हैं। इस लिहाज से रंगमंच की 'क्लासिक' अवधारणा के साथ विभिन्न भारतीय रंगमंच की शैलियों की जानकारी लेना भी बेहतर होगा। आगे दिए उदाहरण से भारतीय रंगमंच में विविधता की बात आपके सामने और स्पष्ट होगी–

*''जो लोग एकल को एक आयातित नाट्य विधा मानकर यहां की जड़ों से कटना चाहते हैं उन्हें जरा परिश्रम करके यहां की समृद्ध परंपराओं के अंदर झांकने की जरूरत है। बिहार और उत्तर प्रदेश के गांवों में 'बहुरूपिया' खेल न जाने कितने वर्षों से आज भी किसी न किसी रूप में जिंदा है। मध्य प्रदेश की पंडवानी शैली में अभिनय करने वाला कलाकार इकलौता होता है। केवल हाथ में थामे कोई पारंपरिक वाद्ययंत्र और पीछे पंक्तिबद्ध बैठे कोरस के गायन–वादन के सहारे महाभारत, रामायण या दूसरे धार्मिक आख्यानों को गा–गाकर, बीच–बीच में संवाद बोलकर तो कभी आंगिक अभिनय कर हजारों दर्शकों के बीच इतने प्रभावशाली ढंग से रखता है कि दर्शक कई दिनों तक, रात में लगातार सुनते रहते हैं। ऐसी ही परंपरा राजस्थान की बातपोश, पाबू की फड़, गुजरात की आख्यान शैली और बुंदेलखण्ड की लोकप्रिय वाचन और गायन शैली आल्हा–ऊदल है।''*

**राजेश कुमार ('पांच एकल' की भूमिका से)**

इसी तरह से देखें तो पश्चिमी रंगदर्शन को समझे बिना रंगमंच के तमाम आधुनिक प्रयोगों को नहीं समझा जा सकता। 'एब्सर्ड थिएटर' की अवधारणा पश्चिम से आई है और भारतीय रंग प्रस्तुतियों में खासी लोकप्रिय है। यहां हम यह स्पष्ट कर देना चाहते हैं कि रंगमंच से संबंधित जानकारी या आवश्यक पृष्ठभूमि का जिक्र करने से यह आशय नहीं है कि इतना विषद् अध्ययन किए बगैर नाट्य समीक्षा की ही नहीं जा सकती, बल्कि हमारा यह सुझाव है कि रंग समीक्षा के क्षेत्र में अपनी दिलचस्पी को देखते हुए इस दिशा में लगातार और ज्ञान हासिल करते रहना बेहतर होगा। इसके

लिए 'क्लासिक' भारतीय और पश्चिमी रंगमंच की अवधारणा, भारतीय और पश्चिमी नाट्यशास्त्र, यथार्थवादी नाटक, ब्रेख्त के 'एलिएनेशन प्रभाव' की अवधारणा बैकेट का 'एब्सर्ड थिएटर', एकल और मूक प्रस्तुति, विभिन्न नाटककारों तथा चर्चित नाटकों की जानकारी का एक छोटा 'पैकेज' तैयार किया जा सकता है। इससे निःसंदेह आपको बेहतर लेखन में मदद मिलेगी।

### 18.6.2 रंगमंच पर समीक्षा की विशेषताएं

पहली शर्त तो यह कि नाट्य समीक्षा बहुत दुरूह, क्लिष्ट और उलझाव भरी नहीं होनी चाहिए बल्कि इस तरह लिखी जानी चाहिए कि जटिल रंग–प्रस्तुतियों को उनके संकेतों से अर्थ ग्रहण करते हुए पाठकों के लिए खोला जा सके। समीक्षा पढ़ने के बाद प्रस्तुति को समझने और मूल अर्थ ग्रहण करने में आसानी हो इसके लिए आवश्यक है कि किसी भी नाट्य प्रस्तुति में पहले उसके बारे में निर्देशकीय या लेखकीय वक्तव्य (यदि होता है) को ध्यान से सुना जाए और उस पर नोट्स तैयार किया जाए। आम तौर पर प्रस्तुति के समय नाटक के बारे में आवश्यक सूचनाओं का एक 'ब्रोशर' भी दिया जाता है, जिससे काफी तथ्यात्मक जानकारी मिलती है। इसके बावजूद यदि कोई दुविधा रहती है तो नाटक से जुड़े लोगों, कलाकारों और मुख्य रूप से निर्देशक से संक्षिप्त बातचीत से काफी मदद मिलती है।

इसके अतिरिक्त जानकारी के अलावा नाटक की प्रस्तुति के दौरान काफी सजगता की आवश्यकता है। समीक्षक को यह हमेशा ध्यान रखना चाहिए कि कोई भी नाटक अपनी समग्रता में कैसा प्रभाव छोड़ता है। यह प्रभाव ही किसी प्रस्तुति की सफलता और असफलता को तय करता है। तकनीकी दृष्टि से बहुत श्रेष्ठ प्रस्तुति भी इस समग्रता के अभाव में विफल हो सकती है। इसके बाद हम उन तकनीकी बारीकियों में जाएंगे, जो रंगमंच के आवश्यक उपकरण हैं। इसे नाटक देखते वक्त ही संक्षिप्त टिप्पणी के रूप में दर्ज करना बेहतर होता है, ताकि बाद में वह विस्मृत न हो। इसमें प्रकाश संयोजन, पार्श्व संगीत, मंच सज्जा, पात्रों की वेशभूषा, ध्वनि प्रभाव आदि शामिल हैं और अंत में चूंकि थिएटर मूल रूप से अभिनेता का माध्यम है, लिहाजा अभिनय पर विशेष ध्यान देने की जरूरत है। अभिनेता किस हद तक अपने पात्र को मंच पर सजीव कर सका, वह पात्र में निहित विडंबना, छल, करुणा को कितना उजागर कर सका और वाचिक और आंगिक अभिनय से कितना प्रभाव छोड़ने में सफल रहा। आगे हम एक नाट्य प्रस्तुति पर लिखी गई समीक्षा को प्रस्तुत कर रहे हैं। इससे आपको रंग–समीक्षा के विन्यास को समझने में मदद मिलेगी–

*''सुरेश भारद्वाज निर्देशित 'अक्स' तथा 'और अगले साल' की प्रस्तुति एक विवाहेतर संबंध की कहानी है। विवाहेतर संबंध जिस विभाजित मनःस्थिति को जन्म देता है, उस विभाजन के सच का पाठ दर्शाता है। इस सच तक पहुंचने के लिए यह पाठ नैतिकता और अनैतिकता के द्वंद्व और दुनियावी जवाबदेहियों और व्यक्तिगत भावावेग के बीच के असमंजस को सामने लाता है। इस कहानी के दोनों पात्रों–प्रोफेसर रवि और पूजा में कभी प्यार था जो विवाह के निष्कर्ष तक नहीं पहुंच पाया। सालों बाद एक रोज जब अचानक उनकी मुलाकात कहीं हुई, तब तक वे विवाहित होकर तीन–तीन बच्चों के मां और पिता हो चुके थे। इस अचानक हुई मुलाकात में उन्होंने तय किया कि वे हर साल एक तय रोज एक तय जगह मिला करेगें। यह नाटक इन्हीं कई मुलाकातों के दृश्यों का एक वृत्त है। इस तरह मंच की प्रायः एक ही सेटिंग में दो पात्रों की मार्फत हम एक संबंध की भीतरी दुनिया को देख सकते हैं। इस संबंध की पेचीदगी सिर्फ*

*दुनियावी उलझनों के कारण नहीं है, बल्कि उसमें दो तरह की वैयक्तिकताओं के आग्रह भी शरीक हैं।*

*ये दो वैयक्तिकताएं ही हैं जो दो चरित्र बनाती हैं और एक बहस। पुरुष को यह संबंध कभी अनैतिक लगता है, कभी पाप पर स्त्री इस बोध से उबर चुकी है। वह इस संबंध के तर्क और उसमें अपनी भूमिका को लेकर अधिक स्थिर है। इसीलिए वह प्रोफेसर के विवाह प्रस्ताव को भी ठुकरा देती है। प्रोफेसर हर बार इस संबंध के नए तर्क गढ़ता है और फिर भी विचलित रहता है। पूजा को इस संबंध में पहली बार हुए सेक्स ने जरूर ग्लानि दी थी, पर फिर सेक्स उसके लिए कहीं कम महत्वपूर्ण रह गया। एक अर्थ में प्रोफेसर रवि का चरित्र जो सवाल खड़े करता है, पूजा का चरित्र उनके जवाब देता है।*

*बर्नार्ड स्लाड के नाटक 'सेम टाइम नेक्सट इयर' पर आधारित जावेद सिद्दीकी का यह नाटक इस संबंध में उसकी भावनात्मकता को प्रमुख तत्व के रूप में पहचानता है। यह चीज उससे जुड़े खतरों या द्वंद्व को ज्यादा प्रामाणिक बनाती है। पूजा की भूमिका में हरविंदर कौर ने प्रौढ़ उम्र के प्रेम की बहुत कुशल और सूक्ष्म अभिव्यक्तियां प्रस्तुति में दी हैं। उनकी अभिव्यक्तियों में बेबाकी या उदासी की सहजता देखने लायक थी। प्रोफेसर बने रमेश मनचंदा के अभिनय में ये बारीकियां तो नहीं थीं, पर उनकी देहभाषा कुल मिलाकर किरदार के अनुरूप थी।*

*मंच सज्जा की डिजाइन में स्पेस का बहुत इस्तेमाल प्रस्तुति में था। उसके विन्यास के स्थान–संकेत प्रकाश योजना के सहयोग से स्थितियों को एक सटीक आयाम देने वाले थे। मंच का यह कुल डिजाइन कथ्य को  पर्याप्त सघन और तनावपूर्ण बनाने वाला था।*

*प्रस्तुति के पूर्वार्ध में जहां वैयक्तिकताओं के प्रसंग ही ज्यादा महतवपूर्ण हैं, वहीं उत्तरार्ध को दोनों पात्रों की पारिवारिकता और उम्र के प्रसंग गति और वैविध्य देते हैं। नाटक में यह रिश्ता करीब तीस साल तक चलता है। यह 'लंबा दौर' सारी जटिलताओं के बरक्स इस संबंध की संवेदनात्मक गहनता को क्रमशः और गाढ़ा बनाता है। बाद के हिस्से में अपने वैवाहिक साथियों की मृत्यु के बाद बुजुर्ग हो चुके दोनों पात्रों की बातचीत निश्चित ही इस क्रम में एक अविस्मरणीय दृश्य था।''*

**संगम पांडेय, एक रिश्ते का द्वंद्व (जनसत्ता, 15 फरवरी 2004)**

## 18.6.3 सिनेमाः आवश्यक पृष्ठभूमि

सिनेमा में सबसे ज्यादा महत्त्व तकनीकी और उसके सामाजिक संदर्भो का है। सिनेमा अपने में कई कलाओं को समेटे हुए है और फिर भी एक स्वतंत्र विधा है। इसमें साहित्य, थियेटर, चित्रकला और फोटोग्राफी तक शामिल है। छायांकन सिनेमा विधा का सबसे महत्वपूर्ण अंग है। सिनेमैटोग्राफी को समझना दरअसल इस विधा के व्याकरण को समझना है। कुंवर जी अग्रवाल अपने आलेख 'फिल्म माध्यम का व्याकरण' में लिखते हैं–

*''जिस प्रकार अर्थ की दृष्टि से भाषा की सबसे महत्वपूर्ण इकाई वाक्य है, उसी प्रकार फिल्म की सबसे महत्वपूर्ण प्राथमिक इकाई शॉट है। शॉट का अर्थ है किसी स्थिति का बिना किसी व्यवधान के और बिना कैमरे का स्थान बदले लगातार किया गया छायांकन। एक शॉट किसी स्थिति की ध्वनि और गति के साथ प्रस्तुत चित्र है। इसके*

*द्वारा चित्रात्मक बिंबों की एक इकाई उसी प्रकार पूरी होती है जिस प्रकार भाषा में एक वाक्य द्वारा। जिस प्रकार वाक्य छोटे–बड़े हो सकते हैं उसी प्रकार शॉट भी छोटे–बड़े हो सकते हैं। जिस प्रकार एक वाक्य दूसरे वाक्य से जुड़ा होता है, उसी तरह शॉट भी एक दूसरे से जुड़े होते हैं। फिल्म में जीवनकथा इन शॉटों के लंबे क्रम द्वारा प्रस्तुत होती है। यहां पर फिल्म की तुलना पुरानी चित्रकथाओं से कुछ दूर तक की जा सकती है। अजंता की गुफाओं में जातक की कथाओं को चित्रों द्वारा प्रस्तुत किया गया था।''*

**कुंवर जी अग्रवाल (फिल्म माध्यम का व्याकरण, रंग प्रसंग, अप्रैल–जून 2005)**

इस व्याकरण को समझने के बाद हम बहुत आसानी से फिल्म के अन्य संकेतों, दृश्यों और निर्देशकीय कौशल को पढ़ने की समझ विकसित कर सकते हैं। एक बड़ा निर्देशक सिनेमा की भाषा नए सिरे से गढ़ने का प्रयास करता है या उसकी भाषा में सर्जनात्मक तोड़फोड़ करता है। दरअसल हर फिल्म निर्देशक की एक विशिष्ट शैली होती है। उसके खास तेवर को फिल्म के छायांकन, विशिष्ट वातावरण का सृजन, कुछ खास बिंबों के प्रति निर्देशक के 'ऑब्सेशन' या विशेष आग्रहों, निर्देशक के स्पष्ट रूप से झलकने वाले या कथ्य की संरचना में सामाजिक सरोकारों में पहचाना जा सकता है। लगभग सभी बड़े निर्देशकों ने अपने सरोकारों और फिल्मांकन की खास शैली से पहचान बनाई है। यहां विश्व सिनेमा में अपनी खास पहचान बनाने वाले स्वीडन के निर्देशक इंगमार बर्गमैन की विशिष्ट शैली को हम बतौर उदाहरण समझ सकते हैं –

*''तीस वर्षों में कई फिल्मों में बर्गमैन ने रंगमंच की तकनीकों का इस्तेमाल किया है। सिनेमाई भाषा में कथा कहने में भरपूर प्रयोग किया। 'स्माइल्स ऑफ ए समरनाइट' में उन्होंने प्रेम की उथल–पुथल और बदलती परिस्थितियों में बदलते आपसी संबंधों को दिखाने और मुश्किल मनोवैज्ञानिक स्थितियों को दिखाने के लिए नाटकीय कौशल का सहारा लिया। निर्णायक क्षणों में नाटकीय तत्वों का समावेश करके वे उसे गहरी अर्थवत्ता दे देते हैं। उनको पहचान दिलाने वाली फिल्म 'द सेवंथ सील' में मध्ययुगीन स्वीडन में प्लेग फैला हुआ है। इसमें भी उन्होंने नाटकीय कौशल का भरपूर परिचय दिया है। हालांकि फिल्म में दो जबरदस्त हिला देने वाले दृश्य हैं, एक मध्यांतर से पहले का और दूसरा अंत में, लेकिन काले कपड़ों में मौत का जो नाच पीछे चल रहा है और राजा शतरंज खेल रहा है, अपनी जिंदगी दांव पर लगा रहा है– ऐसे दृश्य हैं जिन्हें लोग भूल नहीं सकते। अब भी याद करते हैं।''*

**पार्थ चटर्जी ('जब दोनों निकट आते हैं', रंग प्रसंग, अप्रैल–जून 2005)**

### 18.6.4 सिनेमा पर लेखन की विशेषताएं

फिल्म समीक्षा के दौरान जिन दो बिंदुओं पर खास 'फोकस' की जरूरत है, वह है– पठनीयता और विश्लेषण। यह भी ध्यान देने की जरूरत है कि बीते कई वर्षों में सिनेमा पर आलोचनात्मक लेखन अपनी सीमाएं पार करता हुआ राजनीतिशास्त्र, समाजशास्त्र और मनोवविज्ञान के क्षेत्र में प्रवेश कर चुका है। इस दिशा में काफी गंभीर प्रयास हो चुके हैं और सिनेमा पर विभिन्न दृष्टिकोणों से तैयार कई महत्वपूर्ण किताबें भी सामने आ चुकी हैं। इस किस्म के तमाम आलोचनात्मक प्रयासों से अवगत हो पाना तो संभव नहीं है, मगर सिनेमा में दिलचस्पी रखने वाले समीक्षक के लिए बेहतर होगा कि वह सिनेमा लेखन के गंभीर और अकादमिक पक्ष की भी थोड़ी–बहुत समझ विकसित कर सके।

सिनेमा पर समीक्षात्मक लेखन सबसे पहले इस विधा के सामाजिक सरोकारों की बात करता है। कला या नाटक के मुकाबले सिनेमा की पहुँच कहीं ज्यादा व्यापक है। एक नाट्य प्रस्तुति एक बार में कुछ सौ या हजार दर्शकों तक पहुंचती है। आर्ट गैलरी में लगने वाली कला प्रदर्शनियों का आस्वाद लेने वालों की संख्या भी सीमित होती है, साथ ही इन दोनों विधाओं के दर्शक एक विशिष्ट रुचि और खास वर्ग के होते हैं। सिनेमा एक साथ लाखों लोगों को और हर उम्र या वर्ग के लोगों को प्रभावित करता है। इतना ही नहीं भूमंडलीकरण के दौर में सिनेमा सीमाओं के पार भी अपनी उपस्थिति दर्ज कर रहा है।

सिनेमा को हम उसके कथानक में निहित राजनीतिक 'अंतर्धाराओं तथा सामाजिक मूल्यों के परिप्रेक्ष्य में समझ सकते हैं। हम यह भी देख सकते हैं कि किसी फिल्म में प्रस्तुत चरित्र, वातावरण और कथानक दर्शकों पर क्या प्रभाव डालता है और उनके लिए किस 'अर्थ' का सृजन करता है। उदाहरण के लिए, गोविंद निहालानी की 'आक्रोश', 'अर्धसत्य', 'तमस' और 'देव' जैसी फिल्में तीखे राजनीतिक तेवर वाले यथार्थवादी सिनेमा का उदाहरण हैं। विमल राय की 'सुजाता' और 'दो बीघा जमीन' तथा वी.शांताराम की 'दुनिया न माने' सामाजिक विडंबनाओं को सामने रखने वाली फिल्में हैं। राजकपूर की 'आवारा', 'श्री चार सौ बीस' और 'जागते रहो' रूमानी समाजवादी आशाओं से भरी फिल्में थीं। वहीं गुरुदत्त की 'प्यासा', 'कागज के फूल' तथा 'साहब, बीबी और गुलाम' मोहभंग और निराशा के दौर को चित्रित करती हैं। फिल्म के कथानक और उसकी प्रस्तुति में किस तरह से निर्देशक के नजरिए की व्याख्या की जा सकती है, इसे हम आगे दिए उदाहरण से समझ सकते हैं –

*''श्री चार सौ बीस' की टीचर विद्या आजादी के बाद, आजादी के पहले की आदर्शवादी–गांधीवादी महिला है। निहायत ही जानलेवा गरीबी भी उसको नहीं तोड़ सकती। नायक कस्बेनुमा शहर से आया है और महानगर की चकाचौंध में उसके जीवन मूल्य खो गए हैं। बेईमानी के पैसे से वह अपना ईमानदारी का मेडल रद्दी वाले के यहाँ से छुड़ा सकता है। शराब से ज्यादा कामयाबी के नशे में धुत नायक पूंजीवादी मुखौटों को तोड़ देता है, 'गरीब से कहते हैं रूखी–सूखी खाकर जिंदा रहो... ईमानदारी का उपदेश हमेशा गरीब के लिए ही क्यों? दया, धर्म, पवित्रता के घोंसले से बाहर आकर देखो–दुनिया सोने की चिड़िया का नाम है।' वह नोटों का ढेर लगाता है और नायिका जीवन और दौलत की क्षणभंगुरता की बात करती है, 'किस्मत की आंधी इन टुकड़ों को बहा ले जाएगी और तुम बेईमानी के कीचड़ में धंसते चले जाओगे–मैं इस अपराध में तुम्हारा साथ नहीं दूंगी।' 'आवारा' की रीता की तरह 'श्री चार सौ बीस' की विद्या भी नायक को अपराध के दलदल से निकलने की प्रेरणा देती है। आवारा में नायिका, नायक के युद्ध में शामिल है और लड़ती भी है, परंतु 'श्री चार सौ बीस' में वह प्रेरणा देते हुए स्वयं नहीं लड़ती, क्योंकि मास्टर सैनिक तैयार कर सकते हैं, खुद तलवार लेकर लड़ने नहीं जाते। विद्या नाराज होने से ज्यादा दुखी है।''*

**(जयप्रकाश चौकसे की पुस्तक 'राजकपूर' से)**

## 18.6.5 कला समीक्षाः आवश्यक पृष्ठभूमि

कला समीक्षा दरअसल कला जगत की विभिन्न शैलियों, उनमें हो रहे प्रयोगों, कला के इतिहास से मौजूदा सर्जकों की मुठभेड़ और अपने समय पर टिप्पणियों को प्रस्तुत करती है। यही समीक्षा की आवश्यक पृष्ठभूमि भी है। किसी भी प्रस्तुति को हम कला

इतिहास के आइने में ही समझ सकते हैं। यहां इस बात का भी ध्यान रखना होगा कि चित्रकला या मूर्तिशिल्प सिनेमा या रंगमंच के मुकाबले ज्यादा निजी विधा है, यानी कविता और उपन्यास के ज्यादा करीब। विश्व के महान कलाकारों को समझने के लिए उनकी निजी सोच और जिदंगी को समझना भी जरूरी हो जाता हैं। माधुरी पुरंदरे अपनी पुस्तक 'पिकासो' में लिखती हैं –

*''उसकी चित्रकारी में सब था। प्रकृति चित्रण, स्थिर चित्र, व्यक्ति चित्र, व्यंग चित्र। परंतु उसका प्रमुख चित्र विषय था आदमी, और अंत तक यही विषय प्रमुख रहा। उसके अलबम में मां, पिता और बहनों के असंख्य चित्र मिलते हैं। आजकल जिस तरह बच्चों में कैमरे में सब कुछ समा लेने की इच्छा होती है, उसी तरह उसने भी सामने जो देखा, उसे कलम से खींच–खांच डाला था। उसमें कहीं उपहास तो कहीं विनोद व्यक्त होता है। बूढ़ों के तो उसने असंख्य चित्र बनाए। वृद्धावस्था, मृत्यु के प्रति भय, दरिद्रता और दुख के प्रति करुणा और आस्था भाव के संकेत उस उम्र में भी उसके चित्रों में दिखाई दे रहे थे। इस उम्र के बालक का फूलों–पत्तियों, चांद और सूरज की आकृति की बजाय ऐसे विषयों की ओर मुड़ना एक आश्चर्य ही था।''*

इस तरह देखें तो किसी कलाकृति को कलाकार के निजी संदर्भो से अर्थग्रहण किए बिना आसानी से नहीं समझा जा सकता। आधुनिक भारतीय चित्रकला और मूर्तिशिल्प ने अपना मौजूदा स्वरूप कई स्रोतों से ग्रहण किया है। इसमें पश्चिमी चित्रकला के साथ–साथ कला के प्रति विकसित होती भारतीय सोच का भी खासा योगदान है। यहां यह ध्यान देने योग्य बात है कि अक्सर लोग किसी कला प्रर्दशनी में कलाकार के मंतव्य या उसकी विषय वस्तु में उलझकर रह जाते हैं, नतीजे में उनके कुछ विशेष हाथ नहीं लगता। याद रखना चाहिए कि कला कभी किसी खास संदेश को संप्रेषित करने का माध्यम भर नहीं होती, यदि ऐसा हो तो किसी कलाकृति और सामाजिक सरोकारों वाले स्तरीय विज्ञान में कोई फर्क नहीं रह जाएगा। यह जरूरी है कि आप किसी भी पेंटिग या मूर्ति शिल्प में रंगों और आकृतियों के प्रति कलाकार का व्यवहार देखें। उल्लेखनीय बिंदुओं को अपनी नोटबुक में लिखते चलें। इससे अनजाने में ही कई परतें खुलने लगेंगी। आपको यह एहसास होगा कि कैसे कोई कलाकृति अपने में सार्थक संदेश भी छिपाये होती है।

### 18.6.6 कला समीक्षा की विशेषताएं

जैसा कि हमने पहले स्पष्ट किया है कि किसी भी कलाकृति में रंगों, रेखाओं, आकृतियों के प्रति कलाकार का नजरिया ही सबसे ज्यादा ध्यान देने योग्य होता है। इससे आप कलाकार की विशिष्टता को पकड़ते हैं। किसी कलाकृति के प्रति पहली ही नजर में आ जाने जैसा भाव न रखें। इससे आपको निराशा तो होगी ही, साथ ही आप कला का अर्थ ग्रहण कर सकेंगे। ध्यान रखें कि कला में गणित की तरह एक और एक दो का तर्क नहीं होता। इसलिए दुरूह और जटिल सी दिखने वाली कलाकृतियों को देखकर भी बहुत उलझन में न पड़ें। किसी भी कलाकार की शैली की व्याख्या करने का प्रयास दरअसल एक ऐसी कुंजी हैं, जिससे अर्थ की परतें खुलती चली जाती हैं। उदाहरण के तौर पर हम 'जनसत्ता' में जतिन दास पर लिखे विनोद भारद्वाज के आलेख 'श्वेत–श्याम स्पर्श' को देख सकते हैं –

*''उनकी रेखाओं की रेंज बड़ी है : वे कई रूपों वाली हैं। कुछ भरी–भरी हैं, कुछ सूतवां हैं, कुछ किसी मोटी रस्सी सरीखी हैं, कुछ तीक्ष्ण हैं, कुछ दृढ़ हैं, कुछ लचीली*

*हैं, कुछ उछाल भरी हैं, कुछ कोमल हैं, और कुछ बलशाली हैं। वे जिन विषय वस्तुओं को घेरती हैं, उनकी रेंज भी बड़ी और विविध है। उसमें आधुनिकाएं हैं, कलाकार हैं, वनस्पतियां हैं, स्त्री–पुरुष शरीर की अनेक मुद्राए–भंगिमाएं और भाव स्थितियां हैं। मित्रों की मुखाकृतियां हैं, राह चलते देख ली गई और उभार दी गई चीजें हैं। उसमें बांग्लादेशी कबाड़ीवाला है, हैदराबाद का वह श्रमिक है जो पत्थर उठाता है। कुम्हार का घर है, खजुराहों के मूर्तिशिल्प हैं, गुजरात का भूकंप है, बाली, जर्मनी और उन अन्य देशों की स्त्रियां हैं जिनकी यात्राएं जतिन ने की हैं।''*

यहां गौर करने लायक बात यह है कि सिर्फ एक पैराग्राफ में समीक्षक ने जतिन दास की सबसे बड़ी विशिष्टता रेखाओं पर उनके नियंत्रण को बड़े ही सहज ढंग से रख दिया है। इतना ही नहीं, रेखाओं की विविधता से वे आकृतियों और फिर उनके रचना संसार और विषय वस्तु तक पहुँचते हैं और देखते–देखते जब आप इन वाक्यों तक पहुँचते हैं, *'वे जिन विषय वस्तुओं को घेरती हैं, उनकी रेंज भी बड़ी और विविध है। उनमें आधुनिकाएं हैं, कलाकार हैं, वनस्पतियां है, स्त्री–पुरुष शरीर की अनेक मुद्राएं–भंगिमाएं और भाव स्थितियां हैं। मित्रों की मुखाकृतियां हैं, राह चलते देख ली गई और उभार दी गई चीजें हैं, उनमें बंगलादेशी कबाड़ीवाला हैं, हैदराबाद का वह श्रमिक हैं जो पत्थर उठाता है'* तो जतिन बतौर कलाकार आपके सामने खुलने लगते हैं।

एक बार कलाकार की विषय वस्तु तक पहुंचने के बाद आपके सामने कलाकार का मंतव्य स्पष्ट होने लगता है और फिर उसकी 'रोशनी' में दोबारा कलाकृतियों को देखने पर किसी तरह की दुविधा नहीं रहती। अक्सर कला प्रदर्शनियों में सीरीज बनाकर कलाकृतियों को प्रस्तुत करने का चलन है। इससे कलाकार के 'मूड' को पकड़ने में काफी आसानी होती है। यह सीरीज किसी खास घटना से उद्वेलित होकर तैयार की जा सकती है, किसी विषय पर काम करने के दौरान तैयार हो सकती है या फिर सिर्फ शिल्पगत बारीकियों तक भी सिमटी रह सकती है।

## 18.7 कला समीक्षक के लिए आवश्यक योग्यता

*''दरअसल कला लेखन हो या विश्व सिनेमा पर विश्लेषणात्मक लेखन–इन सब चीजों के लिए काफी तैयारी चाहिए। लेखक के पास एक बहुत बड़ी निजी लाइब्रेरी होनी चाहिए। समकालीन भारतीय कला पर भी लिखना हो तो दुनिया भर के संग्रहालयों का सीधा अनुभव होना चाहिए। रेनेसां कला के रंग किताबों से बहुत कम समझ में आते हैं। राफेलो या तित्सियानो के लाल रंग को समझना हो तो रोम, फ्लोरेंस या वेनिस में महीनों भटकना पड़ेगा। मातीस का लाल रंग देखे–समझे बिना आधुनिक भारतीय कलाकारों के रंगो की दुनिया में आप प्रमाणिक रूप से नहीं जा पाएगें। यानी आपको खूब देखने, पढ़ने, घूमने की सुविधा चाहिए।''*

**कला लेखन के तर्क (विनोद भारद्वाज, जनसत्ता, 2 फरवरी, 2003)**

उपरोक्त टिप्पणी आपको थोड़ा हतोत्साहित भी कर सकती है। यह संभव नहीं है कि आप रातों–रात दुनिया की सर्वश्रेष्ठ कलाकृतियों के संर्पक में आ जाएं, विश्व के बेहतरीन संग्राहलय देख डालें और कला प्रदर्शनियों में घूम आएं। किंतु एक कला समीक्षक में ऐसा करने की लालसा जरूर हो सकती है। कला के प्रति अनुराग, उत्सुकता, दुनिया का सर्वश्रेष्ठ जानने की उत्कट आकांक्षा बहुत जरूरी है। इसके

बिना आप सर्वश्रेष्ठ कला और कलाकार तक नहीं पहुंच सकते। आज दुनिया बहुत छोटी हो गई है। इंटरनेट तथा सीडी रोम की मदद से बहुत कुछ आसानी से उपलब्ध है। किसी समय में अच्छी किताबों और फिल्मों के लिए तरसना पड़ता था। फ्रांसीसी सिनेमा के महान निर्देशक ज्या लुक गोदार और फ्रांसुआ त्रुफो से लेकर भारत के सत्यजित राय तक ने उसी सिनेमा के जरिए अपनी समझ बनाई जो उन्हें सहजता से उपलब्ध था। गोदार और त्रुफो ने अल्फ्रेड हिचकाक की तमाम फिल्में देख डालीं और विश्लेषण करके एक नई सिने–भाषा को जन्म दिया।

कला के प्रति उत्कट लगाव ही आपको कलाकृतियों की ऐसी व्याख्या के लिए तैयार करता है, जैसा कि इससे पहले किसी ने नहीं की हो या इससे पहले किसी ने उस रचना से उतने अर्थ और संकेत नहीं ग्रहण किए हों। जब आप किसी भी कलाकृति से अर्थ ग्रहण करते हैं तो आपकी भाषा भी संवेदनशील और सचेत होती जाती है। यहां हम महान निर्देशक गुरुदत्त की फिल्म 'कागज के फूल' की बहुत सुदंर व्याख्या को पढ़कर इस बात को अधिक ढंग से समझ सकते हैं –

*''कागज के फूल' गुरुदत्त की तकनीकी दृष्टि से सबसे महत्त्वाकांक्षापूर्ण फिल्म थी। इसे उन्होंने 'सिनेमास्कोप' के रूप में बनाया था और उसमें एक–एक दृश्य को तकनीकी दृष्टि से पूर्णतः* ***नोक–पलक*** *दुरुस्त रखने की चेष्टा की थी। हर दृश्य किसी महान चित्रकार की पेंटिग की तरह खुलता है। इसकी कहानी चार्ली चैपलिन की 'लाइम लाइट' से मिलती–जुलती है, जिसमें एक फिल्म निर्देशक एक बिना तराशे हुए हीरे की तरह अनगढ़ अभिनेत्री को सफलता के शिखर पर पहुंचा देता है और स्वयं गुमनामी के अंधेरे में गुम हो जाता है। संभवतः गुरुदत्त तब वहीदा रहमान को (इस फिल्म की नायिका) इसी रूप में देखते थे। यह पूरी फिल्म एक बीहड़ हताशा और डिस्पेयर की फिल्म थी। इस फिल्म की जान–गुरुदत्त की लगभग सभी फिल्मों की तरह इसका संगीत था। सचमुच इस फिल्म में संगीतकार एस.डी बर्मन ने अपनी जान उड़ेल दी थी। उन्होंने भरसक अपनी संगीत दृष्टि को गुरुदत्त की जीवन दृष्टि से एकाकार कर दिया था। गीतकार कैफी आजमी ने भी निर्देशक के अपने अथाह अवसाद में डूबकर इसके गीत लिखे थे : 'वक्त ने किया क्या हँसी सितम, तुम रहे न तुम, हम रहे न हम, और 'देखी जमाने की यारी, बिछड़े सभी बारी–बारी' जैसे गीत हिन्दी फिल्मों के स्वीटेस्ट और सैडेस्ट गीत माने जाएगें। किंतु गुरुदत्त तथा उनकी टीम का यह श्रमसाध्य महत्त्वाकांक्षापूर्ण वेंचर बॉक्स ऑफिस पर घनघोर रूप से असफल रहा। फिल्म भारत के सभी शहरों में पहले दूसरे हफ्ते के बाद ही पर्दे से उतर गई। गुरुदत्त मानसिक, शारीरिक तथा आर्थिक रूप से चकनाचूर हो गए। विचार किया जा सकता है कि 'कागज के फूल' की ऐसी 'बेजोड़ असफलता' का कारण क्या था? उसकी तमाम तकनीकी तथा संगीतिक विशेषताओं के बाबजूद? दरअसल उसकी ये विशेषताएं ही उसकी बरबादी का कारण बनीं। औसत भारतीय फिल्म दर्शक जिस वर्ग तथा तबके से आता है वह इसकी तकनीकी सूक्ष्म, विशेषताओं तथा अर्थगर्भित सूक्ष्म व्यंजनाओं को समझने में असमर्थ था। वह सामान्यतः अपने थके तथा प्रायः स्थूल किस्म के मस्तिष्क के लिए 'पैसा वसूल' मनोरंजन चाहता था (आज भी चाहता है)। और 'कागज के फूल' उसके ठीक उलट थी। वह अत्यंत धीमी गति वाली स्टिल शॉट्स फिल्म थी। इसके आलावा फिल्म के डिस्पेयर का स्वर दर्शकों को उबाने वाला ही नहीं डिप्रेशन में डालने वाला लगा। बहुत दर्शक शायद ही अंत तक कुर्सी पर बैठे रह पाए होंगे।''*

**विजय मोहन सिंह (ये दुनिया अगर मिल जाए तो क्या)**

**बोध प्रश्न 1**

**निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर संक्षेप में दें ।**

1) एक अच्छी फिल्म समीक्षा की क्या विशेषताएं होनी चाहिए? विस्तृत विवेचना करें। किसी फिल्म पर करीब दो सौ शब्दों की समीक्षा लिखें 'मदर इंडिया', 'मुगले–आजम' या 'मुन्ना भाई एमबीबीएस'।

......................................................................................................................................

......................................................................................................................................

......................................................................................................................................

......................................................................................................................................

......................................................................................................................................

......................................................................................................................................

......................................................................................................................................

2) मकबूल फिदा हुसैन के रेखांकन, रंगों के इस्तेमाल और उनकी थीम पर एक संक्षिप्त टिप्पणी लिखें।

......................................................................................................................................

......................................................................................................................................

......................................................................................................................................

......................................................................................................................................

......................................................................................................................................

......................................................................................................................................

......................................................................................................................................

3) अपने शहर की किसी नाट्य प्रस्तुति में जाएं और उस पर एक संक्षिप्त रिपोर्ट तैयार करें। रिपोर्ट में नाटक की विषय वस्तु के अतिरिक्त अभिनय, निर्देशन और तकनीकी पक्षों का भी जिक्र करें।

......................................................................................................................................

......................................................................................................................................

......................................................................................................................................

......................................................................................................................................

......................................................................................................................................

......................................................................................................................................

## 18.8 अच्छे समीक्षक के गुण

एक अच्छा समीक्षक बनने के लिए आवश्यक है कि आपके पास अच्छी संदर्भ सामग्री हो। इसके लिए अखबारों की कटिंग, लाइब्रेरी की सदस्यता, इंटरनेट और पुस्तकों का निजी संचयन काम में आ सकता है। यह भी आवश्यक है कि आप कलाकारों के निरंतर संपर्क में रहें, इससे उनकी बदलती सोच, मौजूदा कला जगत की प्रवृत्तियों तथा नए प्रयोगों को समझने में आसानी होती है। इससे आपकी संदर्भ सामग्री विपुल हो जाती है, जो कला समीक्षा में काफी उपयोगी साबित होती है। एक समीक्षा कई बार अपने सर्वोत्कृष्ट रूप में उतनी ही श्रेष्ठ हो सकती है, जितनी कोई रचना। उदाहरण के तौर पर, हम यहां राजकपूर की फिल्म 'श्री चार सौ बीस' के दृष्य की जयप्रकाश चौकसे द्वारा की गई व्याख्या को देख सकते हैं। वे लगभग फिल्मकार की मनोभूमि तक पहुचंकर चीजों को विश्लेषित करते हैं।

*''दरअसल 'श्री चार सौ बीस' की नायिका अनन्य प्रेमिका है– उसका पोर–पोर प्रेम रस में डूबा है। इस फिल्म का गीत 'प्यार हुआ, इकरार हुआ', को दुनिया भर के समीक्षकों ने बहुत पसंद किया है, परंतु इस गीत का वर्णन प्रोफेसर आर.एस यादव 'अजातशत्रु' ने उतना ही उच्चकोटि का किया है जितना कि राजकपूर ने इसे रचा है। यह पहला और शायद आखिरी अवसर है, जब सर्जक और समीक्षक समान ऊंचाई पर खड़े हैं। अजातशत्रु कहते हैं, 'प्यार हुआ इकरार हुआ' विश्व सिनेमा में अपना स्थान रखने वाली घटना है। उसे देखकर साफ लगता है कि राजकपूर एक संवेदनशील इंसान था और संगीत–बोध के साथ उनका दृश्य बोध एक जीनियस के रचनात्मक अवचेतन से उत्पन्न होता था। याद कीजिए बरसात, पानी के झपाटे, गीला वातावरण, बारिश में भीगते लैंप पोस्ट, चाय की केटली से निकली भाप, आग में पानी का संकेत... ।''*

**जयप्रकाश चौकसे (पुस्तक 'राजकपूर' से)**

उपरोक्त उदाहरण यह बताता है कि किसी भी कलाकृति की वास्तविक व्याख्या और समीक्षा करने के लिए समीक्षक को भी उसी भाव और मनोभूमि तक पहुंचना होता है, जहां पहुंचकर कलाकार ने अपनी कलाकृति का सृजन किया है। आगे हम एक अच्छे समीक्षक के कुछ बुनियादी गुणों का जिक्र करेंगे।

### 18.8.1 विशेषज्ञता

*''अब कुछ पारसी नाटकों को आधार बनाकर इस विषय में भी गहराई से विचार किया जाए कि अपने कथ्य में भी ये साहित्यिक कहे जाने वाले नाटकों से कहां पीछे ठहरते हैं? उदाहरण के लिए, इस आलेख के शुरू में ही उल्लेखित 'रुस्तम–सोहराब' को ही ले लिया जाए तो बात स्पष्ट हो जाएगी। जानना चाहूंगा कि यह नाटक अपने जीवंत और सशक्त कथ्य और संरचना में किस 'क्लासिक' नाटक से कमतर है? रुस्तम और तहमीना दो अलग–अलग देशों के होकर भी एक दूसरे से प्यार करते हैं और विवाह कर लेते हैं। रुस्तम तहमीना के साथ कुछ दिन रहकर अपने देश ईरान लौट जाता है। सोलह–सत्रह वर्ष बाद उसका पुत्र सोहराब उसकी तलाश में पहुंच जाता है। दोनों एक दूसरे को पहचानते नहीं हैं और एक दूसरे के विरोधी खेमों की तरफ से लड़ रहे हैं। अंतिम लड़ाई दोनों योद्धाओं के बीच होती है। दोनों आखिर तक एक–दूसरे का नाम जानने की कोशिश करते हैं पर असफल रहते हैं। अंततः द्वंद्व युद्ध में रुस्तम*

*सोहराब की हत्या कर देता है और ठीक मरने से पहले सोहराब जब अपने बाप का नाम रुस्तम बताता है तो रुस्तम के दुख का पारावार नहीं रहता। एक बड़ी क्लासिक त्रासदी के हर तत्व से परिपूर्ण इस नाटक से क्या हमें 'राजा ईडिपस' और 'शाकुंतलम' जैसे नाटकों की याद नहीं आती? पहचाने जाने और न पहचाने जाने का संकट, कथ्य की समकालीनता और सार्वजनिकता स्वयं में सिद्ध है। बेटे की मृत्यु पर बाप का विलाप साहित्य एवं रंगमंच के सबसे ज्यादा यादगार क्षण हैं। राम के वियोग पर दशरथ का विलाप और रुस्तम का विलाप एक ही तराजू के दो पलड़े हैं।*

*संबंधों का यही दोहराव सोहराब और गर्द आफरीद की प्रेम कहानी में भी मौजूद है। दो अलग–अलग देश लेकिन एक दूसरे के प्रेमी। देश को प्राथमिकता दी जाय या व्यक्तिगत प्रेम को? क्या दोनों साथ–साथ भी चल सकते हैं? इससे जटिल, संश्लिष्ट, मार्मिक हम किस और नाटकीय दुविधा की प्रतिक्षा कर रहे हैं? जयशंकर प्रसाद की कहानी 'पुरस्कार' और 'आकाशदीप' में उपस्थित नारी चरित्रों का भी क्या यही द्वंद्व नहीं? यदि हम इन्हें साहित्य की अविस्मरणीय कहानियों में शामिल कर सकते हैं तो 'रुस्तम सोहराब', 'यहूदी की लड़की', खूबसूरत बला', 'वीर अभिमन्यु', 'मशरिकी हूर और ऐसे ही अनगिनत पारसी नाटकों की साहित्यिक अवहेलना क्यों? क्या हम इस तथ्य से मुंह मोड़ सकते हैं कि जिस पारसी अभिनय शैली और रंगमंच की भारतेंदु प्रसाद और परवर्ती नाटककारों ने जी भरकर आलोचना की उन्हीं के नाटकों में सबसे ज्यादा तत्व मिलते हैं।''*

**पारसी नाटकों का पुनर्पाठ (देवेंद्र राज अंकुर, जनसत्ता, 28 सितंबर 2003)**

देवेंद्र राज अंकुर के लेख का यह छोटा सा हिस्सा पारसी नाटक पर उनके विशद अध्ययन और दोबारा उन नाटकों के प्रति बनी उनकी समझ को दर्शाता है। इस अंश को दोबारा पढ़ते हुए आप इस बात पर गौर करें कि लेखक ने पारसी नाटकों के किन महत्त्वपूर्ण पहलुओं को यहां रेखांकित किया है। यह भी देखें कि किस तरह से उन्होनें 'रुस्तम–सोहराब' के कथानक का विश्लेषण किया है।

### 18.8.2 वस्तुनिष्ठता

यह समीक्षा का सबसे महत्त्वपूर्ण पक्ष है। यदि वस्तुनिष्ठता का निर्वाह नहीं हुआ तो समीक्षा महत्त्व खो बैठेगी। यह निष्पक्षता और वस्तुनिष्ठता ही है जो समीक्षक को ऊंचा दर्जा देती है और कलाकारों और साधारण पाठकों के बीच उसका सम्मान बढ़ाती है। यदि लेखन में तथ्यों को तोड़–मरोड़ कर प्रस्तुत किया गया तो न सिर्फ आपका लेखन प्रभावित होगा, बल्कि एक समीक्षक के बतौर आपकी साख नहीं बन पाएगी। निष्पक्ष और सटीक टिप्पणी ही आपके भीतर लेखन का अनुशासन भी लाएगी। बड़े कलाकार खुद अपने सबसे बड़े आलोचक होते हैं और अपनी कमियों को समय–समय पर स्वीकार करते चलते हैं। उदाहरण देखें –

*''मृणाल सेन अपनी फिल्मों के स्वयं सबसे बड़े आलोचक हैं। जैसे अपनी पहली फिल्म 'रात भोरे' के बारे में वह बार–बार कहते हैं 'इट वाज ए बिग डिज़ास्टर'। इसी तरह 'नील आकाशेर नीचे' के बारे में उन्होंने लिखा कि वह ज्यादा भावुक थी और तकनीकी दृष्टि से खराब थी। 'बाइसे श्रावण' को वह आज भी अच्छी फिल्म मानते हैं। लेकिन साफ कहते हैं कि दर्शकों ने इसे स्वीकार नहीं किया। 'भुवन शोम' में बहुत लोगों ने ऐसा समझा कि मृणाल सेन अफसरवाद का मजाक उड़ा रहे हैं। मृणाल सेन ने साफ*

*कहा कि उनका ऐसा कोई इरादा नहीं था। उनका उद्‌देश्य एक हल्की–फुल्की फिल्म बनाकर आनंद लेने और बांटने का था।''*

**के. बिक्रम सिंह ( मृणाल दा, जनसत्ता, 25 मई, 2005)**

### 18.8.3 दृष्टिसंपन्नता

यह एक बड़ा सवाल है कि किसी समीक्षा का मकसद क्या है। जाहिर तौर पर अच्छी समीक्षा न सिर्फ कला जगत में श्रेष्ठ मानी जाती है, उसे आम लोगों तक पहुंचाने का काम करती है, बल्कि वह एक कलाकार की रचना और समाज के बीच सीधे संवाद का माध्यम भी बनती है। अच्छी कला समीक्षाएं ही कलाकृतियों पर बहस को भी जन्म देती हैं। उदाहरण देखें–

*''पहला सवाल तो यही है, क्या किसी अभिनेता या अभिनेत्री को अपनी जगह किसी 'डबल' का इस्तेमाल करने की इजाजत होनी चाहिए? मैं स्टंट दृश्यों या करतब–कलाबाजियों की बात नहीं कर रहा। अभिनय यानी कला की दुनिया में अगर कोई अभिनेत्री मानती है कि वह कुछ दृश्यों में अपनी देह को इस तरह नहीं प्रदर्शित कर सकती, जिस तरह की मांग निर्देशक के अनुसार कहानी की है, तो अन्य स्त्री की देह को उस पर दिखाने का क्या नैतिक औचित्य होगा? यदि निर्देशक यह मानता है कि वह दृश्य आपत्तिजनक या अनौचित्यपूर्ण है, इसलिए मूल अभिनेत्री की देह पर उनसे नहीं फिल्माया जाएगा तो उसे किसी अन्य अभिनेत्री की देह पर फिल्म नैतिक या कलागत तर्क क्या है? यदि उन दृश्यों का कोई कलात्मक महत्व या अनिवार्यता है तो उसमें वास्तविक अभिनेता–अभिनत्री को ही होना चाहिए और यदि कोई कलागत अनिवार्यता नहीं है तो फिर उन्हें फिल्माने की जरूरत क्या है? साफ है कि ऐसे दृश्य उपभोक्ता बाजार की प्रवत्ति को ध्यान में रखकर फिल्माए जाते हैं जैसे कि बहुत से विज्ञापनों में और तब उन पर वही कानून लागू होने चाहिए जो स्त्री देह के आपत्तिजनक प्रर्दशन को लेकर होते हैं।''*

**किशोर आचार्य (एक छोटा सा कलागत सवाल, जनसत्ता, 15 सितंबर 2002)**

## 18.9 कला समीक्षा के अहम पहलू

हमें उम्मीद है कि यहां तक पहुंचने के बाद अखबारों में लिखी जाने वाली कला समीक्षा आपके लिए अपरिचित विधा नहीं रह गई होगी। मगर हमारा आपसे अनुरोध है कि लेखन एक व्यवहारिक विधा है, लिहाजा पाठ्‌यपुस्तक को सिर्फ एक दिशा–संकेतों वाली पुस्तिका मान कर चलें। इसकी मदद से आपको रास्ता खुद तलाश करना होगा। इसके लिए आप अखबारों में छपने वाली कला समीक्षाओं को पढ़ें। इस इकाई में प्रस्तुत बिंदुओं के आलोक में कला समीक्षा का खुद विश्लेषण करें और यह समझने का प्रयास करें कि समीक्षक अपने काम में कितना सफल रहा। आगे हम उन बिंदुओं पर संक्षेप में नजर डालेंगे, जो कला समीक्षा के लिए अपरिहार्य हैं।

### 18.9.1 इतिहास का ज्ञान

*''पशु–पक्षियों के मुखौटों की दृष्टि से रंजीत कपूर की 'खूबसूरत बहू' में बैल, एम.एस सथ्यू की 'बकरी' में बकरी, वालफ्रेम मेहरिंग की 'बिल्ली चली पहनकर जूता' में बिल्ली के मुखौटों के प्रयोग दिलचस्प और मनोरंजक होने के साथ–साथ आलेखों की*

*अनिवार्यता भी थी। इसके विपरीत 'लव लेटर्स' और 'चार दिन' में अरुण कुकरेजा ने मुखौटों का इस्तेमाल अपने निर्देशकीय अधिकार का प्रयोग करते हुए प्रदर्शनों को दृश्यात्मक दृष्टि से व्याख्यायित करने और समृद्ध बनाने के लिए किया था। गिरीश करनाड के नाटक 'हयवदन' में तो घोड़े की मुखौटों की तो ऐसी महत्त्वपूर्ण भूमिका है कि उसके बिना इसकी किसी उल्लेखनीय प्रस्तुति की कल्पना ही नहीं की जा सकती। अपने पूर्णांग होने के लिए बेचैन और दर–दर भटकते हयवदन यानी घोड़े के चेहरे और मनुष्य की देह वाले इस अदभुत चरित्र की कथा देवदत्त और कपिल के माध्यम से संपूर्ण पुरुष की तलाश करती असंतुष्ट एवं अतृप्त पद्मिनी की कथा के समानांतर ही चलती है। यही नहीं, इस नाटक में रचनाकार ने प्रमुख चरित्र देवदत्त और कपिल के सिरों की अदला–बदली के लिए भी मुखौटों की ही कल्पना की है।''*

**जयदेव तनेजा (मुखौटे, रंगकर्म और आज का जीवन, रंग प्रसंग, अक्तूबर–दिसंबर 2004)**

जब हम कला के इतिहास या संदर्भो की बात करते हैं तो हमारा आशय उस जानकारी से होता है जो समीक्षा को अन्य कला प्रस्तुतियों से तुलनात्मक अध्ययन करने, कलाकार के पिछले कामों के परिप्रेक्ष्य में इस नए काम का विश्लेषण करने तथा मौजूदा सामाजिक संदर्भो से जोड़ने में मदद करती है। इससे आपकी समीक्षा दिलचस्प और पठनीय बनती है। पाठकों में नई जानकारी के आलोक में किसी भी कलाकृति का विश्लेषण अच्छा लगता है। उपरोक्त उदाहरण देखें तो जयदेव तनेजा ने सिर्फ मुखौटों का संदर्भ लेकर गिरीश करनाड के नाटक 'हयवदन' का बहुत सुदंर विश्लेषण किया है। ये संदर्भ बदल भी सकते हैं और इस तरह से आपको यह स्पष्ट हो रहा होगा कि किसी भी कलाकृति के विश्लेषण की बहुआयामी संभावनाएं होती हैं। जब आप उन आयामों को पहचानने लगेंगे तो आप एक बेहतर कला समीक्षक के रूप में सामने आ सकते हैं। एक और उदाहरण देखें–

*''एक दिन प्रतिदिन' के बाद मृणाल सेन एक बार फिर नए फिल्मकार के रूप में सामने आते हैं। कोलकात्ता को लेकर बनी उनकी फिल्मों जैसे 'इंटरव्यू' 'कोलकात्ता–7' आदि में एक गुस्सा था और एक अहंकार भी था कि वे असलियत और सत्य को पूरी तरह से समझते हैं और उस सत्य को बेहिचक अपनी फिल्मों में दर्शाते हैं। लेकिन अब उन्हें शंका होने लगी थी कि असलियत या यर्थाथ इतना सरल और एकतरफा नहीं है। इसका सीधा संबंध साम्यवादी विचारधारा में हो रही बहस से था। इटली के एक वामपंथी बुद्धिजीवी इलियो वितरो इस बहस के केंद्र में थे। वितरोनी का कहना था कि कम्युनिस्ट पार्टी में कट्रवादियों की समस्या यह है कि वे समझते हैं कि सत्य उनकी जेब में रखा है, जबकि असली नुक्ता यह है कि सत्य को जेब में रखना नहीं, बल्कि उसकी लगातार तलाश करनी होती है।''*

**के. बिक्रम सिंह (मृणाल दा, जनसत्ता, 25 मई, 2005)**

यहां के. बिक्रम सिंह 'एक दिन प्रतिदिन' में मृणाल सेन की बदली हुई फिल्म भाषा को अतीत में जाकर पहचानने की कोशिश करते हैं और हमें स्पष्ट होता है कि कैसे निर्देशक पर बदलती विचारधाराओं का असर पड़ा और उनकी फिल्म बनाने की शैली में इसका असर दिखाई दिया। गौर करें, क्या इस पृष्ठभूमि के बिना फिल्म 'एक दिन प्रतिदिन' का सार्थक मूल्यांकन हो सकेगा?

### 18.9.2 दृष्टि विकसित करना

कला के प्रति 'दृष्टि' विकसित किए बिना बेहतर समीक्षा नहीं लिखी जा सकती। कला समीक्षा की यह दृष्टि कहीं से आयातित नहीं करता, इसे सतत विकसित करना होता है, इसकी कोई सीमा या अंत भी नहीं है। विधाओं की तकनीकी बारीकियों को सीखना, कला में अंतर्निहित संदेश को समझना और अपने समय और इतिहास की समझ विकसित करने से ही दृष्टि भी बनती है। उदाहरण देखें –

*''अलग–अलग शॉटों को आपस में कई प्रकार से जोड़ा जा सकता है। इसका एक सीधा तरीका यह है कि एक शॉट के समाप्त होते ही दूसरा शॉट शुरू कर दिया जाए। इसे फिल्म की पारिभाषिक शब्दावली में 'कट' कहते हैं। इसमें दर्शकों के ऊपर यह प्रभाव पड़ता है कि एक दृश्य गायब होकर उसके स्थान पर दूसरा दृश्य आ गया। शॉटों को जोड़ने का दूसरा तरीका 'फेड आउट' और 'फेड इन' कहलाता है। इसमें पहला शॉट धीरे–धीरे धूमिल होता हुआ अंधकार में विलीन हो जाता है और अगला शॉट उस अंधेरे से प्रकट होता है। तीसरा तरीका 'डिजाल्व' कहलाता है। इसमें पहले शॉट की सामग्री क्रमशः सिमटती हुई प्रकाश में घुल जाती है और उसकी जगह नए शॉट का दृश्य आ जाता है। चौथा तरीका 'सुपर इंपोजिशन' कहलाता है। इसमें पहले शॉट के दृश्य के ऊपर ही अगले शॉट का दृश्य भी पारदर्शी छाया के रूप में अंकित हो जाता है। फिर पहला दृश्य गायब हो जाता है, और उसके स्थान पर दूसरा दृश्य पूरी तरह व्यक्त हो जाता है। कहानी की दृष्टि से इस प्रकार के अलग–अलग जोड़ों का अलग–अलग महत्त्व है और वे समय अंतराल तथा अन्य प्रकार के अलग–अलग प्रभावों का सृजन करते है। किंतु फिल्म की लय निर्माण के दृष्टिकोण से इनका अपना महत्त्व है और इनके विभिन्न संयोजन लय निर्माण को विभिन्न प्रकार से प्रभावित करते हैं।''*

**कुवंर जी अग्रवाल (फिल्म माध्यम का व्याकरण, रंग प्रसंग अप्रैल–जून 2005)**

उपरोक्त उदाहरण से आपको यह स्पष्ट हो गया होगा कि सिनेमा की तकनीक का उसके कथ्य से कितना गहरा संबंध है। उसके तकनीकी व्याकरण की व्याख्या करते हुए कथ्य में छिपे अर्थ तलाशे जा सकते हैं। एक और उदाहरण देखें –

*''जहां तक सूजा की कला में भारतीय मंदिर, मूर्तिशिल्पों की आकृतियों से, उनकी भंगिमाओं–मुद्राओं –गोलाइयों और सुघड़ता से कुछ सीखने और ग्रहण करने का सवाल है, तो उन्होंने उस प्रभाव को स्वीकार किया है। खजुराहो–कोर्णाक आदि की एक छाप हम सूजा की चित्र भाषा में ढूंढ़ सकते हैं, ठीक वैसे ही जैसे कि हुसैन की चित्र भाषा में भी। वह है ही, पर इसे ढूंढ कर हम फिर यही पाएंगे कि वह भी धार चमकाने वाले अर्थ में ही है– अंततः सूजा और हुसैन की रेखाओं का गठन उनका अपना ही है। यहीं यह याद कर सकते हैं कि यही वे दो आधुनिक भारतीय कलाकार हैं, जिन्होंने रेखाओं को लयात्मकता के साथ ही उसे एक तीक्ष्णता दी। उसे पैना किया और उसमें ऐसी गति भरी की वह अपनी एक ही 'यात्रा' में बहुत कुछ समेट ले। हुसैन, सूजा, रजा के 'प्रोग्रेसिव आर्टिस्ट ग्रुप' ने पश्चिमी आधुनिकता से भी एक संवाद चलाया और रेखा–रंगों के बोध के स्तर पर अपने को कहीं उस आधुनिकता के निकट पाया। इसमें एक ऐसी आधुनिकता की खोज शुरू से रही, बल्कि हुसैन और रजा में तो उसी का वर्चस्व रहा और आज तक है। पश्चिमी आधुनिकता, या कहें पश्चिमी संस्कृति की चित्र भाषा के सरोकार को आज हमें इसी भाषा में देखना चाहिए, चाहे*

*वह पश्चिम की कला हो या पूर्व या समूची विश्व की कला हो, उसके किसी न किसी हिस्से से अपने–अपने समय में, हर कलाकार का कुछ लेन–देन रहता ही है और कला की अपनी एक समकालीनता प्रायः सर्वत्र लक्षित की जा सकती है। यह भी अकारण नहीं है कि स्वयं 'प्रोग्रेसिव आर्टिस्ट ग्रुप' कुछ ही वर्षों में टूट और बिखर गया क्योंकि उसके कलाकार यह देख पा रहे थे कि ग्रुप के संकल्पों या मैनिफेस्टो से स्वयं उनकी अपनी खोज की* ***संगति*** *बैठ नहीं पा रही है।''*

**प्रयाग शुल्क (रजा के चित्रों की उर्जा, जनसत्ता, 23 फरवरी 2003)**

यहां जाने माने कला समीक्षक प्रयाग शुक्ल ने प्रोग्रेसिव आर्टिस्ट ग्रुप के कुछ महत्त्वपूर्ण कलाकारों के बारे में उनकी खुद की कला यात्रा के संदर्भ में समझने का प्रयास किया है। इन कलाकारों के मन में भारतीय और पश्चिमी शैली के बीच का द्वंद्व, समकालीनता से उनकी टकराहट तथा एक नई कला शैली की खोज को सिर्फ इस छोटे अंश में समझा जा सकता है।

### 18.9.3 रचनाएं और रचनाकार

किसी कला विधा को समझने के लिए उसके सर्जक से बेहतर माध्यम और क्या हो सकता है? उससे मिली जानकारी कई किताबों पर भारी पड़ सकती है। इसलिए एक कला समीक्षक को रचनाकारों से सीधे संपर्क का लाभ यथासंभव उठाना चाहिए। इसे इटंरव्यू तक सीमित न रखकर उसका विस्तार उनके सामने आने वाली कला संबंधी चुनौतियों, उनकी नई भाषा की खोज और सामाजिक मूल्यों से उनके अंतर्द्वद्व तक पहुँचने करने का प्रयास करना चाहिए। उनकी अपनी कला दृष्टि के आलोक में प्रस्तुतियों तथा कलाकृतियों को समझने का प्रयास करना चाहिए। उदाहरण देखे–

*''मैंने पढ़ रखा था कि नजीर राह चलते नज्में कहा करते, और छोटे पेशे वाले लोग और भिखारी अक्सर उनसे नज्मों की फरमाइश करते, और वे उनकी बात कभी नहीं टालते। ख्वाब ये अफसाना हो या हकीकत, मुझे ये बात बहुत अच्छी लगी, इससे मेरे ड्रामें को बहुत मदद मिल रही थी। और* ***कलीमे*** *नज़ीर पढ़ने के बाद मैं इस पर* ***ईमान*** *लाने के लिए बिल्कुल तैयार था। चुनांचे ककड़ी वाले के किरदार ने ड्रामे के हीरो की शक्ल इख्तेयार कर ली, और यहीं से मुझे अपने प्लॉट की बुनियाद भी मिल गई और ड्रामे का मंजर भी और उसका* ***उनवान*** *भी! प्लॉट के ऐतबार से ड्रामा अफसानवी हैसियत रखता है, कहानी मनगढंत है, और बहुत छोटी और सीधी सादी। मैंने जोर इस बात पर दिया कि 'खेल' को उस रूप में पेश करूँ कि जो बुनियादी बात नज़ीर के बारे में कहना चाहता हूँ वो ठीक–ठाक और दिलचस्पी के साथ कह पाऊँ।''*

**हबीब तनबीर ('आगरा बाजार' की अहम भूमिका)**

गौर करें हबीब तनबीर के 'आगरा बाजार' की पूरी संरचना को समझने में उनकी भूमिका का छोटा–सा टुकड़ा कितनी मदद करता है। इसमें किरदारों, उनकी भाषा, प्लॉट, और नाटक की प्रस्तुति तक को समझने की कुंजी है। एक और उदाहरण देखें –

*''अच्छी चीज अक्सर कलाकार की जानकारी के बिना, लगभग अचानक बन जाती है। पेंटिंग या कविता से अकेलेपन में ही सही साक्षत्कार हो पाता है। नुमाइश में आजकल लोग बातें करते रहते हैं और साथ–साथ पेंटिंग देखते रहते हैं। ठीक ही कहा गया है*

*कि पेंटिंग का एक अपना पर्दा होता है। जब आप उसे अच्छी तरह से देखें तो वह अपने आप ही खुल जाता है। पेंटिंग की भीतरी तहों तक जाने के लिए प्रेक्षक को रसिक होना चाहिए। आलोचक का काम जजमेंट देना नहीं है। चित्र सूत्र में रसिक को रस का आस्वाद करने वाला सधर्मी और सहृदय कहा गया है।''*

**(जतिन दास, जनसत्ता में विनोद भारद्वाज को दिए साक्षात्कार में)**

इस इंटरव्यू में कला के प्रति जतिन दास के नजरिये में उस कला की पक्षधरता है जो दर्शक से अतिरिक्त संवेदनशीलता की मांग करती है। इससे यह भी स्पष्ट होता है कि जतिन दास कला की सपाटबयानी से इत्तेफाक नहीं रखते।

*''जैसा कि आपने कहा, कहानी गब्बर और ठाकुर और उनकी आपसी लड़ाई के इर्द गिर्द घूमती है, अगर आप इन किरदारों को देखें तो आप पाएंगे कि ये एक–दूसरे से बिल्कुल उलट है। गब्बर मैला–कुचैला है, उसकी दाढ़ी बढ़ी हुई है, वह बड़बोला है, जबकि ठाकुर तो मुश्किल से मुंह खोलता है। ठाकुर बहुत ही साफ–सुथरा, गरिमामय और शांत स्वाभाव का है, जबकि गब्बर डींगे मारने वाला बड़बोला आदमी है। ठाकुर हमेशा से संजीदा से संजीदा हालत को भी हल्का बनाकर पेश करता है। यानी ये दोनों एक दूसरे से नाटकीय रूप से अलहदा है। यह जो आपने 'फंदा खुल गया' डायलाग की बात की, दरअसल यह डायलाग उस सीन का है, जिसमें ठाकुर एक घोड़े पर सवार है और गब्बर का पीछा कर रहा है। गब्बर उससे बचकर भागने की कोशिश करता है लेकिन ठाकुर उसे पकड़ लेता है और उसका गला दबा लेता है। ठाकुर अपने हाथों को गब्बर के गले में एक फंदे की तरह कसता जाता है और कहता है, 'ये हाथ नहीं फांसी का फंदा है, गब्बर' तो इस तरह ठाकुर के हाथ, जबकि बाहें गब्बर के दिलो–दिमाग पर हावी हो जाती हैं। ये वही हाथ थे जिन्होंने उस घोड़े की लगाम पकड़ रखी थी, जिसने उसका पीछा किया, इन्हीं हाथों ने उसके गले को दबोच लिया था, इसलिए गब्बर इन हाथों–कानून के इन हाथों से नफरत करता है।''*

**जावेद अख्तर (नसरीन मुन्नी कबीर को दिए साक्षात्कार में)**

इस बातचीत से आप समझ सकते हैं कि ठेठ रूप से आर्थिक व्यवसाय को ध्यान में रखकर बनाई गई एक अच्छी फिल्म में भी कथानक को कितना बहुस्तरीय बनाने पर जोर होता है। यहां जावेद अख्तर बड़े दिलचस्प ढंग से दोनों किरदारों के विरोधाभास और उसकी वजह से सिनेमा के पर्दे पर उभरने वाले 'कंट्रास्ट' के बारे में जानकारी देते हैं।

## 18.10 कला समीक्षा की भाषा और शैली

*''नौरंगी और रमा के रेलगाड़ी में चढ़ते ही फिल्म के परिदृश्य में नाटकीय मोड़ आता है और यही से गौतम घोष फिल्म को कथापरक बनाने की गरज से खोजी पत्रकारिता की शैली तजकर चरित्राकंन में रुचि लेने लगते हैं। रेलगाड़ी का एक सहयात्री नौरंगी से पूछता है कि कलकत्ता में उनका कोई ठौर–ठिकाना है तो वह अपनी जेब में रखे उस पता–पुर्जे की ओर संकेत करता है। जिसे मास्टर जी के एक मित्र ने उसे संपर्क करने के लिए लिखकर दिया था। कलकत्ता सरीखा विराट नगर और एक–छोटा सा पता–पुर्जा। इन दोनों के सहमेल से फिल्मकार एक अनूठा दृश्यबंध रचते हैं जिसमें महानगर का **संत्रास** अपने चरमोत्कर्ष पर दिखाई देता है। हावड़ा स्टेशन के प्लेटफार्म की भीड़–भाड़, धक्का–मुक्की, और चिल्लापों के बीच नौरंगी के हाथ से अचानक पते*

*का पुर्जा छूट जाता है। बवंडर में एक सूखी पत्ती की तरह पता का पुर्जा रेलयात्रियों के चप्पलों, जूतों, और पैरों के बीच उड़ता–फिरता लिथड़ता रहता है और अंतहीन ठोकरों के बीच नौरंगी विक्षिप्त और उद्भ्रांत–सा उसे दबोचने की अनथक ऐसी चेष्टा करता है कि महानगर में उनकी हालत उसी कागज के पुर्जे–सी होने वाली है, जहां न तो उनका कोई ठौर–ठिकाना होगा और न ही कोई पहचान। मुआवजे में सिर्फ ठोकरें मिलेंगी और अकेलापन। नदी पार करने के दृश्यबंध के बाद फिल्म का यह सर्वाधिक शक्तिशाली दृश्यबंध है।''*

**विनोद दास (अपनी पुस्तक 'भारतीय सिनेमा का अंतःकरण' में)**

गौतम घोष की फिल्म 'पार' पर लिखी गई समीक्षा का यह छोटा सा टुकड़ा अपने आप में एक पठनीय आलोचना भाषा का सुदंर उदाहरण है। यह भाषा कई स्तरों पर काम करती है। यह एक साथ फिल्म को पढ़ने वाले के सामने खोलती है, उसका विश्लेषण करती है और किसी कथा की तरह प्रवाह में पढ़ने वाले को बहा ले जाती है। इस फिल्म के इस दृश्य को जिसमें वह यह स्वीकार करेगा कि उन दृश्यों को पाठकों तक पहुंचाने के लिए इतनी ही सशक्त भाषा की जरूरत थी।

तो भाषा ऐसी हो, जो कलाकृति के बंद दरवाजे खोले। वह पाठकों को उलझाए नहीं, बल्कि उन्हें किसी दिशा में ले जाएं। ऐसी रोशनी में चीजों की व्याख्या करे कि सब कुछ साफ–साफ समझ में आने लगे। विनोद दास फिल्म के उस 'कंट्रास्ट' को पकड़ते हैं, जो कोलकात्ता जैसे महानगर और आज के छोटे से टुकड़े से बनता है। फिल्मकार तो उसका एक संकेत भर देकर आगे बढ़ गया है। यह समीक्षक की भूमिका है कि वह कैसे पूरी फिल्म पर इसके प्रभावों को समझता और उसकी व्याख्या करता है। समीक्षा की भाषा शैली को हम तीन प्रमुख हिस्सों में विभाजित करके बेहतर ढंग से समझ सकते हैं। यह है : प्रस्तुति, विश्लेषण और शीर्षक देना।

## 18.10.1 प्रस्तुति

समीक्षा से परे स्वरूप में प्रभाव छोड़ती है। दिलचस्प शुरुआत, बेहतर विश्लेषण और समझदारी भरा अंत ही किसी समीक्षा को पठनीय बनाता है। अच्छी समीक्षा से ही हम अच्छी कलाकृतियों और कला के संसार से रू–ब–रू होते हैं। विश्व के महान रचनाकारों के करीब जाते हैं। उनकी सोच और शैली को आत्मसात करते हैं। यहां हम एक उदाहरण प्रस्तुत कर रहे हैं, जो ऋत्विक घटक पर लिखी गई समीक्षा से लिया गया है। देखें कि किस तरह समीक्षक ने उसकी जटिल शैली को पाठकों के लिए सहज बनाने का प्रयास किया है –

*''ऋत्विक घटक की फिल्मों के दृश्यांकन का पैटर्न उनकी अभिव्यक्ति का अंग है। 'मेघे ढका तारा' फिल्म में वे सुविचारित लांग शॉट की तकनीक को अपनाते हैं और उनमें चरित्रों को सतत् गतिशील बनाए रखते हैं ताकि दर्शकों की आँख पर न तो ज्यादा जोर पड़े और न ही लांग शॉट की दीर्घावधि से वे ऊबें। सिर्फ यही नहीं, उन्होंने इस लांग शॉट में भी अनेक पैटर्न और फोकस विकसित करने की चेष्टा की है। 'सुवर्ण रेखा' फिल्म में वे छोटे शॉट के तकनीक की ओर मुड़ते हैं और यूनिवर्सल फोकस को केंद्र में रखते हैं ताकि फिल्म की नायिका सीता के चेहरे पर दुख और आक्रोश की बारीक रेखाओं को इतना सुस्पष्ट अंकित किया जा सके कि उसका प्रभाव त्वचा और हड्डियों को चीरते हुए शारीरिक स्तर पर महसूस किया जा सके। उनका सर्वाधिक प्रिय लेंस 18 मिमि था। उनका मानना था कि जितने कम पावर का लेंस*

*होगा, उतनी ही निकट की वस्तुएं दिखाई देंगी और फोकस की व्याप्ति में पर्याप्त वृद्धि हो जाएगी।''*

**विनोद दास (अपनी पुस्तक 'भारतीय सिनेमा का अंतःकरण' में)**

### 18.10.2 विश्लेषण

विश्लेषण किसी भी समीक्षा का सबसे अहम हिस्सा है। इसी हिस्से में हम किसी कलाकृति के बारे में विस्तार से जानकारी हासिल करते हैं और उसे अन्य संदर्भो से जोड़कर देखते है। जरूरी नहीं कि यह खूबी किसी खास कलाकार या रचना पर फोकस करके लिखी गई समीक्षा में हो। आयोजनों और प्रदर्शनियों की समीक्षा को सार्थक, और पठनीय आलोचना के तौर पर विकसित किया जा सकता है। यहां हम एक फिल्म समारोह के 'कवरेज' को बतौर उदाहरण प्रस्तुत कर रहे हैं, जो समारोह विवरण तो प्रस्तुत करती है, इसी बहाने कुछ अहम सवाल उठाते हुए पाठकों को एक खास दिशा में सोचने की ओर भी प्रेरित करती हैं–

*''जर्मनी के संदीप मेहता एक छोटी विडियो–फिल्म लाए हैं और अमेरिका से संजना सिंह तथा पिआ साहनी 11 सितंबर के बाद विदेशी मुस्लिमों की हालत को 'आउट ऑफ स्टेट' शीर्षक विडियो–फिल्म में दिखाती हैं। अमेरिका के ही जॉन जोस्ट 78 मिनट लंबी एक दिलचस्प विडियो–फिल्म लाए हैं– 'छत्तीसगढ़ स्केचेज' जो चित्रकला का विलक्षण इस्तेमाल करती है। लेकिन सबसे दिलचस्प बात यह है कि जो काम भारत को करना चाहिए था वह रोतर्दम के इस फिल्म समारोह ने कर दिखाया– 'कभी हम परिंदे थे' (वन्स वी वर बड़र्स) शीर्षक खंड में वह सात ऐसी फिल्म दिखा रहा है जो रोमा लोगों, जिन्हें 'जिप्सी', 'ईरानी', 'खानाबदोश', 'त्सिगान' या 'त्सिगोइनर' कहा जाता है, के जीवन पर आधारित हैं। और उन्हें रोमा फिल्म निर्देशक ने ही बनाया है। ये रोमां वे भारतीय मूल के घुमंतू लोग हैं, वे शायद एक हजार वर्ष पहले ईरान से होते हुए यूरोप पहुंचे थे और अब लगभग हर यूरोपीय देश में पाये जाते हैं। इनकी भाषा और संस्कृति से स्पष्ट है कि ये भारत के ही हैं। ऐसा कहा जाता है कि मूलतः यह डोम समूह दलित है और डोम ही बदलकर 'रोम' और 'रोमा' हो गया। मेलित्ता चाइकोवस्की और पेपे आजोन की फिल्म जैसलमेर आयो! गेटवे आफ दि जिप्सीज' इन रोमाओं के आदि देश राजस्थान की यात्रा करते हैं। 'आम बारीः ब्रास ऑन फायर' 'लाचोझेम' टेक मी अवे' 'सिनफुल ओसिल्स ऑफ लव' 'इट्स ऑल माई फॉल्ट' तथा 'केनेडी गोज बैक होम' वे अन्य फिल्में हैं जो समसामयिक रोमा जीवन के कई मार्मिक तथा खट्टे–मीठे पहलुओं का चित्रण करती हैं। कुछ वर्षों पहले दिल्ली फिल्मोत्सव में मकदूनियाई रोमाओं पर एक फिल्म दिखाई गई थी, परंतु उसे अलक्षित ही किया गया। आज हम भारतीय 'डायस्पोरा' की बात करते हैं लेकिन असली और पहला भारतीय 'डायस्पोरा' ये हमारे रोमा भाई हैं, जिन्हें हमने भुला दिया है और शायद अब उनकी हालत हमें असुविधाजनक लगे। आज जब भारतीय समाज में दलित अस्मिता का बहुगामी उभार देखा जा रहा है तब हमारे लिए रोमाओं को जानना और उन्हें स्वीकार करना अनिवार्य है। सच तो यह है कि यूरोप के सारे रोमा अपने भारतीय मूल पर गर्व करते हैं और भारतीय से जुड़ना चाहते हैं। रोतर्दम फिल्म समारोह से सबक लेकर हम अपने फिल्मोंत्सव में ऐसी रोमा फिल्मों को नियमित रूप से प्रदर्शित कर*

*सकते हैं। दलितों और दलितों से एकात्मता रखने वालों को भी इस दिशा में सक्रिय होना चाहिए। अभी तो हमारे यहां ही कोई असली दलित फिल्म नहीं बनी है।''*

**विष्णु खरे (बहुत कुछ भारतीय है रोतर्दम फिल्म समारोह में, जनसत्ता, 22 जनवरी, 2004)**

### 18.10.3 शीर्षक

शीर्षक संक्षिप्त और आकर्षक होना चाहिए। बेहतर होगा कि यह कलाकृति के मूल आशय या संदेश को ध्वनित करता हो क्योंकि वह प्रस्तुति ही होती है, जिसके बारे में जानने के लिए पाठक कला समीक्षा की ओर जाता है। इसलिए शीर्षक में किसी किस्म का उलझाव या दुरूहता नहीं होनी चाहिए। उत्सुकता जगाने के लिए थोड़ा घुमावदार शीर्षक चल सकता है, पर यह हमेशा नहीं होना चाहिए। कुछ उदाहरण देखें –

1) **वैकल्पिक दुनिया बनाम आभासी दुनिया (जवरीमल्ल पारख, कथन, अप्रैल–जून 2004)**

   'मैट्रिक्स सिरीज' की फिल्मों पर विश्लेषणात्मक लेख

2) **सिनेमा में डाइरेक्टर 'किंग' है तो स्टेज पर एक्टर (दीप भट्ट, अमर उजाला, 5 जुलाई 2004)**

   थिएटर और सिनेमा के अभिनेता शिवाजी साटम के साक्षात्कार

3) **हिंसक समय में संगीत (शशिभूषण द्विवेदी, अमर उजाला, 5 मई 2003)**

   रोमान पोलास्की की फिल्म 'द पियानिस्ट' पर एक रिव्यू'

   एक और उदाहरण देखें –

4) **कैमरे का कलाकार (अजय कुमार सिंह, जनसत्ता, 6 जनवरी 2002)**

कैमरे में सुब्रतो मित्रा की महारत देखकर ही सत्यजित रे ने अपनी प्रमुख फिल्मों के छायांकन का जिम्मा उन्हें सौंपा था। शैलेंद्र की यादगार हिन्दी फिल्म 'तीसरी कसम' तो उनकी फोटोग्राफी का उत्कृष्ट नमूना है। सिनेमेटोग्राफी से क्या–क्या चमत्कार दिखाए जा सकते हैं, यह उन्होंने कई फिल्मों में सिद्ध कर दिया। फिल्मों में बाउंसिंग लाइट या फिर छायाहीन लाइट का इस्तेमाल पहली बार सुब्रतो मित्रा ने किया था। बाद में यह पद्धति अंतराष्ट्रीय स्तर पर चर्चित हुई और इसे स्वीकृति भी मिली। वे शूटिंग के दौरान किसी तरह का कोई समझौता नहीं करते थे, चाहे शॉट कई बार क्यों न लेना पड़े।

## 18.11 कुछ अन्य महत्त्वपूर्ण टिप्स

*''अंग्रेजी की फिल्म बगैर गाने की चलती हैं, क्योंकि उसकी लंबाई वैसी है। हमारे यहां सिक्वेंस इस तरह इस्तेमाल करते हैं जिस तरह कथावाचक रामायण या महाभारत सुनाते समय बीच में ब्रेक करता है। बीच में गाना आ जाता है... दोहा या चौपाई। यह एक ट्रेडिशन भी है। हमारे नैरेशन में, हमारी वाचिक परंपरा में इसकी बड़ी जगह है। हमारे अवचेतन में गीत है। स्टेज की परंपरा में गाने शामिल हो रहे हैं। जैसे आगा*

*हस्त काश्मीरी के नाटक तीन–चार घंटे के होते थे तो दो या तीन इंटरवल हुआ करते थे। उनमें संगीत की जगह होती थी। कहीं एक स्तर पर रिलीफ भी होता है। एक जैसा कुछ चल रहा है, उसे नई लय एकरसता से ऊपर उठा देती है। फिर गीत संगीत हमारे यहां जिस तरह रोजमर्रा की जिदंगी का हिस्सा है पश्चिम में नहीं है। हमारे यहां दूधवाला भैया, तांगेवाला कोचवान, चाबुक लटकाए हुए भी गाता चलता है। हमारी संस्कृति में एक रवायत है। मां सुबह चौके बरतन पर काम करती है और भजन गुनगुनाती हैं...। चूल्हा अगर बुझाने जा रही है तो गा रही है, 'दिन तो बीता हरी, मेरी शाम पार करा दो'। वो दही बिलो रही है तो भी गा रही है। प्रभाती हमारी पारंपरिक संस्कृति का हिस्सा है। सुबह रंगोली सजाते हुए हम गीत गाते हैं और सांझ पड़े भजन भी हमारे होने पर होते हैं। पश्चिम की जिंदगी को परखकर देखिए, इस तरह जीवन में घुला–मिला संगीत कहां होता है? आप नहा रहे हैं टी.वी चल रहा है या रेडियो चल रहा है, आप गुनगुना रहे हैं। यह जो एक पर्सनल सिंगिंग है अपने–आप के साथ गुनगुनाहट है। यह रोजमर्रा के हिन्दुस्तान में ही नजर आती है।''*

**(गुलजार से लिए साक्षात्कार में)**

समीक्षा एक व्यवहारमूलक विधा है। इसमें कुछ सीधे–सादे नियम तो बनाए जा सकते हैं, मगर नियमों पर पूरी तरह से टिका नहीं जा सकता। गुलजार अपने इंटरव्यू में एक महत्त्वपूर्ण पहलू की तरफ इशारा करते हैं। अगर आप पश्चिमी सिने आलोचना को अपना मार्गदर्शक बनाकर चलें तो गुलजार द्वारा चिह्नित किया गया भारतीय सिनेमा का एक बड़ा पहलू हमसे छूट जाएगा। इसके लिए यह जरूरी है कि हम किसी नियम को अंतिम न मानते हुए उसमें संशोधन और परिमार्जन की गुंजाइश बनाए रखें। यहां हम विद्यार्थियों की सहूलियत के लिए कुछ टिप्स संक्षेप में दे रहे हैं –

- किसी भी प्रस्तुति, फिल्म या कला प्रदर्शनी में जाने से पहले या शुरू होने से कुछ समय पहले उससे संबंधित जानकारी अवश्य जुटा लें। इससे प्रस्तुति के दौरान आपको उसके मुख्य और उल्लेखनीय हिस्सों पर फोकस करने में आसानी होगी।
- नोट्स ज्यादा से ज्यादा बनाएं। प्रस्तुति देखते समय मन में उठने वाले विचारों और टिप्पणियों को नोट करते चलें, बिना यह सोचे कि वे समीक्षा में काम आएंगे या नहीं। यह काट–छांट आप बाद में लिखते समय कर सकते हैं।
- प्रस्तुति खत्म होने के बाद वहां से तत्काल नहीं जाएं, बल्कि थोड़ी देर अन्य दर्शकों, देखने आए दूसरे कलाकारों तथा खुद प्रस्तुति करने वाले निर्देशक या कलाकारों के साथ बातचीत में हिस्सा लें। इससे आपको अपनी समीक्षा लिखने में मदद मिलेगी।
- लिखने से पहले अपने सारे नोट्स दुबारा पढ़ें। इससे स्वतः आपके मन में समीक्षा की रूपरेखा, उसकी शुरुआत, मध्य और अंत का खाका बनने लगेगा। इस थोड़े से परिश्रम से आपके समय की बचत होगी और समीक्षा भी बेहतर बनेगी।
- अंत में अपने लिखे को एक बार अवश्य पढ़ें। कुछ भी खटकने पर उसमें संशोधन से न हिचकें।

## 18.12 सारांश

- इससे ज्यादा और क्या कहा जा सकता है कि वह सारी प्रशंसाओं से परे है, क्योंकि वह महत्वपूर्ण है। वह अकेले फिल्मकार हैं जिसने किसी भी स्थिति में

बिना किसी गफलत के भ्रामक लगने वाली मानवता को फिल्माया। आज लोग कहते है 'चैप्लिन' जैसे वे कहते हैं 'द विंची' या स्पष्ट कहें तो 'द ट्रैप' जैसे 'लियोनार्दो और बीसवीं सदी के सिनेमा के लिए इससे बड़ी सराहना और क्या हो सकती है, जो रोसेलिनी ने उनकी फिल्म 'ए किंग इन न्यूयार्क' को देखकर कही थी, यह आजाद आदमी की फिल्म है।

**विश्व विख्यात फ्रांसीसी फिल्मकार ज्यां लुक गोदार चार्ली चैपलिन के बारे में**

- समाचार पत्रों के लिए फीचर लेखन से संबंधित व्यवहारमूलक पाठ्यक्रम की इस 18वीं इकाई में आपने सिनेमा, रंगमंच और कला प्रदर्शनियों पर लिखी जाने वाली समीक्षा के बारे में जानकारी हासिल की।

- आपने यह समझा कि अच्छी समीक्षा के लिए किन बातों का ध्यान रखने की जरूरत है। साथ ही साथ इन विशिष्ट विधाओं की समीक्षा लिखे जाने के लिए हमें किस तरह दृष्टि और समझ विकसित करनी चाहिए। आपने संक्षेप में कलाओं की पृष्ठभूमि और भारत के आर्थिक –सामाजिक परिदृश्य में आए बदलावों के संदर्भ में इसे समझा।

- आपने कुछ श्रेष्ठ कला समीक्षकों के उदाहरणों को पढ़कर और उनका विश्लेषण करते हुए यह देखा कि वे कौन से प्रमुख बिंदु हैं, जिसकी मदद से एक अच्छी समीक्षा लिखी जा सकती है। साथ ही उसकी भाषा शैली और बनावट पर अलग से विचार किया।

**अभ्यास**

1) सिनेमा और रंगमंच की समीक्षा कैसे लिखें? उदाहरण देते हुए इस शीर्षक से एक निबंध तैयार करें।

.....................................................................................................................

.....................................................................................................................

.....................................................................................................................

.....................................................................................................................

.....................................................................................................................

2) राजकपूर, गुरुदत्त, विमल राय, वी शांताराम, या महबूब में से किसी एक निर्देशक से संबंधित विस्तृत जानकारी हासिल करें। उनसे संबंधित आलेखों की कटिंग, फिल्म समीक्षा और सिनेमा के इतिहास में उनके योगदान पर टिप्पणियां लिखें।

.....................................................................................................................

.....................................................................................................................

.....................................................................................................................

.....................................................................................................................

.....................................................................................................................

3) अपने शहर में होने वाली कला प्रदर्शनी या रंग प्रदर्शनियों की प्रवृति, कलाकारों को पेश आने वाली दिक्कतों पर उनसे बातचीत के आधार पर लेख तैयार करें।

......................................................................................................................................

......................................................................................................................................

......................................................................................................................................

......................................................................................................................................

......................................................................................................................................

## 18.13 बोध प्रश्नों/अभ्यासों के उत्तर

इकाई के गहन अध्ययन के पश्चात स्वयं उत्तर लिखिए।

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

# इकाई 19 साक्षात्कार : तैयारी, संपादन और संयोजन

**इकाई की रूपरेखा**


19.0 उद्‌देश्य

19.1 प्रस्तावना

19.2 साक्षात्कार की तैयारी

- 19.2.1 व्यक्ति का निर्धारण
- 19.2.2 पूर्वानुमति
- 19.2.3 आवश्यक अध्ययन

19.3 साक्षात्कार की सहायक सामग्री

19.4 साक्षात्कार को अन्तिम रूप देना

- 19.4.1 साक्षात्कार का आरंभ
- 19.4.2 केन्द्रीय बिन्दु को उभारना
- 19.4.3 संतुलन कायम करना

19.5 संशोधन और पुनर्लेखन

- 19.5.1 भाषागत सुधार
- 19.5.2 अस्पष्टता और उलझाव को दूर करना

19.6 साक्षात्कार का संरचनात्मक रूप

- 19.6.1 साक्षात्कार के विभिन्न रूप
- 19.6.2 साक्षात्कार लेख रूप में
- 19.6.3 प्रश्नोत्तर रूप में
- 19.6.4 शीर्षक देना

19.7 साक्षात्कार का प्रकाशन

19.8 सारांश

19.9 बोध प्रश्नों/अभ्यासों के उत्तर


## 19.0 उद्‌देश्य

इस इकाई में आप साक्षात्कार की तैयारी, संपादन और संयोजन के संबंध में अध्ययन करेंगे। इस इकाई को पढ़ने के बाद आप :

- साक्षात्कार ले सकेंगे और उसे अंतिम रूप दे सकेंगी/सकेंगे;
- साक्षात्कार में आवश्यक संशोधन और उसका पुनर्लेखन कर सकेंगी/सकेंगे;
- साक्षात्कार को प्रकाशन योग्य रूप में प्रस्तुत कर सकेंगी/सकेंगे; और
- साक्षात्कार का उचित शीर्षक दे सकेंगी/सकेंगे।

## 19.1 प्रस्तावना

व्यवहारमूलक पाठ्यक्रम (समाचार पत्र और फीचर लेखन) की यह उन्नीसवीं और इस खंड की यह तीसरी इकाई है।

इस इकाई में हमने यह बताया है कि साक्षात्कार की तैयारी कैसे करें। साक्षात्कार के लिए आवश्यक है कि आपको जिस व्यक्ति से साक्षात्कार लेना है और जिस विषय पर साक्षात्कार लेना है उनके संबंध में पहले पर्याप्त जानकारी प्राप्त कर लें। साक्षात्कार के लिए जाने से पूर्व उस व्यक्ति से समय निर्धारित कर लीजिए। साक्षात्कार आरंभ करने से पहले साक्षात्कार के विषय और पूछे जाने वाले प्रश्नों पर अनौपचारिक बातचीत कर लीजिए। पूरे आत्मविश्वास और विनम्रता के साथ साक्षात्कार आरंभ कीजिए। संभव हो तो साक्षात्कार रिकार्ड कीजिए, साथ ही नोट भी अवश्य लेते रहिए।

प्रश्न पूछते हुए क्या सावधानी बरतनी चाहिए और प्रति प्रश्न कब और कैसे पूछने चाहिए, इसका ध्यान रखना भी आवश्यक होता है।

साक्षात्कार लेने के साथ साक्षात्कारकर्ता का कार्य समाप्त नहीं हो जाता। अब लिये गये साक्षात्कार का संपादन और संयोजन आवश्यक है ताकि उसे वह रूप दिया जा सके जिसमें उसे पत्र–पत्रिका में प्रकाशित होना है। इस इकाई में इस विषय पर भी विचार किया गया है। साक्षात्कार को अंतिम रूप देते वक्त किन–किन बातों को ध्यान में रखना चाहिए, साक्षात्कार में आवश्यक संशोधन और सुधार कैसे करना चाहिए और उसे किस संरचनात्मक रूप में प्रस्तुत करना चाहिए, इस पर भी इकाई में विस्तार से विचार किया गया है।

इस कार्य के व्यावहारिक ज्ञान के लिए हमने इकाई में पर्याप्त उदाहरण दिये हैं ताकि आप स्वयं यह समझ सकें कि साक्षात्कार को कैसे अंतिम रूप दिया जा सकता है। साक्षात्कार को अंतिम रूप देने के कार्य को आप स्वयं अभ्यासों के माध्यम से सीख सकते हैं। आप अपनी कुशलता बढ़ाने के लिए अपने को सिर्फ अभ्यासों तक ही सीमित न रखें, वरन् अपने मित्रों, परिचितों आदि के इंटरव्यू लेकर आप अपने अभ्यास को लगातार माँजने की कोशिश कीजिए और इस तरह के प्रयास अपने परामर्शदाता को दिखाइए।

## 19.2 साक्षात्कार की तैयारी

साक्षात्कार लेने से पूर्व साक्षात्कारकर्ता को यह जान लेना चाहिए कि उसे इस साक्षात्कार के माध्यम से क्या लक्ष्य प्राप्त करना है अर्थात् साक्षात्कार का उद्देश्य क्या है। क्या साक्षात्कार का उद्देश्य किसी समस्या के विभिन्न पक्षों को उजागर करना है या किसी क्षेत्र विशेष के संबंध में सूचनाएँ लोगों तक पहुँचाना है? आपके साक्षात्कार का उद्देश्य किसी घटना विशेष के संबंध में संबंधित विशेषज्ञों के विचारों को एकत्र करना है या आप किसी महत्वपूर्ण व्यक्ति के व्यक्तित्व से लोगों को परिचित कराना चाहते हैं? आपके साक्षात्कार का जो भी उद्देश्य हो, सबसे पहला प्रश्न यही उपस्थित होता है कि आप साक्षात्कार के लिए सही व्यक्ति का चुनाव कैसे करें।

### 19.2.1 व्यक्ति का निर्धारण

सही व्यक्ति के चुनाव के लिए आवश्यक है कि आपको स्वयं विषय–विशेष या घटना–विशेष से संबंधित तथ्यों की पर्याप्त जानकारी हो। यह कार्य बेहतर ढंग से

तभी संभव है जब वह क्षेत्र–विशेष आपकी अभिरुचि और विशेषज्ञता से संबंधित हो। उदाहरण के लिए, आप किसी क्रिकेट खिलाड़ी का साक्षात्कार लेना चाहते हैं परन्तु आपकी दिलचस्पी क्रिकेट में बिलकुल नहीं है तो आप साक्षात्कारी को अपने प्रश्नों से प्रभावित नहीं कर पायेंगे। हो सकता है, आपकी अनभिज्ञता साक्षात्कारी को असंतुष्ट कर दे।

जब क्षेत्र स्वयं आपकी दिलचस्पी और विशेषज्ञता का होगा तो आप बेहतर ढंग से अपने प्रश्न का निर्माण कर सकेंगे। आपके समझदारीपूर्ण प्रश्नों से साक्षात्कारों को भी इंटरव्यू देते हुए प्रसन्नता होगी और यह भी संभव है कि वह ऐसे प्रश्नों के उत्तर देने के लिए भी तैयार हो जाए जिस पर आम तौर पर वह अपना मत व्यक्त करने को तैयार नहीं होता।

सही क्षेत्र के निर्धारण के साथ यह भी ध्यान रखना चाहिए कि जिस विषय पर आप इंटरव्यू करना चाहते हैं उसकी प्रासंगिकता क्या है। अर्थात् क्या पाठक उस इंटरव्यू को दिलचस्पी के साथ पढ़ेगा? मान लीजिए आप किसी ऐसे विषय पर इंटरव्यू लेते हैं जिसमें उस पत्र–पत्रिका के पाठकों की कोई रुचि नहीं है तो आपका इंटरव्यू अनपढ़ा ही रह जायेगा।

अंत में आपको यह विचार करना चाहिए कि साक्षात्कार के लिए हम किसका चयन करें। यह सोचिए कि उस क्षेत्र विशेष के लिए सही अधिकारी व्यक्ति कौन हो सकता है? और क्या वह सरलता से इंटरव्यू देने के लिए तैयार हो जाएगा, क्या पाठक उस व्यक्ति के इंटरव्यू में दिलचस्पी लेंगे?

मान लीजिए, आप अपने शहर की बिजली व्यवस्था के संबंध में इंटरव्यू लेना चाहते हैं तो कोशिश कीजिए कि बिजली विभाग के सबसे बड़े अधिकारी से आप साक्षात्कार लें। विश्वविद्यालय में छात्रों के प्रवेश संबंधी कठिनाइयों के लिए आप कुलपति से बात करें। बिजली की समस्या पर बिजली उपभोक्ताओं का इंटरव्यू भी ले सकते हैं और प्रवेश के संबंध में छात्रों और उनके संरक्षकों आदि से भी बातचीत कर सकते हैं। इसलिए पहले आपको यह तय करना होगा कि आपको किन–किन से इंटरव्यू लेना है जिनकी राय को जानने में पाठकों की दिलचस्पी होगी।

शुरुआत के लिए आपको अपने आसपास के लोगों का इंटरव्यू लेकर अभ्यास करना चाहिए। आप अपने कॉलेज की फुटबॉल टीम के कप्तान का इंटरव्यू ले सकते हैं। अपने मुहल्ले या कॉलोनी के किसी बुजुर्ग व्यक्ति से रिटायर्ड जीवन की मुश्किलों के बारे में बात कर सकते हैं।

## 19.2.2 पूर्वानुमति

जब आप यह तय कर लें कि आपको किसका इंटरव्यू लेना है तो सबसे पहले आपको उस व्यक्ति से संपर्क करके उससे इंटरव्यू के लिए अनुमति प्राप्त करनी चाहिए। यह कार्य आप व्यक्तिगत मुलाकात, टेलीफोन या पत्र द्वारा कर सकते हैं। अनुमति लेने के लिए आपको अपने इंटरव्यू का मकसद और विषय स्पष्ट करना चाहिए। यह बताना चाहिए कि इंटरव्यू का उद्देश्य प्राप्त करने में साक्षात्कारी का योगदान क्यों महत्वपूर्ण है और किस पत्र–पत्रिका के लिए आप इंटरव्यू लेना चाहते हैं। अनुमति मिल जाने पर आप इंटरव्यू के लिए दिन, समय और स्थान भी साक्षात्कारी के साथ तय कर लीजिए। यह ध्यान रखना चाहिए कि इंटरव्यू के लिए साक्षात्कारी को पर्याप्त समय मिले।

इंटरव्यू का स्थान निर्धारित करते हुए आप साक्षात्कारी को अपने सुझाव दे सकते हैं, लेकिन निर्णय साक्षात्कारी की सुविधा को ध्यान में रखकर ही करना चाहिए। इंटरव्यू के लिए जितना समय तय हो, आप अपने प्रश्नों को उसी समय–अवधि के अनुसार तैयार कीजिए, लेकिन यह भी ध्यान रखिए कि अगर साक्षात्कारी साक्षात्कार के दौरान ही समय अवधि बढ़ाने के लिए तैयार हो जाता है तो आपके पास साक्षात्कार आगे बढ़ाने के लिए पर्याप्त और महत्वपूर्ण प्रश्न होने चाहिए।

### 19.2.3 आवश्यक अध्ययन

इंटरव्यू पर जाने से पहले आपको संबंधित विषय की पर्याप्त जानकारी हासिल कर लेनी चाहिए। तथ्यों की भी जाँचपरख कर लेनी चाहिए और साक्षात्कारी के संबंध में भी सही जानकारी होनी चाहिए। कहीं ऐसा न हो कि आपकी गलत जानकारी या अनभिज्ञता इंटरव्यू के दौरान हास्यास्पद स्थिति पैदा कर दे। विशेष रूप से साक्षात्कारी के संबंध में आपका ज्ञान पूरी तरह से तथ्यों पर आधारित होना चाहिए। इंटरव्यू के दौरान वार्तालाप निम्नलिखित ढंग से चलना चाहिए।

**प्रश्नः** आप लंबे समय तक लोकसभा के सदस्य भी रहे हैं। इस नाते आप इस समस्या के बारे में क्या सोचते हैं?

**उत्तरः** मैं लोकसभा का सदस्य कभी नहीं रहा, सिर्फ एक अवधि के लिए राज्यसभा का सदस्य रहा हूँ।

या

**प्रश्नः** आपने जो कपड़ा नीति लागू की उसके बाद भी कपड़ा उद्योग में कोई सुधार नहीं आया है।

**उत्तरः** देखिए, अभी हमने नई कपड़ा नीति लागू नहीं की है। अभी तो हम पिछली सरकार की कपड़ा नीति की समीक्षा ही कर रहे हैं, उसके बाद ही कपड़ा नीति में परिवर्तन के संबंध में कुछ कहना संभव होगा।

जब साक्षात्कार उपर्युक्तढंग से चलता है तो पाठक की नजर में साक्षात्कारकर्ता की प्रतिष्ठा कम हो जाती है। पाठक यह सोचने लगता है कि साक्षात्कारकर्ता के पास पूरी जानकारी नहीं है। इसलिए जरूरी है कि साक्षात्कारकर्ता को साक्षात्कार से पूर्व आवश्यक अध्ययन और पर्याप्त जानकारी अवश्य प्राप्त कर लेनी चाहिए।

## 19.3 साक्षात्कार की सहायक सामग्री

साक्षात्कार के लिए नोटबुक, पेन या पैंसिल के अतिरिक्त मुख्य उपकरण टेप रिकार्डर है, जिसके प्रयोग के संबंध में हम पिछली इकाई में विचार कर चुके हैं। टेप रिकार्डर का प्रयोग करने से साक्षात्कार के दौरान कही गयी सभी बातें उसी रूप में रिकार्ड की जा सकती हैं। इससे इंटरव्यू के दौरान कही गयी बातों के खंडन से बचा जा सकता है। लेकिन टेप रिकार्डर पर पूरी तरह से निर्भर रहना उचित नहीं है क्योंकि किसी यांत्रिकी खराबी के कारण वह ऐन वक्त पर आपको धोखा भी दे सकता है। इसलिए बेहतर यही है कि आप टेप रिकार्डर के साथ–साथ नोटबुक पर नोट भी लेते रहें। टेप रिकार्डर का प्रयोग करने से पहले उसकी अच्छी तरह से जाँच कर लीजिए। इंटरव्यू से पूर्व ऑडियो कैसेट को भी जाँच कर देख लीजिए और पर्याप्त मात्रा में खाली

ऑडियो कैसेट्स अपने पास रखिए। रिकार्डिंग के लिए सेल (बैटरी) का प्रयोग कीजिए। लंबे इंटरव्यू के दौरान जब बीच में कैसेट बदलनी हो, अगर उस समय साक्षात्कारी से रुकने को कहा जाएगा तो इंटरव्यू में बाधा पड़ती है। इससे बचने के लिए संभव हो तो अपने साथ कोई सहायक ले जाइए जो टेप रिकार्डर का संचालन करे और आप इंटरव्यू के नोट लेते रहें।

टेप रिकार्डर के अतिरिक्त इंटरव्यू के साथ फोटो का इस्तेमाल कर सकते हैं। यह फोटो उत्तरकर्ता का हो सकता है या साक्षात्कार देते हुए उत्तरकर्ता और साक्षात्कारकर्ता का हो सकता है। व्यक्तित्व उजागर करने वाले साक्षात्कार के साथ उस व्यक्ति के जीवन से संबंधित विभिन्न तस्वीरें दी जा सकती हैं। अगर खिलाड़ी है तो खेलते हुए, नेता है तो जनसभा को संबोधित करते हुए, साहित्यकार है तो लिखते हुए साहित्यकार का फोटो दिया जा सकता है। किसी विषय या घटना विशेष के संबंध में लिए गए इंटरव्यू के साथ उनसे संबंधित चित्र दिए जा सकते हैं। जैसे, रेल दुर्घटना या चित्रकला प्रदर्शनी के चित्र। फोटो का चयन करते वक्त यह ध्यान रखना चाहिए कि साक्षात्कार की अंतर्वस्तु के साथ उसका संबंध हो और साक्षात्कार के साथ उसका जाना औचित्यपूर्ण है। इसके साथ ही फोटो के स्तर को भी ध्यान में रखना चाहिए।

अगर फोटो स्पष्ट और दर्शनीय नहीं है तो उसे नहीं देना चाहिए। फोटो के आकार का भी ध्यान रखना चाहिए। फोटो का आकार पत्र–पत्रिका की साइज को ध्यान में रखकर तय करना चाहिए। फोटो के द्वारा आप क्या व्यक्त करना चाहते हैं, इस बात को ध्यान में रखते हुए फोटो का इस्तेमाल करना चाहिए।

इंटरव्यू के साथ आवश्यक हो तो किसी दस्तावेज के महत्वपूर्ण अंश की फोटो प्रतिलिपि दी जा सकती है। किसी लेखक की रचना का अंश दिया जा सकता है, कलाकार की कृति की फोटो प्रतिलिपि प्रस्तुत की जा सकती है। उपर्युक्त सभी सामग्री यथाशीघ्र जुटा लेनी चाहिए। इनके कारण इंटरव्यू के प्रकाशन में विलंब होने से हो सकता है कि वह समयोचित न रहे।

## 19.4 साक्षात्कार को अंतिम रूप देना

साक्षात्कार लेने के बाद प्रेस में देने से पहले उसे अंतिम रूप देना आवश्यक होता है। साक्षात्कार लेते वक्त आपने प्रश्नों का जो क्रम रखा हो, जरूरी नहीं कि वही क्रम आप साक्षात्कार के अंतिम रूप में भी रखें। मुख्य बात यह है कि आप यह देख लें कि इंटरव्यू में आप किस बात को उभारना चाहते हैं। इसके लिए प्रश्नों का कौन–सा क्रम सबसे अधिक प्रभावशाली होगा। अनावश्यक प्रश्नों और उत्तरों को आप हटा भी सकते हैं। अगर प्रश्नों के उत्तर अनावश्यक रूप से लंबे हैं या बातों को दोहराया गया है, तो आप उन्हें संक्षिप्त कर सकते हैं।

### 19.4.1 साक्षात्कार का आरंभ

साक्षात्कार का आरंभ महत्वपूर्ण होता है। आम तौर पर साक्षात्कार सीधे प्रश्नोत्तर से आरंभ नहीं होते। साक्षात्कार के पूर्व भेंटकर्ता या संपादक साक्षात्कार और उत्तरकर्ता के बारे में संक्षिप्त परिचयात्मक टिप्पणी देता है। इस टिप्पणी में वह साक्षात्कार के विषय और उद्देश्य के बारे में बताता है। अगर आवश्यक हो तो साक्षात्कारी के बारे में भी संक्षिप्त परिचय देता है और यह भी स्पष्ट करता है कि उक्त व्यक्ति से ही वह क्यों

साक्षात्कार ले रहा है। इस तरह की टिप्पणी साक्षात्कार के आरंभ में भी दी जा सकती है और साक्षात्कार के साथ एक 'बाक्स' में। यह आरंभिक अंश बहुत अधिक लंबा नहीं होना चाहिए। कभी–कभी जब साक्षात्कार के बारे में अलग से कुछ कहने की आवश्यकता नहीं होती तो एक–दो पंक्तियों में ही टिप्पणी दी जा सकती है। जैसे –

*''प्रसिद्ध जनकवि और साहित्यकार श्री केदारनाथ अग्रवाल को 1986 के साहित्य अकादेमी पुरस्कार से गत 23 फरवरी को नई दिल्ली में सम्मानित किया गया। प्रस्तुत है उनसे जया बतरा की अनौपचारिक बातचीत।''*

उपर्युक्त टिप्पणी छोटी अवश्य है पर इसमें सभी आवश्यक सूचनाएं आ गयी हैं।

उत्तरकर्ता का परिचय : प्रसिद्ध जनकवि और साहित्यकार श्री केदारनाथ अग्रवाल

**साक्षात्कार का कारण** : साहित्य अकादेमी पुरस्कार

**साक्षात्कार का अवसर** : पुरस्कार–प्राप्ति का अवसर

**साक्षात्कारकर्ता** : जया बतरा।

कभी–कभी साक्षात्कारकर्ता साक्षात्कार से पूर्व उन स्थितियों का वर्णन भी करता है जिनके बीच साक्षात्कार संपन्न हुआ। इससे साक्षात्कार या साक्षात्कारी से संबंधित कुछ महत्वपूर्ण पहलू प्रकाश में लाये जा सकते हैं। 22 मार्च 1987 को **नवभारत टाइम्स** ने हिन्दी कवि नागार्जुन के साथ एक 'बातचीत' प्रकाशित की। इसके आरंभ में भेंटकर्ता ने नागार्जुन जिस कॉलोनी में रहते थे, उसका परिचय दिया और बातचीत के आरंभ के माहौल का वर्णन किया। यह पूरा वर्णन अन्यंत रोचक, आत्मीय और साहित्यिक शैली में प्रस्तुत किया गया है–

*''महानगर की सपाट चिकनी चौड़ी सड़कों का सिलसिला दूर पीछे छूट गया है। बस भजनपुरा स्टॉप से करावल नगर जाने वाली सड़क थमकर सादतपुर में दाखिल होती है और अचकचाकर रुक जाती है। सादतपुर में कितने ही साहित्यकारों के घर हैं। रास्ते में कुछेक लोगों से बाबा का पता पूछने पर लोग उत्साह से बताते हैं, 'वो पेड़ देख रहे हैं न, बस वहीं,।' अरहर के झाड़, बैंगन की पौंध, मुली की क्यारियों के बीच बाबा धूप का स्वागत कर रहे हैं। मैं दाखिल होती हूँ 'आ गई हो' फिर से तंग करने।*

*मैं मुस्कराती हूँ।*

*मैं ज्यादा नहीं बोल सकता' बाबा फिर मुझे बैठने का इशारा करते हुए बोलते हैं। 'मेरा हाल तो तुम देख ही रही हो।' आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के शब्द मन में कौंधते हैं। 'जिस व्यक्ति के सामने बैठकर आपको यह न लगे कि आप छोटे हैं तो वही व्यक्ति महान।*

*फिर मैं बिना देर किये अपनी जिज्ञासाएं बाबा के समक्ष उड़ेलने लगती हूँ।''*

कभी–कभी महत्वपूर्ण व्यक्तियों से बातचीत का समय पाना बड़ा कठिन होता है। अत्यधिक व्यस्तता, अस्वस्थता या अन्य कारण से ऐसे व्यक्ति आमतौर पर साक्षात्कार देने के लिए तैयार नहीं होते। लेकिन इस स्थिति में भी अगर आप इंटरव्यू लेने में सफल हो जाते हैं तो आरंभिक टिप्पणी में इसका उल्लेख अवश्य किया जाना चाहिए। इससे पाठकों को यह मालूम हो सकेगा कि साक्षात्कार किन परिस्थितियों में लिया गया। 22 नवम्बर, 1987 को **नवभारत टाइम्स** में हिन्दी कवि हरिवंशराय बच्चन का

साक्षात्कार प्रकाशित हुआ था। श्री बच्चन उस समय अस्वस्थ थे। फिर भी भेंटकर्ता श्री कन्हैयालाल नंदन को साक्षात्कार देने के लिए तैयार हो गये। इसकी चर्चा साक्षात्कार के साथ प्रकाशित संपादकीय टिप्पणी में दी गयी है।

*"बच्चन जी इस बार जब से अस्वस्थ हुए काफी कुछ दिनचर्या में परिवर्तन हो गया। लोगों से मिलना–जुलना जो पहले से ही कम हो गया था, और कम हो गया। अशक्तता के कारण बोलने में भी कष्ट होने लगा, लिखने में हाथ का कंपन आड़े आने लगा... ऐसे में बच्चन जी ने मिलने का अवसर दिया, यह नवभारत टाइम्स के लिए गौरव की बात है। इसी 28 नवम्बर को बच्चन जी अपने जीवन के 80 वर्ष पूरे कर रहे हैं। उस अवसर पर प्रस्तुत है, उनके नई दिल्ली स्थित गुलमोहर पार्क के निवास स्थान पर हुई यह बातचीत, जो अपने देश और परिवेश के प्रति बच्चन जी के मन–मस्तिष्क की सजगता का एक बिंब प्रस्तुत करती है। बातचीत के समय तेजी जी साथ बैठी रहीं और बराबर उनकी देखभाल पर पूरा ध्यान देती रहीं। बातचीत का प्रारंभ हुआ उनके प्रति शुभकामना से।"*

साक्षात्कार में यह अत्यंत महत्वपूर्ण होता है कि पहला प्रश्न क्या पूछा जाए। पहला प्रश्न मात्र औपचारिक भी हो सकता है।

*"आपके अस्सी वर्ष के हो जाने पर हम हिन्दी संसार की ओर से आपको शतायु होने की कामना भेंट करते हैं और यह जानना चाहते हैं कि आप इन दिनों में क्या सोचते रहते हैं, कैसा अनुभव करते हैं?"*

अक्सर देखा गया है कि साक्षात्कार का पहला प्रश्न बहुत साधारण होता है। जरूरी नहीं है कि शुरू में ही आप कोई बहुत गहरा या उत्तेजक प्रश्न कर दें। अगर आप टेप पर बातचीत रिकार्ड कर रहे हैं तो शुरू में इधर–उधर के सवाल करें। बातचीत जब अपने रंग में आ जाए, तभी टेप ऑन करें।

कभी–कभी आप यह भी महसूस कर सकते हैं कि भेंटवार्ता को किसी दिलचस्प या चौंकाने वाली बात शुरू में ही रख दी जाए ताकि पाठक तुरन्त पढ़ने के प्रति आकर्षित हो। इन दिनों अखबारों और पत्र–पत्रिकाओं में इस तरह की भेंटवार्ताएं लोकप्रिय हो रही हैं। लेकिन अगर आप किसी गंभीर साहित्यिक पत्रिका, पुस्तक या अकादेमिक उद्देश्य के लिए भेंटवार्ता लिखने जा रहे हैं, तो शुरू में ही विवादास्पद या चौंकाऊ बात से भरसक बचें। लोकप्रिय पत्रिका में प्रकाशित भेंटवार्ता में जो सवाल शुरू में अच्छा लगेगा, वह गंभीर साहित्यिक पत्र में खराब भी लग सकता है।

कोई ऐसा सवाल शुरू में नहीं रखिए जो व्यक्ति को नाराज कर दे या उसका मूड बिगाड़ दे। शुरू में 'नर्म' सवाल रखिए, 'गर्म' सवालों के लिए पहले सही माहौल बनाइए। मौका पड़ने पर उन्हें भी पूछिए। बाद में लिखते वक्त आप स्वतंत्र हैं कि प्रश्नों का क्रम थोड़ा अपने सुविधानुसार उलट–पुलट दें। लेकिन लंबी बातचीत में तथाकथित गर्म सवाल बाद में ही रखिए। भारतीय संगीत में विलंबित से द्रुत में जाने का क्रम इस तरह की बातचीत के लिए श्रेष्ठ है। लेकिन छोटे साक्षात्कार में आप पश्चिमी शास्त्रीय संगीत की तरह तेज गति से शुरू होकर फिर धीमी गति में आ सकते हैं।

मिसाल के तौर पर, एक लेखक से 'आपने लिखना कब शुरू किया' सरीखा सीधा और बुनियादी सवाल आप एक लंबी बातचीत में शुरू में ही रख सकते हैं। पर एक छोटी बातचीत में आपको साक्षात्कार के मूल मंतव्य से ही आरंभ करना होगा।

### 19.4.2 केन्द्रीय बिन्दु को उभारना

साक्षात्कार आरंभ होने के बाद प्रश्नों का सही सिलसिला बनाते हुए अपनी बात आगे बढ़ाइए। आपके प्रश्न एक दूसरे से जुड़े हुए और उस केन्द्रीय बिंदु को उभारने वाले होने चाहिए जिसे उभारना आपके साक्षात्कार का उद्देश्य है। लंबी बातचीत का दायरा विस्तृत होता है इसलिए यह संभव है कि वहाँ किसी एक क्षेत्र या विषय पर ही आप प्रश्न न पूछे। लेकिन ऐसी बातचीत में भी यह पूर्व निश्चित कर लेना चाहिए कि आप किन–किन विषयों पर क्या–क्या पूछना चाहेंगे। छोटी बातचीत तो किसी भी स्थिति में निरुद्देश्य नहीं होनी चाहिए। आपके प्रश्न सधे हुए और सीधे होने चाहिए। उदाहरण के लिए, 1987 में आयोजित रिलायंस कप (क्रिकेट प्रतियोगिता) के अवसर पर विभिन्न पत्र–पत्रिकाओं ने विभिन्न क्रिकेट खिलाड़ियों के इंटरव्यू प्रकाशित किये। ये इंटरव्यू 'रिलायंस कप' प्रतियोगिता के अवसर पर लिये गये थे, इसलिए प्रश्न भी प्रायः उसी से संबंधित पूछे गये। नीचे कपिल देव (इंडिया टुडे, 15 अक्टूबर 1987) से पूछे गये कुछ प्रश्नों को देखकर आप इस बात को समझ सकते हैं :

- रिलायंस कप में भारत की संभावनाएं क्या हैं?
- ठीक है, पर कौन–सी टीम प्रमुख प्रतिद्वंद्वी साबित होगी?
- क्या आपके आत्मविश्वास का कारण भारत को पाकिस्तान या वेस्टइंडीज की तुलना में आसान पूल मिलना भी है?
- आप कहते हैं एक दिन के क्रिकेट में कुछ भी हो सकता है। फिर भारत की जीत का इतना भरोसा कैसे?

उपर्युक्त प्रश्नों से ही स्पष्ट है कि भेंटकर्ता का उद्देश्य रिलायंस कप के संदर्भ में प्रमुख भारतीय खिलाड़ी कपिल देव से भारत की जीत की संभावनाओं का पता लगाना है। शुरू के इन चार प्रश्नों से ही स्पष्ट है कि सारी बातचीत इसी उद्देश्य के इर्द–गिर्द हुई। कभी–कभी किसी खास अवसर पर लेखक से लंबी बातचीत भी आयोजित की जा सकती है। जैसे, भीष्म साहनी के उपन्यास 'तमस' पर इसी नाम से टी.वी. सीरियल दूरदर्शन से प्रसारित हुआ तो उस समय जो विवाद उठा था, उस संदर्भ में भीष्म साहनी, निर्देशक गोविंद निहलानी और सीरियल से जुड़े अन्य कलाकारों के इंटरव्यू भी प्रकाशित हुए। हिन्दी साप्ताहिक 'रविवार' ने भी भीष्म साहनी, निर्देशक गोविंद निहलानी आदि के इंटरव्यू प्रकाशित किए थे। भीष्म साहनी से लंबा इंटरव्यू लिया गया, लेकिन पूरा इंटरव्यू सिर्फ 'तमस' सीरियल के बारे में ही था। सारे प्रश्न उसी से संबंधित पूछे गये थे।

### 19.4.3 संतुलन कायम करना

इंटरव्यू असंतुलित नहीं होना चाहिए। साक्षात्कार लेते समय यह अवश्य ध्यान रखें कि कोई महत्वपूर्ण पहलू छूट न जाए। ऐसा तभी संभव होता है जब हम प्रश्नों का निर्धारण करने में असफल होते हैं या भेंटवार्ता एक ही बिंदु पर अटक जाती है या गैर–जरूरी बातचीत में अधिकांश समय निकल जाता है। अगर इंटरव्यू में गैर जरूरी वार्तालाप भी शामिल है तो आप लिखते समय ऐसी बातचीत को हटा दीजिए। इंटरव्यू में प्रश्नों और उत्तरों को सही सिलसिला दीजिए और किस विषय को कितना अंश दिया जाना आवश्यक है, यह तय करके पुरे इंटरव्यू में संतुलन कायम कीजिए। अगर एक ही विषय के विभिन्न पक्षों को छुआ गया है तो उसे तार्किक क्रम दीजिए ताकि

पूरी बातचीत असंबद्ध न लगे। अगर कई विषयों को बातचीत में समेटा गया है तो एक विषय से दूसरे विषय में प्रवेश करते वक्त उनमें संबंध स्थापित करने की कोशिश कीजिए। सभी विषयों और क्षेत्रों को किसी एक उद्देश्य के अंतर्गत रखने की कोशिश कीजिए ताकि साक्षात्कार बिखरा–बिखरा न लगे।

इंटरव्यू के अंतिम प्रश्न का अपना महत्व होता है। आपकी बातचीत किस बिंदु पर खत्म हो, यह आप ही तय कर सकते हैं। अंतिम प्रश्न से ऐसा नहीं लगना चाहिए कि बातचीत अधुरी रह गयी है। जिस तरह से कुछ कहानीकार आखिरी वाक्य में ही कहानी के सारे तनाव को सीमित करते हैं, उसी तरह से भेंटवार्ता में भी आखिरी सवाल कभी नीरस नहीं होने चाहिए। वास्तविक भेंटवार्ता का अंत कैसे भी हुआ हो, पर उसको लिखते समय अंत का चुनाव ध्यान से करें। साक्षात्कार के अंत तक पहुँचते–पहुँचते पाठक को यह अनुभव होना चाहिए कि साक्षात्कार पढ़ने से उसे नयी जानकारी, नया दृष्टिकोण प्राप्त हुआ है। एक तरह का संतोष उसे अनुभव होना चाहिए। इसलिए पूरे इंटरव्यू की योजना और उसकी प्रस्तुति सोच–समझकर बुद्धिमता के साथ करनी चाहिए।

**बोध प्रश्न–1**

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर संक्षेप में दें:

1) साक्षात्कार के साथ दी जाने वाली तस्वीरों के संबंध में क्या–क्या बातें ध्यान में रखनी चाहिए?

........................................................................................................................

........................................................................................................................

........................................................................................................................

........................................................................................................................

2) प्रकाशन से पूर्व साक्षात्कार में निम्नलिखित परिवर्तन किए जा सकते हैं। इनमें से सही परिवर्तन के आगे सही (√) और गलत के आगे (x) गलत का चिह्न लगाइए।

क) प्रश्नों का क्रम बदल सकते हैं। ( )

ख) जो बात आपको अनुचित लगे उसे हटा सकते हैं। ( )

ग) दोहराई गयी बातों को संपादित कर सकते हैं। ( )

घ) संक्षेप में कही गयी बातों को आप अपने ढंग से विस्तार दे सकते हैं। ( )

ड) कुछ नये प्रश्न जोड़ सकते हैं। ( )

3) साक्षात्कार के आरंभ में दी जाने वाली संक्षिप्त टिप्पणी में किन बातों को शामिल करना चाहिए?

........................................................................................................................

........................................................................................................................

........................................................................................................................

........................................................................................................................

4) आरंभ में ही 'गर्म' सवाल पूछने से क्यों बचना चाहिए?

........................................................................................................................................

........................................................................................................................................

........................................................................................................................................

........................................................................................................................................

........................................................................................

## 19.5 संशोधन एवं पुनर्लेखन

जब साक्षात्कार का लेखन आरंभ करें तो उसे कई स्तरों पर आपको सुधारना और संवारना होगा। सबसे पहले तो आपको यह तय करना होगा कि आप साक्षात्कार को कैसे प्रस्तुत करेंगे। आप अपनी बातचीत के आधार पर लेखनुमा साक्षात्कार तैयार कर सकते हैं या फिर प्रश्नोत्तर को प्रश्नोत्तर के रूप में ही रख सकते हैं।

इसके बाद आपको अपने उद्देश्य के अनुरूप साक्षात्कार को संशोधित करना होगा। आपके इंटरव्यू का मूल मंतव्य उजागर हो, ऐसे प्रश्नों और उनके उत्तरों को आपको प्रमुखता देनी होगी। अनावश्यक प्रश्नोत्तरों को छाँट देना होगा। पत्र–पत्रिका में जो स्थान उक्त साक्षात्कार के लिए निर्धारित है यानी जितने शब्दों में इंटरव्यू प्रकाशित होना है, उसके अनुसार प्रश्नोत्तरों को संपादित करना होगा। अगर प्रश्न लंबे हैं तो उन्हें छोटा करना होगा। उत्तर में भी अनावश्यक बातें हटानी होंगी। लेकिन यह ध्यान रखना होगा कि बातचीत का अर्थ और संदर्भ न बदले। एक अच्छा संपादक साक्षात्कार में व्यर्थ के दोहराव के प्रति सजग होता है। अक्सर ऐसा देखा गया है कि जिन साक्षात्कारों को पाँच पृष्ठों में छपना चाहिए था, वे दस पेज की जगह घेरते हैं। इससे पाठक पर साक्षात्कार का प्रतिकूल असर पड़ता है।

दुर्भाग्यवश, आज महावीर प्रसाद द्विवेदी सरीखे संपादक नहीं हैं जो आपकी भेजी हुई सामग्री पर काफी काम करें। उसका पुनर्लेखन करें। आप जो भेजते हैं अक्सर वही ज्यों का त्यों छप जाता है। इसलिए जरूरी है कि आप बहुत निर्मम होकर लिखित सामग्री का संपादन स्वयं करें। बहुत सी बातें बातचीत में अच्छी लगती हैं, पर छपने पर वे ऊब पैदा कर सकती हैं। लिखे, छपे और बोले हुए वाक्यों में बारीक भेद के प्रति सजग रहिए। साक्षात्कार में यह सजगता आवश्यक हो जाती है।

### 19.5.1 भाषागत सुधार

साक्षात्कार में भाषागत सुधार आवश्यक है। लेकिन इस का अर्थ यह नहीं है कि आप साक्षात्कारी की भाषा को बदल दें। साहित्यकार, कलाकार आदि बातचीत में भी भाषा का विशिष्ट ढंग से प्रयोग करते हैं। उनकी बातचीत की इस विशिष्ट शैली को साक्षात्कार में सुरक्षित रखने की कोशिश करनी चाहिए। दिनमान के 4–10 दिसंबर, 1983 के अंक में अज्ञेय द्वारा महादेवी वर्मा से लिए गये साक्षात्कार में आप महादेवीजी की भाषा की विशिष्टता को स्पष्ट पहचान सकते हैं –

*''इस पर सोचा नहीं। परिवर्तन आना है, आया, भाषा में भी आया, छंद में भी आया, लेकिन संस्कार पुराना ही रहा होगा क्योंकि फिर गीत लिखने का लोभ तो था ही और गीत में छंद न हो, गुनगुनाया न जाए, गाया न जाये तो किसी काम का नहीं होगा। लंबी कविताएँ कम हैं मेरी। जो हैं गीत में हैं। बहुत विस्तार हो भी नहीं सकता और*

*क्योंकि भावाकुलता कुछ क्षणों में रहती है हमेशा नहीं रह सकती। तो जो कविता वैचारिक है उसके लिए तो वह समय है, लेकिन गीत के लिए भाव में तीव्रता है, और कुछ तो है नहीं।''*

साहित्यकारों के अतिरिक्त भी अन्य विशिष्ट लोगों के शब्द प्रयोग या वाक्य रचना या जुमले का उसी रूप में प्रयोग करना चाहिए जिस रूप में कहा गया था। उनको बदलने से बात का अर्थ या प्रभाव बदलता है लेकिन इन बातों के अतिरिक्त भाषा में बदलाव किया जा सकता है। जैसे, अनावश्यक विस्तार को कम करने के लिए, चुस्त वाक्य रचना के लिए, भाषा में उलझाव और अस्पष्टता समाप्त करने के लिए अंग्रेजी या क्षेत्रीय शब्दों का अनावश्यक प्रयोग कम करने के लिए भाषा में सुधार आवश्यक है।

भाषा में सुधार करते हुए उत्तरकर्त्ता की बातों में जरा भी हेर–फेर नहीं होना चाहिए। उन शब्दों को नहीं बदलना चाहिए, जिसे उत्तरकर्त्ता ने बल देते हुए प्रयोग किया है। भाषा में व्याकरणगत त्रुटियों को दूर कर लेना चाहिए। वाक्य विन्यास को चुस्त–दुरुस्त कर लेना चाहिए। बातों के अनावश्यक विस्तार और दोहराव वाले वाक्यों और शब्दों को काट–छाँट देना चाहिए।

भेंट के समय कही गयी सभी बातों को साक्षात्कार लिखते समय शमिल करना आवश्यक नहीं है या इस तरह के वाक्य : 'डॉक्टर साहब मुझे आपसे बातचीत करते हुए खुशी हो रही है।' या प्रश्नों का अनावश्यक विस्तार : 'आपने' 'तमस' उपन्यास लिखा। स्वतंत्रता आंदोलन की पृष्ठभूमि में सांप्रदायिकता की समस्या को आधार बनाकर लिखे गए इस उपन्यास में आपने विभिन्न सांप्रदायिक ताकतों की घिनौनी भूमिका पर विस्तार से प्रकाश डाला है। अब इस उपन्यास को सीरियल के रूप में दूरदर्शन के परदे पर प्रस्तुत किया गया है। आप बतायेंगे कि आपको कैसा महसूस हो रहा है? लिखते समय प्रश्न को इतने विस्तार से लिखने की आवश्यकता नहीं है। केवल इतना भर कहना पर्याप्त है, कि 'तमस' को परदे पर देखकर आपको कैसा महसूस हो रहा है?' इस प्रश्न के उत्तर में लेखक द्वारा कही गयी बात ही प्रश्न को और अधिक स्पष्ट कर देगी।

इसी प्रकार किसी प्रश्न के उत्तर में उत्तरकर्त्ता अपनी बात विस्तार से कह सकता है, लेकिन साक्षात्कार में संशोधन करते समय आप उसे संक्षिप्त कर सकते हैं।

प्रश्नों को लिखते समय क्रमबद्धता का ध्यान अवश्य रखें। जैसे, अंतिम सवाल के बाद बातचीत समाप्त हो जानी चाहिए लेकिन उसके बाद भी दो–तीन प्रश्न पूछे जाते हैं तो लिखित रूप में यह सावधानी अवश्य रखें कि साक्षात्कार के बीच में कहीं 'अंतिम प्रश्न' न आ रहा हो।

### 19.5.2 अस्पष्टता एवं उलझाव को दूर करना

साक्षात्कार के प्रश्नोत्तरों में कई बार उलझाव और अस्पष्टता बनी रहती है। इससे पाठकों को साक्षात्कार में कही गयी बात को समझने में कठिनाई महसूस होती है। निम्नलिखित अंश को देखिए : जहाँ तक कविता का प्रश्न है, वह प्रभाव छोड़ भी सकती है, नहीं भी छोड़ सकती है परंतु मैं सोचता हूँ शायद छोड़ सकती है या कहना चाहिए छोड़ती है। प्रभाव छोड़ने के साथ–साथ संस्कार भी छोड़ती है। संस्कार और प्रभाव दोनों छोड़ती है। मैं समझता हूँ कि अच्छी कविता तो अवश्य प्रभाव छोड़ेगी

यद्यपि यह आप पर निर्भर करेगा कि आप पर कितना प्रभाव पड़ा है और इसका प्रभाव का स्वरूप क्या है और प्रकृति क्या है और रूपरेखा क्या है? कहने का अर्थ यह है कि कविता तो प्रभाव छोड़गी परंतु किस रूप में कुछ निश्चयपूर्वक कहना कठिन है।

उपर्युक्त उत्तर में उत्तरकर्त्ता की भाषा सरल है परंतु प्रश्न का क्या उत्तर दिया जाय यह स्पष्ट न होने के कारण उसने अपनी बात को उलझाकर रख दिया है। यह भेंटकर्ता (या संपादक) का दायित्व है कि वह उत्तर पुनर्लेखन करे। जैसे उपर्युक्त अंश को निम्नलिखित रूप में संपादित किया जा सकता है :

जहाँ तक कविता का प्रश्न है वह प्रभाव तो छोड़ती है और संस्कार भी छोड़ती है, लेकिन गठन पाठक की क्षमता पर निर्भर करेगा।

कभी–कभी दुरूहता विचारों में नहीं भाषा में होती है।निम्नलिखित अंश को देखिए –

*"रचना की विश्वसनीयता व्योम और काल के स्थूल निर्देशांकन के सुस्थापन में अपनी इयत्ता को नहीं विलीन करती। जिनके व्योमकाल निर्देशांक आग्रह सर्वातिशायी हैं। वे भी जिस एक स्तर पर इसे स्वीकार करने को सर्वथा विवश है, वह है भाषा का स्तर।"*

उपर्युक्त भाषा में प्रयुक्त अप्रचलित और संस्कृतनिष्ठ शब्दों से अर्थ समझने में कठिनाई आई है। ऐसी कठिनाई अत्यधिक अंग्रेजी शब्दों के प्रयोग से भी आ सकती है। उन्हें आवश्यकतानुसार हिन्दी शब्दों में बदलकर सुरक्षित रखना चाहिए। मान लीजिए, आपने सुप्रसिद्ध चित्रकार मकबूल फिदा हुसैन से बातचीत की। उन्होंने अंग्रेजी शब्दों का खूब इस्तेमाल किया। खिचड़ी भाषा में बातचीत हुई। अब यह आप पर निर्भर है कि मूल बातचीत के स्वाद को बचाने के लिए कहीं–कहीं तो खिचड़ी भाषा को ज्यों–का–त्यों इस्तेमाल कर लें। पर अगर आप भेंटवार्ता हिन्दी में रिपोर्ट कर रहे हैं तो बहुत से शब्दों का अनुवाद करें। व्यक्ति की बातचीत के अंदाज की रक्षा भी जरूरी है, पर उसमें आवश्यक फेरबदल भी जरूरी है।

**बोध प्रश्न –2**

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर संक्षेप में दें:

1) साक्षात्कार को संशोधित करने के कुछ प्रमुख कारणों को बताइए।

.............................................................................................................

.............................................................................................................

.............................................................................................................

.............................................................................................................

2) साक्षात्कार की भाषा में सुधार करते हुए निम्नलिखित में से किन–किन में सुधार आवश्यक है। 'हाँ' या 'नहीं' में उत्तर दीजिए।

क) भाषागत विशिष्टता (हाँ / नहीं)

ख) ढीले–ढाले वाक्य (हाँ / नहीं)

ग) भाषागत उलझाव (हाँ / नहीं)

घ) व्याकरणगत त्रुटि (हाँ / नहीं)

ड.) खास अर्थ में प्रयुक्त शब्द (हाँ / नहीं)

3) किसी विशिष्ट व्यक्ति की बातचीत को संपादित करते हुए उसकी भाषा में किस तरह के परिवर्तन किए जाने चाहिए और किस तरह के नहीं?

.......................................................................................................

.......................................................................................................

.......................................................................................................

.......................................................................................................

## 19.6 साक्षात्कार का संरचनात्मक रूप

पश्चिम में कुछ समीक्षकों ने आलोचक की भूमिका 'दाई' के रूप में परिभाषित की है लेकिन भेंटवार्ता के संदर्भ में देखें, तो भेंटवार्ताकार की भूमिका भी एक दाई की ही तरह होती है। उसे खुद संतान नहीं पैदा करनी है पर उसे पैदा कराने में उसकी बड़ी महत्वपूर्ण और केन्द्रीय भूमिका है। भारत में, खास तौर पर हिन्दी में अभी साक्षात्कार विधा बहुत विकसित हैं। इसके अनेक कारण हैं। मिसाल के लिए, भारत में अभी पश्चिम की तरह जीवनी और आत्मकथा सरीखी विधाएँ बहुत विकसित नहीं हैं। एक वजह यह भी है कि हम अपने बारे निर्मम होने की क्षमता बहुत कम रखते हैं। अपनी गलतियों, अपराध भावनाओं, कुंठाओं आदि से हम साक्षात्कार नहीं कर पाते। अपने को आदर्श रूप में ही हम रखना चाहते हैं। इस वजह से हमारे यहाँ साक्षात्कार विधा का भी पूर्ण विकास नहीं हो पाया है।

कहा जाता है कि अच्छी और गहरी भेंटवार्ता के लिए वार्ताकार को 'वकील, जासूस और संवाददाता' की मिलीजुली भूमिका निभानी होती है। जाहिर है कि यह एक मुश्किल भूमिका है। इन गुणों में एक गुण मनोविश्लेषक का भी है। एक अच्छा मनोविश्लेषक 'रोगी' को सामने बिठा कर उसे अपनी बात कहने का पूरा मौका देता है। कभी वह उसे टोकता है, रोकता है, कभी प्रोत्साहित करता है। इसलिए वकील, जासूस, संवाददाता और मनोविश्लेषक की मिलीजुली भूमिका साक्षात्कार विधा को अत्यंत सार्थक रूप दे सकती है।

साक्षात्कार की सफलता के लिए यह भी जरूरी है कि हम यह समझें कि साक्षात्कार का उद्देश्य क्या है और इसके लिए कितना समय निर्धारित हुआ है? इसी से साक्षात्कार के स्वरूप का निर्धारण होगा। साक्षात्कार के उद्देश्य और स्वरूप के संबंध को समझने से हम साक्षात्कार को बेहतर ढंग से नियोजित कर सकते हैं।

### 19.6.1 साक्षात्कार के विभिन्न रूप

विषय की बेहतर और बारीक समझ के लिए हम भेंटवार्ताओं का एक विभाजन इस तरह से भी कर सकते हैं।

- संक्षिप्त और सीधा साक्षात्कार
- बातचीत
- मुलाकात (विजिट के अर्थ में)
- विस्तृत और व्यक्तित्व–उद्घाटक साक्षात्कार
- खोजी साक्षात्कार

**संक्षिप्त और सीधा साक्षात्कारः** साक्षात्कार का यह सबसे प्रचलित रूप है। अगर आप किसी अखबार में रिपोर्टर हैं या किसी विषय पर शोध कर रहे हैं तो इस तरह के साक्षात्कार की जरूरत पड़ती है। दैनिक पत्र के रिपोर्टर को ऐसे साक्षात्कार पर काफी निर्भर रहना पड़ता है। किसी पत्रिका में परिचर्चा के दौरान भी त्वरित या 'स्नैप इंटरव्यू' की बहुत उपयोगिता है। महत्वपूर्ण व्यक्तियों के पास अक्सर वक्त बहुत कम होता है। वे आसानी से आपको भेंटवार्ता की अनुमति नहीं देंगे। इसलिए संक्षिप्त और सीधे साक्षात्कार के लिए तैयार रहना बहुत जरूरी होता है। इन दिनों अक्सर इस तरह की भेंटवार्ताएँ टेलीफोन पर भी ली जाती हैं। खासतौर पर सुविधा संपन्न अखबार और पत्रिकाएँ संस्थान के नाम के बल पर ही टेलीफोन पर सवाल–जवाब कर लेती है। 'आवाज' सबसे अधिक प्रामाणिक मानी जाती है। लेकिन छपी हुई भेंटवार्ता में भी अगर आप यह जानकारी पाठक को देते हैं कि यह बातचीत टेलीफोन पर की गयी है, तो उसकी प्रामाणिकता बढ़ जाती है। संक्षिप्त बातचीत में प्रश्न तैयार होने चाहिए और दनादन सवालों का सिलसिला बना रहना चाहिए।

**बातचीतः** बातचीत से हमारा आशय उस साक्षात्कार से है जब भेंटवार्ताकार भी अपने क्षेत्र का विशेषज्ञ हो। जाहिर है कि 'बातचीत' में एक व्यक्ति पर ज्यादा फोकस हो सकता है और अक्सर होता भी है। लेकिन'बातचीत' में भेंटवार्ताकार भी अक्सर अपनी बात राय या टिप्पणी थोड़ा विस्तार से कर सकता है। **दिनमान** के 4–10 दिसंबर, 1983 के अंक में हिन्दी कवि अज्ञेय से महादेवी वर्मा की बातचीत प्रकाशित हुई थी। अज्ञेय और महादेवी वर्मा दोनों ही हिंदी कवि के महान रचनाकार हैं। इस बातचीत में अज्ञेय ने साहित्य के संबंध में महादेवी से विभिन्न प्रश्न पूछे। परन्तु उन प्रश्नों को पढ़ने से ही स्पष्ट हो जाएगा कि ये साधारण किस्म के प्रश्न नहीं बल्कि एक रचनाकार के दृष्टिकोण की झलक भी उसमें दिखाई देती है। इस बातचीत में कई बार अज्ञेय के प्रश्न लंबे और महादेवी के उत्तर छोटे नजर आते हैं। इसका कारण यही है कि यह 'साक्षात्कार' कम 'बातचीत' अधिक है।

**प्रश्न** : तो स्वयं अपनी रचना में आपने लक्ष्य किया कि किस तरह का परिवर्तन आता है?

**उत्तर** : इस पर सोचा नहीं। परिवर्तन आना है, आया भाषा में भी आया, छंद में भी आया, लेकिन संस्कार पुराना ही रहा होगा क्योंकि फिर गीत लिखने का लोभ तो था ही और गीत में छंद न हो, गुनगुनाया न जाये, गाया न जाये तो किसी काम का न होगा। लंबी कविताएँ कम हैं मेरी, जो हैं गीत में हैं। बहुत विस्तार हो भी नहीं सकता। और क्योंकि भावाकुलता कुछ क्षणों में रहती है, हमेशा नहीं रह सकती। तो जो कविता वैचारिक है उसके लिए तो वह समय है। लेकिन गीत के लिए भाव में तीव्रता है, और कुछ तो है नहीं।

**प्रश्नः** यह तो ठीक है, लेकिन यह जो कविता में परिवर्तन आया, दो उदाहरण लूँ –

दिनकर जी लिखते थे, पहले बंधे हुए छंद में लिखते थे, बच्चन जी वैसा ही करते थे और वह कविता उनकी लोकप्रिय भी हुई। उधर तो कोई कारण नहीं था कि वह मुक्त छंद में लिखने लगें। दूसरी तरह के कारण हो सकते हैं लेकिन दोनों ने ही छंद छोड़कर दूसरी तरह की भाषा, दूसरी तरह की प्रक्रिया अपना ली और मुझको लगता है दोनों ही उसमें सफल नहीं हुए क्योंकि उनका संस्कार वही है बंधे हुए छंद का और वाचिक परंपरा का। दूसरी भाषा उन्होंने अपनायी, लेकिन वह छंद उनसे सधा नहीं। आपकी तो कभी मुक्त छंद की तरफ प्रवृत्ति नहीं हुई?

**उत्तरः** मुक्त छंद दो चार–लिखे होंगे, लेकिन भूल भी गयी हूँ और वह संग्रह मिलता भी नहीं। बहुत कविताएँ खोयी हैं मेरी। लेकिन एक दो बार प्रयत्न किया है मैंने। लेकिन मुझको आनंद इसी में मिलता है क्योंकि मैं गुनगुनाती हूँ।

**प्रश्न** : लेकिन जो प्रयत्न किया तो क्यों?

**उत्तरः** प्रयत्न यह देखने के लिए कि कैसा लगता है। कभी–कभी मन ऐसा होता है कि लिख कर देखें, लेकिन संतोष नहीं हुआ उस पर...

उपुर्यक्त साक्षात्कार को हम साधारण अर्थ में 'साक्षात्कार' नहीं कह सकते। यह बुनियादी रूप से एक बातचीत है क्योंकि महादेवी वर्मा से साक्षात्कार लेने वाला व्यक्ति स्वयं हिन्दी का लब्धप्रतिष्ठ कवि है। इस तरह से यह साक्षात्कार महादेवी वर्मा पर केन्द्रित होने के बावजूद एक बहस–बातचीत का रूप ले लेता है। अज्ञेय ने अपने को ज्यादा आरोपित नहीं किया है, पर उनके प्रश्न कभी–कभी अपनी स्वतंत्र सत्ता बनाने में सफल नजर आते हैं।

बातचीत केवल दो व्यक्तियों में ही हो, यह आवश्यक नहीं है। दो से अधिक, कभी–कभी चार–पाँच व्यक्ति भी इसमें शामिल हो सकते हैं। आमतौर पर ये सभी व्यक्ति एक ही क्षेत्र से संबद्ध होते हैं, और आपस में किसी एक विषय पर अपना–अपना मत उजागर करते हैं। कभी–कभी यह भी संभव है कि एक ही विशेषज्ञ से उसी क्षेत्र के दो/तीन व्यक्ति मिलकर साक्षात्कार लें।

**मुलाकातः** 'मुलाकात' या 'विजिट' में सवाल–जवाब लंबे समय तक फैले हुए हो सकते हैं। अक्सर इसमें टेप रिकॉर्डर या कापी–कलम के इस्तेमाल से बचा जाता है। आप किसी राजनेता, फिल्म निर्देशक या लेखक के घर जाते हैं। व्यक्ति विशेष के साथ आप एक घंटे से लेकर एक सप्ताह का समय बिता सकते हैं। फिर लौटकर आप उस मुलाकात का विवरण संस्मरण और भेंटवार्ता के मिले–जुले रूप में करते हैं। सुप्रसिद्ध हिन्दी लेखक मनोहर श्याम जोशी ने एक बार आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी से इस प्रकार का एक अच्छा साक्षात्कार लिया था। द्विवेदी जी उन दिनों चंडीगढ़ में रहते थे। मनोहर श्याम जोशी दिल्ली में थे। आलोचना पत्रिका के लिए मनोहर श्याम जोशी ने द्विवेदी जी से चंडीगढ़ जाकर एक मुलाकात की। इस साक्षात्कार को हिन्दी के अच्छे साक्षात्कारों में गिना जाना चाहिए। साक्षात्कार के अंत में जोशी जी की टिप्पणी गौर करने लायक है –

*"जब यह बगैर लिया हुआ इंटरव्यू प्रकाशित हो गया तब हजारी प्रसाद जी बहुत चकित हुए। उनका यही कहना था कि निश्चय ही आपके पास कोई छिपा हुआ टेप रिकॉर्डर रहा होगा। मैंने उनसे निवेदन किया कि लोगों की बातचीत बहुत ध्यान से सुनने की, उनका लहजा और अंदाजेबयां याद रखने की हमारे परिवार में परंपरा–सी है। हम सब माहिर नक्काल हैं। सुनकर वह बहुत हँसे।"* ***(बातों–बातों में, पृ. 31)***

इस प्रकार की मुलाकात को साक्षात्कार में बदलने के लिए आत्मविश्वास, स्मरण–शक्ति, 'माहिर नक्काली' के अलावा निरीक्षण शक्ति भी बहुत ऊँचे दर्जे की होनी चाहिए। ये गुण अगर आप में कम हैं तो इस प्रकार के साक्षात्कार से जूझने की कोशिश नहीं कीजिए। हर आदमी 'माहिर नक्काल' नहीं होता और बड़े–बड़े नक्काल भी धोखा खा जाते हैं।

**विस्तृत और व्यक्तित्व उद्घाटक साक्षात्कारः** हिन्दी में इस तरह के साक्षात्कार ज्यादा नहीं हैं। पश्चिम में तो जाने–माने विशेषज्ञों, कलाकारों, चिंतकों, वैज्ञानिकों, फिल्मकारों से पुस्तक रूपी साक्षात्कार लेने की बड़ी पुरानी परंपरा है। ये साक्षात्कार कई बैठकों में लिये जाते हैं। 'द पेरिस रिव्यू' ने लेखकों के लंबे साक्षात्कारों का अनोखा सिलसिला शुरू किया था जो विश्वप्रसिद्ध हो चुका है। बल्कि आप अगर 'द पेरिस रिव्यू' के साक्षात्कारों की पुस्तकें ध्यान से पढ़ें तो आप भेंटवार्ता की सभी संभावनाओं, बारीकियों, सीमाओं, उपलब्धियों आदि से परिचित हो सकते हैं।

**खोजी साक्षात्कारः** खोजी साक्षात्कार दरअसल खोजी पत्रकारिता के कारण लोकप्रिय हुए हैं। वैसे तो हर साक्षात्कार अपनी प्रकृति में खोजी ही होता है। पर खोजी साक्षात्कार में पत्रकार की जासूस और वकील छवि का महत्व बढ़ जाता है। आप चाहें तो व्यक्ति को बातों–बातों में 'एक्सपोज' करें या फिर टेढ़े और चतुर सवाल करके सच्चाई की तहों में प्रवेश करें। खोजी साक्षात्कार में दूसरा व्यक्ति अत्यधिक सजग नहीं होना चाहिए, वैसी स्थिति में अच्छे जवाब नहीं मिलते।

साक्षात्कार के इन विभिन्न रूपों को आप प्रश्नोत्तर शैली में प्रस्तुत करना चाहते हैं या लेख रूप में, यह भी विचारणीय प्रश्न है। सामान्यतः साक्षात्कार को प्रश्नोत्तर के रूप में ही प्रस्तुत किया जाता है परन्तु कभी–कभी लेख रूप में भी प्रस्तुत किया जा सकता है। आगे इन दोनों रूपों पर विचार किया गया है।

### 19.6.2 साक्षात्कार लेख रूप में

ऊपर 'बातचीत' के जिस रूप की चर्चा की गई है, उस बातचीत को आप लेख का रूप भी दे सकते हैं। लेकिन लेख के रूप में साक्षात्कार का प्रयोग सर्वाधिक उपयुक्त वहाँ है जहाँ सारी बातचीत किसी एक विषय पर केन्द्रित होती है और प्रश्नों को उद्धृत किये बिना विशेषज्ञ के विचारों को लेख का रूप दिया जा सकता है। व्यक्तित्व उद्घाटक साक्षात्कार को लेख के रूप में प्रस्तुत किया जा सकता है। विशेष उद्घाटक साक्षात्कार को भी लेख के रूप में प्रस्तुत किया जा सकता है, खासकर तब जब प्रश्नों के उत्तर अनुभवपरक और संस्मरणात्मक हों। साक्षात्कार को रूप देते वक्त भाषा में काफी बदलाव करना पड़ सकता है। उत्तरों को सही क्रम में रखना होता है तथा एक बात और दूसरी बात के बीच के 'गैप' को भरना पड़ता है। लेख को रूप देने का लाभ यही है कि विशेषज्ञ की बातचीत पूर्ण और निर्बाध रूप में सामने आती है। साक्षात्कार अगर विचारप्रधान है तो लेख में 'भेंटवार्ता' की उपस्थिति खटक सकती है, लेकिन संस्मरणात्मक और व्यक्तित्वपरक साक्षात्कार में 'भेंटवार्ता' की उपस्थिति को उसके महत्व को बढ़ा सकती है। नीचे इसी तरह के एक साक्षात्कार का अंश दिया जा रहा है। यह साक्षात्कार फिल्म निर्देशक बासु भट्टाचार्य से लिया गया था और संडे मेल (हिन्दी साप्ताहिक) में लेख के रूप में प्रकाशित हुआ था–

*''बासु भट्टाचार्य से मुलाकात दिल्ली में महादेव रोड़ पर फिल्म प्रभाग के सभागार के बाहर हुई। अपनी अब तक की ताजा फिल्म 'पंचवटी' को लेकर वे यहाँ आये थे। 'पंचवटी' को बने तीन साल होने को आये हैं लेकिन अब तक यह फिल्म व्यावसायिक प्रदर्शन के लिए रिलीज नहीं की जा सकी है। 'क्यों' से बातचीत शुरू की तो बासु ने जैसे फिल्म वितरण व्यवस्था की सामान्य समस्या ही सामने रख दी, 'अच्छी' फिल्में देखता ही कौन है? खरीदने की बात तो इसके बाद ही होगी कि 'पंचवटी' कितनी अच्छी है, अच्छी है भी या नहीं यह बासु के दर्शकों पर छोड़ देना बेहतर है। आखिर वे ही कहते हैं कि वे खास दर्शक को लक्ष्य करके ही फिल्म बनाते हैं और उनके पास*

*ऐसे दर्शक हैं भी जो उनकी फिल्मों में छिपे 'ब्रिलिएंट आइडिया' भी ढूँढ निकालते हैं। 'पंचवटी' के बारे में यहाँ दो चार मुख्तसर बातें कहना ही अपेक्षित होगा। बासु ने' मेल–फीमेल' के रिश्तों की रोशनी में ही पूरी फिल्म के 'कथ्य' को 'फोकस' किया है और यह फिल्म भारत और नेपाल के सहयोग से बनने वाली पहली फिल्म है।''*

**(संडे मेल, 11 फरवरी 1990)**

### 19.6.3 प्रश्नोत्तर रूप में

साक्षात्कार को प्रश्नोत्तर रूप में प्रस्तुत करना सामान्य चलन है। लेकिन प्रश्नोत्तर को किस सीमा तक संयोजित और संपादित करना चाहिए, इसकी चर्चा विस्तार से की जा चुकी है। जहाँ उत्तरकर्त्ता की कही हुई बात का उसके अपने शब्दों में प्रस्तुत करना अनिवार्य हो वहाँ प्रश्नोत्तर रूप को ही अपनाना चाहिए। इसी तरह जहाँ प्रश्न क्या और किस रूप में पूछा गया है, यह जानना या बताना आवश्यक हो, वहाँ भी प्रश्नोत्तर शैली ही उचित है। जब भेंटकर्ता प्रश्नोत्तर के बीच–बीच अपनी टिप्पणी भी देना चाहता है तो लेख शैली का प्रयोग उचित होता है वरना प्रश्नोत्तर शैली उचित है। इसमें अधिक वस्तुपरक और कुशल होने का परिचय देना होता है। यह भेंटकर्ता पर निर्भर करता है कि वह लेख के रूप में साक्षात्कार प्रस्तुत करना चाहता है या प्रश्नोत्तर रूप में।

### 19.6.4 शीर्षक देना

साक्षात्कार के संपादन की प्रक्रिया में शीर्षक का चुनाव एक प्रमुख समस्या है। अक्सर किसी चौकाने वाले उद्धरण से साक्षात्कार का शीर्षक दिया जाने लगा है। लेकिन हर साक्षात्कार के साथ इस तरह के शीर्षक अच्छे नहीं लगते। सरल और केन्द्रीय बिंदु को उभारने वाला शीर्षक ज्यादा प्रभावशाली हो सकता है। इसके लिए आप उत्तरकर्त्ता के कथन को भी शीर्षक के रूप में इस्तेमाल कर सकते हैं।

## 19.7 साक्षात्कार का प्रकाशन

जहाँ तक साक्षात्कार के प्रकाशन का प्रश्न है, अक्सर किसी संपादक की पूर्व स्वीकृति के बाद ही किसी साक्षात्कार का समय लेना चाहिए। इससे समय मिलने में भी आसानी होती है और डेड लाइन का भी अंदाजा रहता है। पर इसे बिल्कुल नियम में न बदलिए महत्वपूर्ण व्यक्ति आपको अचानक आसानी से लंबे समय के लिए उपलब्ध हो जाये तो बातचीत को टालिए नहीं। बाद में सुविधानुसार अखबार या पत्रिका का चुनाव हो सकता है ।

मिसाल के लिए, आप शिमला में छुट्टियाँ बिता रहे हैं। अचानक आपको पता चलता है कि आपके होटल में एक बहुत नामी संगीतकार ठहरे हुए हैं। अगर आप उनसे लंबी बातचीत में सफल हो जाये तो प्रकाशन की चिंता बाद में कीजिएगा। प्रसिद्ध व्यक्तियों से अंतरंग और लंबी बातचीत छापने के लिए सभी पत्र–पत्रिकाएँ उत्सुक रहती हैं। साक्षात्कार का कॉपीराइट स्वत्वाधिकार–भेंटवार्ताकार का ही होता है। हिन्दी में कुछ लेखक अपनी भेंटवार्ताओं का संकलन खुद ही छपवा लेते हैं। यह सोचकर कि आखिर विचार तो मेरे हैं। पर इसके लिए भेंटवार्ताकार से पूर्वानुमति जरूरी है। हाँ, साक्षात्कार से पहले संबद्ध व्यक्ति फीस मांग सकता है। पश्चिम में अनेक नामी लोग साक्षात्कार

में बैठने की बाकायदा फीस मांगते हैं। सौभाग्यवश, अभी भारत में यह परंपरा प्रचलित नहीं है।

**बोध प्रश्न–3**

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर संक्षेप में दें।

1) संक्षिप्त और सीधा साक्षात्कार कब लिया जाता है?

......................................................................................................

......................................................................................................

......................................................................................................

......................................................................................................

2) 'बातचीत' और 'साक्षात्कार' में अंतर स्पष्ट कीजिए।

......................................................................................................

......................................................................................................

......................................................................................................

......................................................................................................

3) लेख रूप में साक्षात्कार तैयार करते हुए किन–किन बातों का ध्यान रखना चाहिए?

......................................................................................................

......................................................................................................

......................................................................................................

......................................................................................................

## 19.8 सारांश

- साक्षात्कार की तैयारी के बाद महत्वपूर्ण है, साक्षात्कार लेना। लेकिन साक्षात्कार लेने के बाद भी आप अपनी बातचीत को प्रकाशन के लिए उसी रूप में प्रस्तुत नहीं कर सकते। इसके लिए साक्षात्कार का संशोधन और पुनर्लेखन आवश्यक है। इस इकाई को पढ़ने के बाद लिये गये साक्षात्कार को प्रकाशन हेतु अंतिम रूप दे सकते हैं।

- साक्षात्कार को अंतिम रूप देने के लिए तीन बातें ध्यान रखना आवश्यक है। साक्षात्कार का आरंभ कैसे किया जाये, केन्द्रीय बिंदु को कैसे उजागर करें और पूरे साक्षात्कार में संतुलन कैसे स्थापित करें। अगर इन तीनों बातों को हम ठीक से कर लेते हैं तो प्रकाशन हेतु साक्षात्कार को अंतिम रूप देना आसान होगा। इस इकाई को पढ़ने के बाद आप साक्षात्कार का प्रभावशाली आरंभ कर सकते हैं, उसमें निहित केन्द्रीय बिंदु को उजागर कर सकते हैं। तथा पूरे साक्षात्कार में संतुलन कायम कर सकते हैं।

- साक्षात्कार के लेखन के समय भाषागत सुधार भी आवश्यक है। वैचारिक उलझाव और अस्पष्टता दूर करने के लिए भाषा में आवश्यक परिवर्तन करना जरूरी है। इसी तरह ढीले–ढाले वाक्य, अंग्रेजी या देशज शब्दों का अत्यधिक प्रयोग जैसे दोषों को दूर कर लेना चाहिए। लेकिन साक्षात्कार देने वाले की भाषा की कोई खास विशिष्टता, जिसे साक्षात्कार में संरक्षित रखना आवश्यक हो तो उसे नहीं बदलना चाहिए। इन बातों को ध्यान में रखकर आप साक्षात्कार की भाषा में आवश्यक सुधार कर सकते हैं।

- साक्षात्कार के कई रूप हो सकते हैं। तात्कालिक आवश्यकता को ध्यान में रखकर सीधे और संक्षिप्त साक्षात्कार, एक या अधिक लोगों की आपसी बातचीत, किसी विशिष्ट व्यक्ति से 'मुलाकात', व्यक्तित्व को उद्घाटित करने वाला विस्तृत साक्षात्कार और खोजी साक्षात्कार। आप इन साक्षात्कारों के सम्बम्ध में जान चुके हैं। अलग–अलग उद्देश्यों के अनुसार आप इनमें से किसी भी रूप में साक्षात्कार का आयोजन कर सकते हैं।

- साक्षात्कार को प्रश्नोत्तर रूप में भी प्रस्तुत किया जा सकता है और लेख रूप में भी। लेख रूप में प्रायः उसी साक्षात्कार को पेश किया जाता है जिसमें व्यक्ति से एक ही विषय पर विस्तार से बातचीत की गयी हो। इस इकाई में आपको साक्षात्कार का शीर्षक कैसे दिया जाता है, यह भी बताया गया है। आप इकाई पढ़ने के बाद साक्षात्कार को लेख रूप में या प्रश्नोत्तर रूप में प्रस्तुत कर सकते हैं।

**अभ्यास**

1) 'परिवार में कामकाजी महिला की स्थिति' विषय पर अपने आसपास रहने वाली किसी कामकाजी महिला का साक्षात्कार लीजिए और आरंभ में उसकी दिनचर्या का संक्षिप्त विवरण प्रस्तुत कीजिए।

..........................................................................................................

..........................................................................................................

..........................................................................................................

2) उपर्युक्त साक्षात्कार के आरंभ में आप जो प्रश्न पूछना चाहेंगे, उनको प्रस्तुत कीजिए।

i)...........................................................................

ii)..........................................................................

iii).......................................................................

3) आप अपनी उक्त बातचीत किस प्रश्न पर समाप्त करना चाहेंगे, उसे लिखिए।

..........................................................................................................

..........................................................................................................

..........................................................................................................



ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

4) निम्नलिखित गद्यांश में साक्षात्कार में पूछे गये प्रश्न का उत्तर है। इसकी भाषा में आवश्यक सुधार और संशोधन कीजिए।

'आप का सोचना सही हो सकता है। बट आई थिंक, हमें इस इशू पर जनता के दृष्टिगोचर से भी विचार करना चाहिए। उन पर इसका क्या इपेक्ट पड़ेगा, किस रूप में वे इसे लेंगे, कहां तक वे इससे प्रभावित होंगे। जब तक हम जनता को इसमें इन्वाल्व नहीं करेंगे, उन्हें अपने साथ नहीं लायेंगे, तब तक आई डाउट, हमें सफलता मिल सकेगी।'

......................................................................................................

......................................................................................................

......................................................................................................

......................................................................................................

5) निम्नलिखित कथन की भाषा में भोजपुरी का अत्यधिक प्रभाव है। आप इसे हिन्दी में बदलिए।

**'हमरा विचार से इ दंगा–फसाद के जड़ में पोलिटिसीयन बाड़े स। ई हमन सब के प्राब्लम नइखे। हमरा गाँव में मुसलमान और हिन्दू सब एक साथ रहेला। हमरा बीच केइसनो झगरा नइखे। लेकिन बेर–बेर ई पालिटिसीयन लोग हमारा बीच में झगरा करावे के हमेशा कोसीस करेले।'**

6) निम्नलिखित साक्षात्कार को लेख रूप में परिवर्तित कीजिए।

......................................................................................................

......................................................................................................

......................................................................................................

......................................................................................................

**श्रीमान 'क' से बातचीत**

**प्रश्नः** सांप्रदायिकता की समस्या को आप किस रूप में लेते हैं?

**उत्तरः** मेरे विचार में सांप्रदायिकता की समस्या सबसे भयानक समस्या है। यह सिर्फ विभिन्न समुदायों के बीच घृणा और द्वेष ही नहीं फैलाती, वरन देश की एकता को तोड़ने के लिए जमीन भी तैयार करती है। यह लोगों को आपस में बाँटती है और हमारी विकास प्रक्रिया को अवरुद्ध करती है।

**प्रश्नः** सांप्रदायिकता से आपका क्या तात्पर्य है?

**उत्तरः** आप जानते हैं, हमारे देश में विभिन्न धर्मों को मानने वाले लोग रहते हैं हिन्दू, मुसलमान, सिख, इसाई, बौद्ध, जैन आदि। इनके धार्मिक विश्वास अलग–अलग हैं परन्तु सभी भारतीय हैं। भारत के संविधान के अनुसार प्रत्येक भारतीय को समान अधिकार दिये गये हैं और धर्म के आधार पर उनके साथ किसी तरह का भेदभाव नहीं किया जाएगा, इसका वचन दिया गया है। लेकिन जब व्यवहार में विभिन्न धर्मावलंबियों के बीच भेदभाव बरता जाता है या जब कुछ राजनीतिक और धार्मिक संगठन निहित

स्वार्थों के लिए एक धार्मिक समुदाय को दूसरे धार्मिक समुदाय के विरुद्ध भड़काने या उकसाने का काम करते हैं तो इससे सांप्रदायिकता का जन्म होता है।

**प्रश्नः** सांप्रदायिकता अलगाववाद की ओर कब बढ़ती है?

**उत्तरः** जब विभिन्न समुदाय अपने को असुरक्षित समझने लगते हैं और यह महसूस करते हैं कि वर्तमान राजनीतिक ढांचे में उसके हितों और अधिकारों, जिनमें धार्मिक अधिकार भी शामिल हैं, की रक्षा संभव नहीं है तो उस समुदाय में पृथकता का अंकुर फूटने लगता है। किसी समुदाय में अलगाववाद का आरंभ बहुसंख्यक सांप्रदायिकता के बढ़ते दबाव का नतीजा भी होता है, इसलिए हर तरह की सांप्रदायिकता वस्तुतः अलगाववाद को बढ़ावा देती है।

7) अपने किसी मित्र से ऐसे विषय पर बातचीत कीजिए जिसमें आप दोनों की अभिरूचि हो। आप अपनी बातचीत को लगभग 100 शब्दों के लेख रूप में लिखिए और शीर्षक भी दीजिए।

8) किसी बुजुर्ग व्यक्ति का साक्षात्कार लीजिए और उससे ऐसे प्रश्न पूछिए जिससे उसके व्यक्तित्व पर प्रकाश पड़ता हो। इस साक्षात्कार का उचित शीर्षक भी दीजिए।

## 19.9 बोध प्रश्नों/अभ्यासों के उत्तर

**बोध प्रश्न –1**

1) साक्षात्कार की अंतर्वस्तु के साथ उसका संबंध होना चाहिए। साक्षात्कार के साथ उसका संबंध औचित्यपूर्ण है या नहीं, इस पर विचार कर लेना चाहिए। फोटो स्पष्ट और दर्शनीय हो और फोटो की साइज पत्र–पत्रिका की साइज को ध्यान में रखकर तय करनी चाहिए।

2) क) √ ख) x ग)√ घ) x ड़) x

3) i) जिससे साक्षात्कार लेना है उसका वह परिचय, जिसके कारण आप उसका साक्षात्कार ले रहे हैं।

   ii) साक्षात्कार का कारण।

   iii) साक्षात्कारकर्ता का उल्लेख।

4) 'नर्म' यानी सुविधाजनक सवालों के लिए पहले माहौल बनाने की आवश्यकता है। आरंभ में गर्म सवाल पूछने पर उत्तरर्त्ता का मूड बिगड़ सकता है जिससे इंटरव्यू को जारी रखने में बाधा आ सकती है।

**बोध प्रश्न –2**

1) क) साक्षात्कार को एक निश्चित स्वरूप देने के लिए।

   ख) अपने उद्देश्य के अनुरूप प्रस्तुति के लिए।

   ग) मूल मंतव्य को उजागर करने के लिए।

   घ) पत्र–पत्रिका में नियत स्थान के लिए।

   ड.) भाषागत त्रुटियां दूर करने के लिए।

2) क) नहीं ख) हाँ ग) हाँ घ) हाँ य) नहीं।

3) उस व्यक्ति की भाषा की विशिष्टता की रक्षा करनी चाहिए तथा किसी खास अर्थ में कोई शब्द प्रयुक्त हुआ है तो उसे नहीं बदलना चाहिए। किन्तु भाषागत अन्य त्रुटियाँ जैसे व्याकरणगत दोष या अनावश्यक दोहराव या अन्य भाषाओं के शब्दों या पदों का अनावश्यक प्रयोग आदि दूर किये जाने चाहिए।

**बोध प्रश्न –3**

1) संक्षिप्त और सीधा साक्षात्कार आम तौर पर समाचार पत्रों की रिपोर्टिंग के लिए आवश्यक होता है।

2) 'बातचीत' में दो या दो से अधिक व्यक्ति किसी विषय पर आपस में सोद्देश्यपूर्ण वार्तालाप करते हैं और ये सभी उस क्षेत्र में संबद्ध होते हैं। लेकिन साक्षात्कार में साक्षात्कारकर्ता को उस क्षेत्र से संबद्ध होना अनिवार्य नहीं है। बातचीत में प्रश्नकर्ता का दृष्टिकोण भी महत्व के साथ व्यक्त होता है और साक्षात्कार में प्रश्नकर्ता का दृष्टिकोण या मत का महत्व नहीं होता और न ही वह अपना मत प्रस्तुत करता है।

3) देखिए 19.6.2 उपभाग।

**अभ्यास**

1) **उदाहरण**: श्रीमती कमला सबरवाल, दिल्ली प्रशासन के स्कूल में पढ़ाती हैं। उनके पति बैंक में अधिकारी हैं। दो बच्चों की मां कमला पिछले बारह साल से नौकरी और घर दोनों का बोझ ढो रही हैं। सुबह पाँच बजे से रात ग्यारह बजे तक घर और स्कूल के बोझ तले दबी कमला सबरवाल महसूस करती हैं कि सैंतीस साल की उम्र में ही वे थक चुकी हैं। आइए, कामकाजी महिलाओं की समस्याओं पर उनके विचार जानें।

2) काम का बोझ, बाहर के काम में आने वाली कठिनाइयों और घर के काम में पति की मदद आदि के संबंध में सवाल पूछे जा सकते हैं।

3) अंतिम प्रश्न में आप समस्या के समाधान के लिए सुझाव माँग सकते हैं।

4) आपका सोचना सही हो सकता है। परन्तु मेरे विचार में, हमें इस मसले पर जनता को भी ध्यान में रखना चाहिए। उन पर इसका क्या प्रभाव होगा। जब तक हम जनता को इससे नहीं जोड़ेंगे, तब तक हमें सफलता नहीं मिलेगी।

5) मेरे विचार में इन दंगा–फसाद की जड़ में राजनीतिज्ञ होते हैं। यह हमारी समस्या नहीं। हमारे गाँव में मुसलमान और हिन्दू एक साथ रहते हैं। हमारे बीच किसी तरह का झगड़ा नहीं है। लेकिन बार–बार ये राजनीतिज्ञ हमारे बीच झगड़ा कराने की कोशिश करते हैं।

# इकाई 20 व्यक्ति–चित्र

इकाई की रूपरेखा


20.0 उद्देश्य

20.1 प्रस्तावना

20.2 व्यक्ति–चित्र से अभिप्राय

20.3 व्यक्ति–चित्र का उद्देश्य और महत्त्व

20.4 व्यक्ति के चयन का आधार

20.5 लेखन की तैयारी

- 20.5.1 आवश्यक अध्ययन
- 20.5.2 साक्षात्कार
- 20.5.3 सामग्री का चयन

20.6 व्यक्ति–चित्र के विभिन्न पक्ष

- 20.6.1 जीवन परिचय
- 20.6.2 कार्यक्षेत्र
- 20.6.3 उपलब्धि और योगदान
- 20.6.4 प्रासंगिकता और महत्त्व

20.7 व्यक्ति–चित्र का लेखन

- 20.7.1 व्यक्ति–चित्र का आकार
- 20.7.2 व्यक्ति–चित्र की शैली
- 20.7.3 व्यक्ति–चित्र की भाषा
- 20.7.4 व्यक्ति–चित्र का शीर्षक

20.8 किसी संस्था के प्रोफाइल का लेखन

20.9 सारांश

20.10 बोध प्रश्नों/अभ्यासों के उत्तर

20.11 उपयोगी पुस्तकें


## 20.0 उद्देश्य

समाचार पत्र और फीचर लेखन से संबंधित व्यवहारमूलक पाठ्यक्रम की यह बीसवीं इकाई है। इस इकाई में व्यक्ति–चित्र के लेखन के संबंध में बताया गया है। इस इकाई को पढ़ने के बाद आप :

- व्यक्ति–चित्र के अभिप्राय और महत्त्व को स्पष्ट कर सकेंगी/सकेंगे;
- व्यक्ति–चित्र लेखन के लिए उपयुक्त व्यक्ति या संस्था का चयन कर सकेंगी/सकेंगे;
- लेखन के लिए आवश्यक तैयारी कर सकेंगी/सकेंगे;

- व्यक्ति–चित्र के लेखन से संबंधित विभिन्न पक्षों को बता सकेंगी/सकेंगे; और
- व्यक्ति–चित्र का लेखन कर सकेंगी/सकेंगे।

## 20.1 प्रस्तावना

इस इकाई में हम आपको व्यक्ति–चित्र के लेखन के बारे में बतायेंगे। व्यक्ति–चित्र, जिसे अंग्रेजी में 'प्रोफाइल' कहते हैं, फीचर लेखन का महत्त्वपूर्ण अंग है। प्रोफाइल का संबंध केवल व्यक्तियों से ही नहीं होता, संस्थाओं से भी होता है। परंतु हमने यहाँ अधिकतर ऐसे प्रोफाइल की चर्चा की है जिनमें किसी व्यक्ति को ही केन्द्र में रखा जाता है। इसलिए प्रोफाइल को व्यक्ति–चित्र का नाम दिया है।

आपने अनुभव किया होगा कि संचार माध्यमों के द्वारा जो घटनाएँ हमारे सम्मुख उपस्थित होती हैं, उनसे कुछ लोग जुड़े होते हैं। जैसे पूर्वी यूरोप और सोवियत संघ में कुछ समय पहले हुए परिवर्तन। इनसे सोवियत राष्ट्रपति गोर्बाचेव का नाम अनिवार्य रूप से जुड़ा है। नर्मदा परियोजना से संबंधित आंदोलन से बाबा आमटे और मेधा पाटकर का नाम जुड़ा है। इस तरह जब हम मीडिया के माध्यम से घटनाओं से जुड़ते हैं तो उनके साथ ही उनसे संबंधित लोगों के बारे में भी हमें जानने की उत्सुकता बढ़ती है। व्यक्ति–चित्र इसी उत्सुकता का समाधान करता है। राजनेता, वैज्ञानिक, खिलाड़ी, शिक्षाविद्, लेखक, कलाकार अपने कार्यों से चर्चित होते हैं। व्यक्ति–चित्रों के माध्यम से हमें उनके बारे में और अधिक जानने का अवसर प्राप्त होता है। इन 'व्यक्ति–चित्रों' के ही लेखन के बारे में इस इकाई में बताया गया है।

"व्यक्ति–चित्र" केवल व्यक्ति का सामान्य परिचय नहीं हैं हालांकि उसमें व्यक्ति के जीवन के संबंध में जानकारी भी दी जाती है। खास बात यह है कि व्यक्ति–चित्र के माध्यम से व्यक्ति विशेष का एक ऐसा चित्र प्रस्तुत किया जाता है जिससे कि पाठक उसके व्यक्तित्व के नये रूप से साक्षात्कार हो सके।

इस इकाई में हमने व्यक्ति–चित्र लेखन के लिए की जाने वाली तैयारियों, व्यक्ति–चित्र के विभिन्न पक्षों और व्यक्ति–चित्र के लेखन के संबंध में व्यवहारिक जानकारी दी है। हमने विभिन्न उदाहरणों से अपनी बात समझाने का प्रयास किया है। इनके साथ ही जो अभ्यास दिए हैं उनको करने से आप व्यक्ति–चित्र के लेखन की कुशलता का विकास कर सकेंगे।

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप पत्र–पत्रिकाओं में प्रकाशित व्यक्ति–चित्रों को ध्यान से पढ़िए। उनकी विशेषताओं और कमजोरियों को पहचानिए। इसके बाद आप किसी चर्चित व्यक्ति का व्यक्ति–चित्र स्वयं लिखने की कोशिश कीजिए। इसके लिए आप पुस्तकों, समाचार पत्रों आदि का अध्ययन करें। इस तरह के अभ्यास से आपको व्यक्ति–चित्र लिखने में काफी मदद मिलेगी।

## 20.2 व्यक्ति–चित्र से अभिप्राय

पत्रकारिता के क्षेत्र में 'व्यक्ति–चित्र' का महत्त्वपूर्ण स्थान है। व्यक्ति–चित्र जिसे अंग्रेजी में 'प्रोफाइल' कहते हैं, फीचर लेखन का एक अंग है। 'प्रोफाइल' का शाब्दिक अर्थ है– पार्श्वचित्र (Side veiw), रेखाचित्र (Sketch) आदि। यह पार्श्वचित्र या रेखाचित्र किसी व्यक्ति का भी हो सकता है और किसी वस्तु का भी। फीचर लेखन के

क्षेत्र में 'प्रोफाइल' एक ऐसे आलेख को कहेंगे जिसमें किसी व्यक्ति विशेष का संक्षिप्त परिचय दिया गया हो या किसी वस्तु–विशेष का संक्षिप्त विवरण प्रस्तुत किया गया हो। यहाँ वस्तु का अर्थ व्यापक है। वह कोई संस्था कोई गतिविधि भी हो सकती है। उदाहरण के लिए, महान क्रिकेट खिलाड़ी सुनील गवासकर या भारत में मछली उद्योग पर 'प्रोफाइल' तैयार किया जा सकता है। यहाँ हमने 'प्रोफाइल' को व्यक्ति–चित्र इसलिए कहा है कि हम मुख्य रुप से इस इकाई में व्यक्ति विशेष का संक्षिप्त जीवन परिचय प्रस्तुत करने वाले 'प्रोफाइल' की ही चर्चा करेंगे। लेकिन विद्यार्थियों को इस इकाई में यह भी बताया जाएगा कि संस्थाओं की प्रोफाइल कैसे तैयार की जाती है। 'प्रोफाइल' केवल 'मुद्रित मीडिया' का ही अंग नहीं है। रेडियो और टी. वी. के लिए भी ''प्रोफाइल'' तैयार किए जा सकते हैं। लेकिन इस इकाई में हम पत्र–पत्रिकाओं में प्रकाशित होने वाले प्रोफाइल पर ही विचार करेंगे।

व्यक्ति–चित्र का अर्थ सिर्फ जीवन परिचय नहीं है। आपने अक्सर पाया होगा कि समय–समय पर घटने वाली घटनाओं के कारण कुछ लोगों की चर्चा विशेष रूप से होने लगती है। जैसे सोवियत संघ के पूर्व राष्ट्रपति गोर्बाचेव ने 'ग्लासनोस्त' और पेरेस्त्रोइका' के माध्यम से सोवियत समाज में आमूल परिवर्तन लाने का अभियान आरंभ किया तो उनकी चर्चा सब जगह होने लगी। जाहिर है, उस समय हर कोई गोर्बाचेव के बारे में ज्यादा से ज्यादा जानने को उत्सुक था। ऐसे समय में विभिन्न पत्र–पत्रिकाओं ने गोर्बाचेव के कई व्यक्ति–चित्र प्रकाशित किये। समाज के विभिन्न क्षेत्रों का कोई न कोई व्यक्ति हर सप्ताह चर्चा में रहता है। राष्ट्रीय या अंतरराष्ट्रीय प्रतियोगिता के दौरान उभरने वाला कोई खिलाड़ी, किसी लेखक की नई पुस्तक के चर्चित होने पर किसी विवादास्पद घटना से जुड़े होने पर, किसी पुरस्कार या किसी महत्त्वपूर्ण व्यक्ति की मत्यु के मौके पर भी पत्र–पत्रिकाएँ व्यक्ति–चित्र प्रकाशित करती हैं।

इन व्यक्ति–चित्रों में उस व्यक्ति का जीवन परिचय, उसका कार्य क्षेत्र, उसकी उपलब्धियों और उसके विचारों की संक्षिप्त झांकी प्रस्तुत की जाती है ताकि लोगों को उस व्यक्ति के बारे में आवश्यक जानकारी मिल सके। जाहिर है, व्यक्ति–चित्र बहुत विस्तृत नहीं होता। व्यक्ति–विशेष की समग्र जीवन कथा प्रस्तुत करना इसका उद्देश्य नहीं है। व्यक्ति–चित्र को परिपूर्ण बनाने के लिए उस व्यक्ति का चित्र, उसके कार्य से संबंधित छाया चित्र, दस्तावेज आदि भी प्रस्तुत किए जा सकते हैं। व्यक्ति–चित्र को प्रामाणिक बनाने के लिए संभव हो तो उस व्यक्ति से साक्षात्कार भी लिया जा सकता है। इस प्रकार व्यक्ति–चित्र वस्तुतः व्यक्ति विशेष के व्यक्तित्व की एक रूपरेखा हमारे सामने प्रस्तुत करता है। यह व्यक्ति कोई भी हो सकता है विशिष्ट भी और सामान्य भी। लेकिन उस व्यक्ति–चित्र की प्रासंगिकता अवश्य होनी चाहिए, उसे खबरों में होना चाहिए।

## 20.3 व्यक्ति–चित्र का उद्देश्य और महत्त्व

व्यक्ति–चित्र आम तौर पर समाचार पत्रों और पत्रिकाओं में प्रकाशित होते हैं। समाचार पत्रों में तरह–तरह के समाचार प्रकाशित होते हैं, नयी–नयी घटनाओं और समस्याओं से लोगों का परिचय होता है। जिन घटनाओं और समस्याओं के प्रति पाठकों की उत्सुकता बढ़ती है, उनके संबंध में वे और अधिक जानना चाहते हैं। उनसे संबधित लोगों के बारे में जानने की उत्कंठा लोगों में बढ़ जाती है। अपने पाठकों की जिज्ञासा

को शांत करने का दायित्व भी पत्र–पत्रिकाओं पर ही है इसलिए वे ऐसे लागों का व्यक्ति–चित्र प्रकाशित करती हैं। प्रसिद्ध टेनिस खिलाड़ी बोरिस बेकर जब पहली बार विंबलडन चैंपियन बने, तब उनकी उम्र महज सत्रह वर्ष की थी। खेल की दुनिया में वह लगभग अपरिचित थे। इतनी बड़ी जीत से उनका नाम सारी दुनिया में फैल गया। स्वाभाविक था कि खेल प्रेमी बेकर के बारे में ज्यादा से ज्यादा जानने को उत्सुक होते। अब अगर उस समय मीडिया बेकर के बारे में लोगों की जिज्ञासाओं को शांत नहीं करता तो पत्रकारिता के मूल उद्देश्य को ही आघात लगता।

जब कोई राजनेता, कलाकार, लेखक, अभिनेता, खिलाड़ी, विद्वान, अपने कार्यों से समाज को प्रभावित करता है तो स्वाभाविक रूप से उसकी ओर लोगों का ध्यान आकृष्ट होता है। उसके प्रति लोगों की उत्सुकता और आकर्षण बढ़ते हैं और लोग उसके बारे में जानना चाहते हैं। अगर किसी व्यक्ति ने किसी क्षेत्र विशेष में उल्लेखनीय कार्य किया है लेकिन उसका कार्य उसका नाम अभी तक आम लोगों तक नहीं पहुंचा है, तो इस दायित्व को मीडिया पूरा करता है। यह आवश्यक नहीं कि व्यक्ति–चित्र किसी उल्लेखनीय कार्य करने वाले व्यक्ति पर ही हो। किसी साधारण या असाधारण संघर्ष या किसी साधारण व्यक्ति की कोई असाधारण बात या किसी भी समुदाय या वर्ग के व्यक्ति के प्रति समाज की उपेक्षा आपको व्यक्ति–चित्र लिखने की ओर प्रेरित कर सकती है। उदाहरण के लिए, सर्कस में जोकर बनकर लोगों को हंसाने वाले व्यक्ति के जीवन के दुख–दर्द आपको उस पर 'व्यक्ति–चित्र' लिखने के लिए प्रेरित कर सकते हैं। मुहल्ले में रेहड़ी पर सब्जी बेचने वाले बूढ़े बाबा के हँसमुख चेहरे में उसके संपूर्ण जीवन का संघर्ष आपको झलकता दिखाई दे तो आप इस व्यक्ति के 'असाधारण' व्यक्तित्व को हजारों, तक पहुँचा सकते हैं। इस तरह के व्यक्ति–चित्र लोगों को अपने समाज की वास्तविकता से परिचय कराते हैं। उन्हें संवेदनशील और मानवीय बनाने की ओर प्रेरित करते हैं। व्यक्ति–चित्र किसी काल्पनिक कहानी से अधिक प्रभावशाली हो सकते हैं।

कोई भी व्यक्ति–चित्र चाहे विशिष्ट व्यक्ति पर आधारित हो, चाहे साधारण जन पर, उसकी प्रासंगिकता आवश्यक है। जैसे, जब किसी व्यक्ति की चर्चा हो रही है, तो उसका व्यक्ति–चित्र प्रकाशित होना प्रासंगिक है। लेकिन अन्य कई अवसर भी विशिष्ट व्यक्तियों के व्यक्ति–चित्र के लिए प्रासंगिक हो सकते हैं। जैसे उनका जन्म दिवस, पुण्य तिथि, पुरस्कार प्राप्ति या अन्य प्रकार की उपलब्धि के अवसर पर भी व्यक्ति–चित्र प्रकाशित हो सकते हैं।

साधारण जन पर लिखे जाने वाले व्यक्ति–चित्र भी प्रासंगिक हों तो अधिक प्रभावशाली हो सकते हैं। पत्र–पत्रिकाओं में कई बार किसी विषय पर फीचर तैयार कराये जाते हैं। उसके एक अंग के रूप में भी व्यक्ति–चित्र तैयार किए जा सकते हैं। उदाहरण के लिए, बुनकरों पर तैयार किया जाने वाला फीचर तब और प्रभावशाली हो सकता है, जब उसके साथ किसी बुनकर का व्यक्ति–चित्र भी दिया जाए या विश्व फुटबॉल कप के अवसर पर आयोजित विशेषांक में पेले, माराडोना या अन्य किसी खिलाड़ी का व्यक्ति–चित्र दिया जा सकता है।

व्यक्ति–चित्र भी सोद्देश्यपूर्ण होना चाहिए। उल्लेखनीय व्यक्ति के जीवन परिचय को जानने में लोगों की कोई दिलचस्पी नहीं होती, चाहे वह कितना भी अमीर हो या कितने भी बड़े पद पर क्यों न बैठा हो। लेकिन यह व्यक्ति–चित्र लिखने वाले पर निर्भर करता है कि वह उसे कितना सोद्देश्य और प्रभावशाली बना सकता है।

## 20.4 व्यक्ति के चयन का आधार

व्यक्ति–चित्र के लिए किसी व्यक्ति के चयन के कई आधार हो सकते हैं। मुख्य बात यह है कि वह व्यक्ति आपके रुचि के क्षेत्र से संबंधित हो। जिस व्यक्ति का भी आप चयन करें, उसके बारे में आपको पर्याप्त और यथातथ्य जानकारी हो। अगर ऐसी जानकारी आपको नहीं है तो पहले उसे हासिल करने की कोशिश करनी चाहिए। गलत या भ्रमपूर्ण जानकारी के आधार पर लिखा गया व्यक्ति–चित्र प्रभावशाली नहीं होता। आपके लिखे व्यक्ति–चित्र में दिये गये तथ्यों पर लोग भरोसा करेंगे। अगर उन्हें किसी अन्य स्रोत से मालूम होगा कि आपकी जानकारी सही नहीं है तो आपके लेखन का प्रतिकूल असर पड़ेगा।

व्यक्ति–चित्र के लिए निम्नलिखित आधार पर व्यक्तियों का चयन हो सकता है।

1) उल्लेखनीय घटनाओं के आधार पर
2) उल्लेखनीय उपलब्धियों के आधार पर
3) जन्म दिवस, पुण्य–तिथि या मृत्यु के अवसर पर
4) आम आदमी पर

### उल्लेखनीय घटनाओं के आधार पर

व्यक्ति–चित्र लिखने का यह आम आधार है। राजनीतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक आदि क्षेत्रों में कुछ–न–कुछ ऐसा घटित होता रहता है कि उनसे संबंधित लोगों की विशेष चर्चा होने लगती है। जब भारत में विभिन्न देशों में बड़े–बड़े महोत्सव आयोजित किये और उनकी चर्चा होने लगी, तब इन उत्सवों से जुड़े एक नाम पुपुल जयकर की ओर भी लोगों का ध्यान गया। स्वाभाविक था कि लोग उनके बारे में और ज्यादा जानने को उत्सुक हुए। ऐसा व्यक्ति ''व्यक्ति–चित्र'' का विषय बन सकता है। चिपको आंदोलन के कारण पर्यावरणवादी सुदंरलाल बहुगुणा चर्चित हुए। कभी–कभी असामाजिक कार्यों के कारण भी लोग चर्चित हो जाते हैं और वे "व्यक्ति–चित्र'' के विषय बन जाते हैं। जैसे चार्ल्स शोभराज या जे.के.एल.एफ. से संबद्ध अमानुल्ला खां।

इस तरह के व्यक्ति–चित्र तभी लिखे जाते हैं जब उनसे संबंधित कोई–न–कोई घटना चर्चा के केन्द्र में हो। लोग उसी समय उनके बारे में जानना चाहते हैं। चर्चा समाप्त हो जाने के बाद उनसे संबंद्ध व्यक्तियों में पाठक की दिलचस्पी भी कम हो जाती है। इस तरह के व्यक्ति–चित्र में संबंद्ध घटना का संक्षिप्त उल्लेख भी आवश्यक होता है और यह भी बताना चाहिए कि इस घटना से पूर्व इस व्यक्ति की भूमिका क्या रही है। उस व्यक्ति का संक्षिप्त परिचय तो आवश्यक है ही।

उदाहरण के लिए अप्रैल–मई (1990) में जब गुजरात और मध्य प्रदेश में सरदार सरोवर और नर्मदा घाटी परियोजना के तहत बनने वाले बड़े बाँध के विरोध में आंदोलन की गूंज सारे देश में सुनाई दे रही थी, उस समय आंदोलन का नेतृत्व करने वाले बाबा आमटे की चर्चा हर कहीं हो रही थी। जनसत्ता के 27 मई, 1990 के अंक में बाबा आमटे का व्यक्ति–चित्र प्रकाशित हुआ। इसके आरंभ में ही बाबा आमटे के इस आंदोलन का परिचय दिया गया था–

*''यह करिश्मा मुरलीधर देवीदास आमटे ही कर सकते थे। बीमार होते हुए भी मई की चिलचिलाती धूप में वे नई दिल्ली में गोलमेथी चौक पर धरने पर बैठे। दो हजार*

*आदिवासियों के साथ उन्होंने दो बाँधों के फेर में विस्थापित होने जा रहे दस लाख लोगों की तकलीफें दिल्ली दरबार को बताई।''*

गुजरात और मध्य प्रदेश में सरदार सरोवर और नर्मदा घाटी परियोजना के तहत बनने वाले बाँधों से विस्थापन, वन का विनाश और भारी खर्च से थोड़ा ही लाभ ऐसे अहम मुद्दे थे जिनकी वजह से बाबा आमटे को इस आंदोलन का नेतृत्व संभालना पड़ा। मध्य प्रदेश के हरसूद में मेधा पाटकर और दूसरे लोगों द्वारा चलाए जा रहे आंदोलन को बाबा आमटे ने एक नई गहराई दी। इसमें अलग–अलग क्षेत्रों के जाने–माने लोगों शिवराम कारंत, सुदंरलाल बहुगुणा, शबाना आजमी आदि की भी हिस्सेदारी रही।

इसी व्यक्ति–चित्र में आगे बाबा आमटे के पूर्व कार्यों का भी परिचय दिया गया है –

*''1950 में महाराष्ट्र के चंदरपुर जिले के वरोरा गाँव के **असर** में उन्होंने आनंदवन खोला था। आनंदवन कोढ़ियों और शरीरिक तौर पर विकलांग लोगों के लिए कर्म का एक आश्रम था।*

*पचास एकड़ की पथरीली जमीन पर बने इस आनंदवन में तब सिर्फ छह कोढ़ी थे और पूँजी महज 14 रुपए लगी थी। आज इसका सालाना बजट 80 लाख रुपए से भी ज्यादा का है। यह एक समन्वित संस्था है जो ग्रामीण विकास कार्य, कृषि स्कूल, गूंगे–बहरों का स्कूल, अनाथालय, अस्पताल, बुजुर्गों के लिए आश्रम स्थल, बैंक और लाभ कमाने वाली हथकरघा दुकानें चलाती हैं।''*

उनके जीवन का संक्षिप्त परिचय देते हुए यह व्यक्ति–चित्र उनके कार्यों के सामाजिक महत्त्व को उजागर करता है।

### उल्लेखनीय उपलब्धियों के आधार पर

व्यक्ति–चित्र लिखने का यह दूसरा महत्वपूर्ण आधार है। पुरस्कार प्राप्ति, जीतने, रिकार्ड बनाने, कोई उच्च पद प्राप्त होने, पुस्तक प्रकाशित होने, सम्मानित होने जैसे कुछ कारण हैं जब संबंधित व्यक्ति पर व्यक्ति–चित्र लिखा जा सकता है। ऐसे व्यक्ति–चित्रों में उपलब्धि की चर्चा भी जरूरी है। साथ–साथ उक्त उपलब्धियों से पहले के कार्यों का संक्षिप्त उल्लेख भी करना चाहिए। उस व्यक्ति की उपलब्धि का महत्व क्या है, इसका उल्लेख करने से व्यक्ति–चित्र का महत्व बढ़ जाता है। क्षेत्र विशेष में महत्वपूर्ण कार्य करने वाले लोगों पर लेखक, कलाकार, खिलाड़ी, राजनेता आदि के बारे में व्यक्ति–चित्र प्रकाशित होते हैं। यह हमेशा आवश्यक नहीं कि उस समय चर्चा किसी प्रसंग–विशेष में हो रही हो। लेकिन व्यक्तित्व ऐसा अवश्य होना चाहिए जिसके बारे में लोग पढ़ना और जानना चाहते हों। महात्मा गाँधी, जवाहरलाल नेहरू, मेजर ध्यानचंद, कुंदनलाल सहगल, लता मंगेशकर, सत्यजित राय, सुनील गवासकर, प्रेमचंद, रवींद्रनाथ ठाकुर अमृता शेरगिल आदि कुछ ऐसे व्यक्ति हैं जिनके बारे में हमेशा कुछ न कुछ लोग जानना चाहते हैं। इन पर व्यक्ति–चित्र कभी भी लिखा जा सकता है। लेकिन यह भी आवश्यक है कि कुछ नयापन अवश्य हो। अगर वही पुरानी, घिसी पिटी बातें दुहराई जाएँगी तो व्यक्ति–चित्र प्रभावशाली नहीं होगा।

प्रख्यात पार्श्वगायिका लता मंगेशकर को जब दादा साहब फालके पुरस्कार देने की घोषणा की गयी तो विभिन्न पत्र–पत्रिकाओं ने लता मंगेशकर के व्यक्तित्व पर नये ढंग से लेख और संस्मरण प्रकाशित किये। लता मंगेशकर पर प्रकाशित ऐसे ही एक व्यक्ति–चित्र के निम्नलिखित अंश में उनके योगदान को रेखांकित किया गया हैं।

*''दरअसल लता जी उन कलाकारों में से हैं, जिन्होंने भारतीय संगीत को न सिर्फ लोकप्रियता प्रदान की, वरन् उसके मूल शास्त्रीय तत्व को भी नष्ट नहीं होने दिया। सुर पर पूर्ण नियंत्रण के साथ लता ने फिल्म संगीत को अद्‌भुत लय प्रदान की तथा करोड़ों श्रोताओं की भावनाओं को अपने स्वर की गहराई से छुआ। उनकी गायन शैली गीत की विशेषताओं को भली–भाँति उभारकर पेश करती है।''*

**(संडे मेल, 6 मई, 1990)**

**नीचे संक्षेप में उनके जीवन–संर्घष की झांकी भी प्रस्तुत की गई है –**

*''1942 में भारत छोड़ो आंदोलन के समय अभिनेता–गायक दीनानाथ मंगेशकर की पुत्री लता कोल्हापुर पहुँची, जहाँ उसे अपने परिवार के भरण पोषण के लिए मराठी फिल्मों में काम करने पर मजबूर होना पड़ा। किशोरी लता को गाने का शौक था, लेकिन उसे अभिनय करने पर मजबूर होना पड़ा....परिवार के गुजारे के लिए वे तीन सौ रुपये माह पर नौकरी करने लगीं और यहीं से लता की फिल्मी यात्रा शुरू हुई।''*

**(संडे मेल, 6 मई, 1990)**

### जन्म–दिवस, पुण्य–दिवस या मृत्यु के अवसर पर

किसी विशिष्ट व्यक्ति की जयन्ती और पुण्य तिथि के अवसर पर भी व्यक्ति–चित्र प्रकाशित किये जाते हैं। जब कोई बड़ा लेखक या कलाकार साठ, सत्तर या पिचहत्तर वर्ष पूरा करता है तो अक्सर पत्र–पत्रिकाएँ उस पर व्यक्ति–चित्र प्रकाशित करती हैं। जन्म शताब्दी पर भी व्यक्ति–चित्र प्रकाशित होते हैं। किसी विशिष्ट व्यक्ति की मृत्यु के अवसर पर भी व्यक्ति–चित्र प्रकाशित होते हैं। ऐसे व्यक्ति–चित्रों में उस व्यक्ति के योगदान की चर्चा अवश्य होनी चाहिए। मृत्यु के अवसर पर प्रकाशित व्यक्ति–चित्र ''श्रद्धांजलि'' की तरह हो सकते हैं। परंतु श्रद्धांजलि और व्यक्ति–चित्र में मुख्य अंतर यही है कि व्यक्ति–चित्र में उस व्यक्ति के जीवन परिचय की प्रमुखता रहती है जबकि "श्रद्धांजलि'' में उसके निधन से हुई क्षति और उस पर विभिन्न लोगों की राय भी रहती है।

कभी–कभी ऐसे विस्मृत होते जा रहे व्यक्ति का भी व्यक्ति–चित्र लिखा जा सकता है जिसने किसी समय अपने कार्यों से समाज और देश को प्रभावित किया था। 22 जून, 1990 को शहीद ऊधम सिंह पर **नवभारत टाइम्स** में एक व्यक्ति–चित्र प्रकाशित हुआ। इसका आरंभ निम्नलिखित ढंग से किया गया था –

*''12 जून को शहीद ऊधम सिंह के बलिदान के पचास वर्ष पूरे हुए। लेकिन हमारे संचार माध्यमों, सामाजिक संगठनों, बुद्धिजीवियों या सरकार को यह अवसर इतना महत्त्वपूर्ण नहीं लगा कि उस शहीद को याद किया जाए। याद करते भी क्यों? न तो ऊधम सिंह का नाम सत्ता की कुर्सियों से जुड़ा था, न ऊधम सिंह किसी तोपनुमा हस्ती की संतान थे और न आसपास कोई चुनाव होने जा रहा है कि ऊधम सिंह पर आँसू बहाकर वोट बटोरे जाएँ। जबकि 1940 में ऊधम सिंह की शहादत भारत में आजादी की तड़प को तीव्र बना गई थी। उनके बलिदान ने भारत के क्रांतिकारी आंदोलन को नई ऊचाँई दी थी।''*

इस व्यक्ति–चित्र में उनका जीवन परिचय भी दिया गया था –

*"26 दिसंबर, 1899 को पटियाला जिले के सुनाम कस्बे में एक रेलवे चौकीदार के घर में ऊधम सिंह जन्मे थे। कच्ची उम्र में ही माँ–बाप का साया सर से उठ गया। जिस भाई के साथ अमृतसर के यतीम–खाने में प्रताड़ित बचपन भोगा, उसकी मृत्यु के बाद ऊधम सिंह का आगे नाथ न पीछे पगहा जैसा हाल हो गया। भगत सिंह और चन्द्रशेखर आजाद के समकालीन ऊधम सिंह ने कांग्रेस के कार्यकर्ता के रूप में भी कार्य किया। जलियाँवाला बाग की दुर्घटना उनके जीवन का निर्णायक मोड़ बन गई।*

*अपने इरादों को अंजाम देने के उद्देश्य से वे अफ्रीका और अमेरिका भी भटके। लेकिन 1923 में उन्हें भगत सिंह के आग्रह पर भारत लौटना पड़ा। अवैध रिवाल्वर रखने के जुर्म में दंडित होकर वे सन् 1928 से 1932 तक मुल्तान और रावलपिंडी की जेलों में रहे। 1932 में जेल से छूटने के बाद ऊधम सिंह गुप्त रूप से लंदन पहुँचे और रोजी–रोटी की तलाश में एक कारखाने में नौकरी की। ऊधम सिंह अपने जिस कार्य के कारण अमर शहीदों की श्रेणी में उल्लेखित किए गए उसको इस "व्यक्ति–चित्र" में निम्नलिखित शब्दों में व्यक्त किया गया है।*

*13 अप्रैल 1919 को वैशाखी की याद ने उन्हें सदैव बेचैन रखा, जब पशुबल से प्रेरित ब्रिटिश साम्राज्य के संगीनों ने जलियावाला बाग को लाशों से पाट दिया था। इस सभा में ऊधम सिंह एक स्वयंसेवक के रूप में शामिल थे और जघन्य कत्लेआम से उनकी आत्मा तड़प उठी। एक शहीद की लाश को घर पहुँचाते हुए उन्होंने अपनी एक मुँहबोली बहन (अत्तरा कौर) के सामने अंग्रेजों से बदला लेने का प्रण लिया। समय, जो बड़े–बड़े घाव भर देता है, ऊधम सिंह के प्रतिशोध की आग को मंद न कर पाया। इस नरसंहार के कर्ताधर्ता जनरल डायर और तत्कालीन पंजाब के गवर्नर माइकल ओडायर की मौत ऊधम सिंह के जीवन का मकसद बन गई। इक्कीस वर्षों बाद इंग्लैंड जाकर ऊधम सिंह ने राष्ट्रीय अपमान का बदला लेकर अपनी प्रतिज्ञा पूरी की।*

*13 मार्च, 1940 को लंदन के कैक्स्टन हॉल में ईस्ट इंडिया ऐसोसिएशन और रॉयल सैंट्रल एशियन सोसाइटी द्वारा आयोजित एक समारोह में भूतपूर्व गवर्नर माइकल ओडायर को उनकी सत्सेवाओं के लिए बीस हजार पौंड की राशि देकर सम्मानित किया जाना था। भारत मंत्री लार्ड जिटलैंड भी उपस्थित थे। ज्योंही सभा समाप्त होने को थी, ऊधम सिंह के रिवॉल्वर से निकली गोलियों ने 21 वर्ष पुराना अपना हिसाब चुका लिया। माइकल ओडायर वहीं ढेर हो गये और लार्ड जिटलैंड घायल हो गए।"*

यह व्यक्ति–चित्र ऊधम सिंह को फाँसी दिये जाने (12 जून, 1940) के पचास वर्ष पूरे होने पर प्रकाशित हुआ था।

### आम आदमी के आधार पर

मामूली से मामूली आदमी के जीवन में भी कुछ न कुछ अपूर्व और उल्लेखनीय अवश्य होता है। जिसे अगर उजागर किया जाये तो वह लोगों के लिए प्रेरणास्पद, ज्ञानवर्धक और रोचक हो सकता है। कई बार पत्र–पत्रिकाओं में साधारण लोगों के जीवन के भी प्रभावशाली व्यक्ति–चित्र प्रकाशित होते हैं।

*"26 मई 1990 के **नवभारत टाइम्स** में लक्ष्मण राव नाम के एक व्यक्ति का व्यक्ति–चित्र प्रकाशित हुआ। यह व्यक्ति दिल्ली के राउज एवेन्यू के पास पान–सिगरेट की दुकान करता है। कुछ साल पहले घर से भागकर नये जीवन की तलाश करने वाले इस व्यक्ति के मन में लेखक बनने की तमन्ना है और हर तरह का संघर्ष उठाते*

*हुए उसने अपनी इस आकांक्षा को पूरा भी किया है।* उसकी पुस्तकें प्रकाशित भी हुई हैं।

इस तरह के व्यक्तियों पर लिखते हुए मुख्य पहलू है उनका जीवन संघर्ष, उनका साहस और लगन और जीवन के संवेदनशील और करूण पक्ष। अगर हम इस व्यक्ति–चित्र का जायजा लें तो हमें ये सभी विशेषताएँ मिल सकती हैं। लेखक ने सबसे पहले उसके जीवन के अंतर्विरोध को व्यक्त किया है –

*''वह घटना उसने बचपन में सुनी थी और तभी से रात–दिन यही सोचता रहता था कि रामदास कैसे मरा? आखिर जीवन क्या है? क्या इंसान को समाज के लिए कुछ किए बगैर मर जाने का अधिकार है? इन सवालों ने छोटी सी उम्र में ही उसके दिमाग में बावलापन पैदा कर दिया। लिखने की एक ललक, एक लालसा जागृत कर दी। उसकी ये ललक, ये बावलापन पूरा हो गया है क्योंकि आज वह एक लेखक है, एक प्रकाशक है और अपनी पुस्तकों का विक्रेता भी स्वयं ही है। परंतु विडम्बना तो यह है कि लोग उसे पान वाले के रूप में ज्यादा और लेखक के रूप में कम जानते हैं।*

*रामदास की मौत उसके जीवन को एक राह तो दिखा गई, लेकिन इसके लिए उसे जीवन के कठिनतम रास्तों से गुजरना पड़ा। पत्थर ढोने पड़े, मजदूर बनना पड़ा, ढाबे पर बर्तन मांजने पड़े, सड़क पर सोना पड़ा, यहाँ तक कि अपने पिता से झूठ बोलकर घर से भागने को मजबूर होना पड़ा।*

*फिर उसे लिखने की प्रेरणा कैसे मिली, यह बताया गया है :*

*उसका नाम लक्ष्मण राव है। राउज एवेन्यू में कई सरकारी दफ्तर हैं। उन्हीं दफ्तरों के पास एक पेड़ के नीचे लक्ष्मण का पान–सिगरेट का एक छोटा सा खोखा है। जहाँ पर बैठकर वह पान–सिगरेट बेचता है और खाली समय में कुछ–न–कुछ पढ़ता रहता है।*

*लक्ष्मण राव महाराष्ट्र में अमरावती जिले के एक छोटे–से गाँव (तड़ेगाँव, दशासर) का रहने वाला है। उसी गाँव में रामदास नाम का एक लड़का भी रहता था। एक बार छुट्‌टियों में रामदास अपने मामा के गाँव गया। कुछ दिनों बाद जब वह वापिस घर आ रहा था तो रास्ते में पड़ती एक स्वच्छ जल से भरी नदी में उसका नहाने का मन हुआ। अपनी इच्छा को पूरी करने के लिए रामदास कपड़े उतार नदी में कूद गया, लेकिन उसमें से वह जिन्दा बाहर नहीं निकल पाया। गाँव वाले उसकी लाश को निकाल कर बाहर लाए। बचपन में सुनी साधारण सी लगने वाली इस घटना ने लक्ष्मण के अंदर एक लेखक पैदा कर दिया। सातवीं कक्षा में पहुँचते–पहुँचते लक्ष्मण ने लघुकथाएँ लिखनी शुरू कर दी थी। आज उसकी दो पुस्तकें 'नई दुनिया' नई कहानी' (सामाजिक उपन्यास) और 'प्रधानमन्त्री' (नाटक) प्रकाशित हो चुके हैं। कुल मिलाकर अब तक वह ग्यारह उपन्यास लिख चुका है। 'रामदास उसका पहला उपन्यास था।''*

बाद में लेखक ने विस्तार से लक्ष्मण राव के जीवन का परिचय दिया है। इस तरह के व्यक्तित्व, उनकी जीवन शैली और उनकी अभिरुचियाँ, उनके संघर्ष और सफलताएँ– असफलताएँ हमें बहुत कुछ सिखाती और बताती हैं। हमेशा महान् व्यक्ति ही हमारे शिक्षक नहीं होते। साधारण लोग भी हमें बहुत कुछ सिखा सकते हैं।

**बोध प्रश्न –1**

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर संक्षेप में दें :

1) प्रोफाइल शब्द से क्या अभिप्राय है? लगभग पाँच पंक्तियों में स्पष्ट कीजिए।

......................................................................................................................................

......................................................................................................................................

......................................................................................................................................

..................................................................................................

2) व्यक्ति–चित्र क्यों प्रकाशित किए जाते हैं? लगभग पाँच पंक्तियों में स्पष्ट कीजिए।

......................................................................................................................................

......................................................................................................................................

......................................................................................................................................

..................................................................................................

3) क्या आम आदमी पर भी व्यक्ति–चित्र लिखा जा सकता है? अगर 'हाँ' तो कारण स्पष्ट कीजिए। उत्तर लगभग तीन पंक्तियों में हो।

......................................................................................................................................

......................................................................................................................................

......................................................................................................................................

..................................................................................................

4) व्यक्ति–चित्र लिखने के लिए व्यक्तियों का चयन किन आधारों पर किया जा सकता है?

......................................................................................................................................

......................................................................................................................................

......................................................................................................................................

..................................................................................................

## 20.5 लेखन की तैयारी

व्यक्ति–चित्र के लिए लेखक को पहले पूरी तैयारी कर लेनी चाहिए। अगर आप पत्रकारिता के पेशे में हैं तो आप को तरह–तरह के क्षेत्रों के लोगों पर व्यक्ति–चित्र लिखने पड़ सकते हैं, और संभव है कि इसकी तैयारी के लिए आपको आवश्यक समय भी न मिले। इसलिए जरूरी है कि आप अपना सामान्य ज्ञान विस्तृत बनाएँ, नये से नये क्षेत्रों और विषयों के बारे में आप अध्ययन बढ़ायें, उन पर प्रकाशित सामग्री की जानकारी रखें और उनका संग्रह करें या उन पर नोट लेते रहें ताकि समय पर उनका उपयोग कर सकें।

### 20.5.1 आवश्यक अध्ययन

व्यक्ति–चित्र के लिए अध्ययन आवश्यक है। कई बार आपको ऐसे व्यक्ति पर लिखना पड़ सकता है, जिसके बारे में आपको लाइब्रेरी में जाकर पुस्तकों की छानबीन करनी पड़े। हो सकता है, आपको उस व्यक्ति के बारे में सामान्य जानकारी तो हो, लेकिन

अगर पर्याप्त अध्ययन के बाद व्यक्ति–चित्र लिखेंगे तो आप कुछ नयी और महत्त्वपूर्ण जानकारी पाठकों को दे सकेंगे।

व्यक्ति–चित्र में तथ्यों और आँकड़ों का सही होना आवश्यक है। इसलिए आप अपने लेख में जो भी तथ्य और आँकड़े दें, सुनिश्चित कर लें कि वे सही हैं। तारीखों, नामों, और अन्य तथ्यों का भी सावधानी से इस्तेमाल करें। इसके लिए जरूरी है कि आप प्रमाणिक पुस्तकों और स्रोतों से ही तथ्य लें। सही तथ्य नहीं दिए जाने से भ्रम उत्पन्न हो सकते हैं। उदाहरण के लिए बंगला कवि और फिल्म अभिनेता हरीन्द्रनाथ चट्टोपाध्याय की मृत्यु (23 जून, 1990) के अवसर पर प्रकाशित एक व्यक्ति–चित्र में लिखा गया था कि वे पहली लोकसभा में गुंटुर (आंध्र प्रदेश) से चुने गए थे जबकि सत्यता यह है कि वे गुंटुर से नहीं, विजयवाड़ा से चुने गए थे।

लगातार 481 घंटे तक डिस्को करके गिनीज बुक ऑफ वर्ल्ड रिकॉर्ड में अपना नाम दर्ज कराने वाले युवक राममूर्ति पट्टाभिरमन पर **नवभारत टाइम्स** में प्रकाशित व्यक्ति–चित्र में निम्नलिखित आँकड़े भी दिये गये थे:

*''रमन को लगभग 20 हजार दर्शकों ने तालियाँ बजा बजाकर प्रोत्साहित किया। 8,600 आगंतुकों ने रजिस्टर में अपनी टिप्पणियाँ लिखीं। लगभग 150 कैसटों ने 600 वॉट के स्पीकरों पर माइकल जैकसन, मेडोना आदि के गीत और अन्य धुनें बिखेरीं। रमन ने हर पाँच घंटे के बाद 25 मिनट तक थकान मिटाई। नियमानुसार वे प्रत्येक घंटे के बाद पाँच मिनट का विश्राम कर सकते हैं या पाँच घंटे बाद इकट्ठा आराम भी किया जा सकता है।''*

**(न.भा.टा. 1 जुलाई, 1990)**

उक्त आंकड़ों के लिए आपको तथ्यों की सही जानकारी होना आवश्यक है। इसके लिए सही स्रोतों से सही जानकारी प्राप्त करनी होती है।

### 20.5.2 साक्षात्कार

व्यक्ति–चित्र को साक्षात्कार के माध्यम से प्रभावशाली बनाया जा सकता है। अगर व्यक्ति जीवित है और उससे मुलाकात संभव है तो अवश्य मिलना चाहिए। ऐसे साक्षात्कार से जो जानकारी प्राप्त होगी, उससे व्यक्ति–चित्र अधिक सार्थक और सोद्देश्यपूर्ण बनाया जा सकता है। लक्ष्मण राव नामक जिस व्यक्ति के व्यक्ति–चित्र का उदाहरण पीछे दिया गया है, उस में स्वयं लक्ष्मण राव के कथन उद्धृत किए गये हैं।

*''इस घिसटती जिंदगी को जीते–जीते मुझे यह अहसास हो गया कि इस तरह मेरा लेखक बनने का सपना कभी पूरा नहीं हो सकता। सो लेखक बनने की बात अधूरी रह गई। एक दिन कुछ शुभचिंतकों की राय और सहायता से मैंने राउज एवेन्यू में एक पेड़ के नीचे मिट्टी और ईंट का एक छोटा सा चबूतरा बनाया और पान–सिगरेट बेचने लगा।......''*

साक्षात्कार संभव न होने पर जिस व्यक्ति पर व्यक्ति–चित्र लिख रहे हैं उसके उपलब्ध न होने पर अन्य व्यक्ति/व्यक्तियों से भी उसके बारे में साक्षात्कार लिये जा सकते हैं या उस व्यक्ति विशेष के संबंध में अन्य व्यक्तियों के कथन का इस्तेमाल किया जा सकता है। उदाहरण के लिए, हॉलीवुड की प्रख्यात अभिनेत्री ग्रेटा गार्बो का 15 अप्रैल,

1990 को 85 वर्ष की उम्र में देहांत हो गया। **नवभारत टाइम्स** में उस समय लिखे गये एक व्यक्ति–चित्र में गार्बो के बारे में कई लोगों के कथन उद्धृत किए गये थे जो गार्बो के व्यक्तित्व के विभिन्न पक्षों को उजागर करते थे।

पूर्व उद्धृत लता मंगेशकर के व्यक्ति–चित्र में फिल्म अभिनेता दिलीप कुमार का निम्नलिखित कथन भी उद्धृत किया गया था जो लता मंगेशकर को दादा साहब फाल्के पुरस्कार मिलने पर कहे गये थे –

*''लता जी का व्यक्तित्व सादगी व विविधता का प्रतिरूप है। उन्होंने भारतीय संगीत को ऐतिहासिक गरिमा प्रदान की है। उन्हें पुरस्कृत कर उनके प्रति दरअसल कृतज्ञता और श्रद्धा व्यक्त की गई है।''*

### 20.5.3 सामग्री का चयन

व्यक्ति–चित्र के साथ प्रायः व्यक्ति का चित्र दिया जाता है। लेकिन इस तरह के चित्र भी दे सकते हैं। जैसे लक्ष्मण राव वाले व्यक्ति–चित्र के साथ दी गई फोटो में लक्ष्मण राव को अपनी छोटी सी टिन की दुकान में पान बेचते दिखाया गया है। ग्रेटा गार्बो वाले व्यक्ति–चित्र के साथ उसके कुछ भावपूर्ण चित्र दिये गये हैं। विश्व बुक का रिकार्ड बनाने वाले युवक रमन की नृत्य मुद्रा में तस्वीर दी गई है। कलाकारों पर लिखे गये व्यक्ति–चित्रों के साथ प्रायः उनकी कलाकृतियों या शिल्पों की तस्वीरें अवश्य दी जानी चाहिए। ऐसे चित्रों से व्यक्ति–चित्र प्रभावशाली हो जाते हैं। बड़े समाचार पत्र प्रायः विशिष्ट व्यक्तियों से संबंधित तस्वीरों का कैटलॉग या कंप्यूटर फाइल रखते हैं। ऐसी सामग्री की खोजबीन करके व्यक्ति–चित्र के साथ दी जानी चाहिए। व्यक्ति–चित्र के साथ कोष्ठक में उस व्यक्ति का महत्त्वपूर्ण कथन या अन्य किसी व्यक्ति का कथन उद्धृत किया जा सकता है।

## 20.6 व्यक्ति–चित्र के विभिन्न पक्ष

व्यक्ति–चित्र का लेखन कैसे किया जाए, यह इस बात पर निर्भर करेगा कि आप व्यक्ति–चित्र किस पर और किसके लिए तैयार कर रहे हैं। व्यक्ति–चित्र लेखन की कोई निश्चित शैली नहीं है। इसका अवश्य ध्यान रखना चाहिए कि व्यक्ति–चित्र में किन–किन बातों का उल्लेख आवश्यक है। व्यक्ति–चित्र चाहे जिस पर लिखा जाए, निम्नलिखित बातों का अवश्य उल्लेख हो –

1) जीवन परिचय

2) कार्य–क्षेत्र

3) उपलब्धि और योगदान

4) प्रासंगिकता और महत्त्व

### 20.6.1 जीवन परिचय

व्यक्ति–चित्र में व्यक्ति का संक्षिप्त जीवन परिचय अवश्य दिया जाना चाहिए। अगर व्यक्ति अपरिचित है तो जीवन परिचय कुछ विस्तार से भी दिया जा सकता है। लेकिन व्यक्ति–चित्र का आकार ही जीवन परिचय के विस्तार को तय करेगा। अगर

व्यक्ति–चित्र 400–500 शब्दों में ही प्रस्तुत किया जाना है तो जीवन परिचय भी 100–125 शब्दों से अधिक नहीं होना चाहिए।

जीवन परिचय के अंतर्गत पूरा नाम, जन्म तिथि, आयु, जन्म स्थान, शिक्षा, पारिवारिक पृष्ठभूमि, बाह्य व्यक्तित्व, स्वभावगत विशेषता आदि का उल्लेख किया जाता है। इनमें से जो तथ्य उपलब्ध न हों, उन्हें छोड़ा जा सकता है, परंतु कोशिश करनी चाहिए कि जीवन के संबंध में सभी मुख्य सूचनाएँ व्यक्ति–चित्र में दी जा सके। ग्रेटा गार्बो के व्यक्ति–चित्र में उसका जीवन परिचय निम्नलिखित शब्दों में दिया गया है :

*''स्टॉकहोम (स्वीडन) में 1905 में जन्मी गार्बो का पूरा नाम था–ग्रेटा लोविसा गुस्ताफसनथा। एक मजदूर की बेटी ग्रेटा के बचपन की स्मृतियाँ सुखद नहीं थीं। गार्बो ने कभी विवाह नहीं किया। 'मैं अकेलापन चाहती हूँ' गार्बो ने ग्रैंड होटल फिल्म में यह संवाद बोला था। 1941 के पचास सालों बाद तक गार्बो ने अकेला जीवन ही जिया।'*

उपर्युक्त विवरण में गार्बो की जन्म तिथि, जन्म स्थान, पूरा नाम और पारिवारिक पृष्ठभूमि का संक्षिप्त उल्लेख किया गया है। अगर आपने ध्यान दिया हो तो आप पाएंगे कि पारिवारिक भूमि को इस रूप में प्रस्तुत किया गया है जिससे गार्बो के व्यक्तित्व की विशिष्टता को समझा जा सके।

बाबा आमटे के व्यक्ति परिचय में भी उनकी पारिवारिक पृष्ठभूमि का उल्लेख इसी ढंग से किया गया है –

*''सीधे–सरल और मेहनती बाबा आमटे, वर्धा जिले के हिंगाघाट के ब्राह्मण जागीरदारों के परिवार में जन्मे थे। उन्होंने वकालत पास की और वरोरा में वकील का पेशा अपना लिया। एक बार अपनी जमीन–जायदाद का जायजा लेने गाँव गये। वहाँ उन्होंने किसानों की गरीबी देखी, जुलाहों, मेहतरों, भंगियों को मेहनत करते और बदहाल जिदंगी जीते देखा। उन्हें लगा कि इस जिदंगी को सुधारने के लिए कुछ किया जाए। उन्होंने गोबर को उठाया और पाथना शुरू किया। एक बार उन्होंने एक कोढ़ी को नाली में कराहता देखा। पहले वे उसे छोड़कर आगे बढ़ गये, फिर लौटे। उन्होंने उसे उठाया और डॉक्टरों के सहयोग से उसकी देखभाल की।''*

जीवन के जिस पहलू का संबंध उस व्यक्ति के कार्य–क्षेत्र से हो, उसका उल्लेख अवश्य किया जाना चाहिए ताकि उसके कार्य के महत्त्व को सही संदर्भ में समझा जा सके।

### 20.6.2 कार्य–क्षेत्र

व्यक्ति–चित्र का दूसरा महत्त्वपूर्ण पक्ष है कार्य–क्षेत्र। कार्य–क्षेत्र दो तरह के हो सकते हैं। एक जीविकोपार्जन के लिए किया जाने वाला कार्य। दूसरा, अभिरुचि का वह क्षेत्र जिसके कारण व्यक्ति को ख्याति प्राप्त हुई है। जैसे एक साहित्यकार पेशे से वकील, अध्यापक या दुकानदार भी हो सकता है। खिलाड़ी किसी बैंक में अधिकारी हो सकता है। पूर्व उद्धृत पट्टाभिरमन के व्यक्ति–चित्र में बताया गया है कि वह पेशे से इंजीनियर है और एअर फोर्स में नौकरी करता है। लक्ष्मण राव पान की दुकान चलाता है और उपन्यास और नाटक भी लिखता है।

व्यक्ति–चित्र लिखते हुए कार्य के इन दोनों क्षेत्रों का उल्लेख किया जाना चाहिए। लेकिन मुख्य चर्चा उस क्षेत्र की होनी चाहिए जिसके कारण वह व्यक्ति 'उल्लेखनीय' बन सका है। बाबा आमटे पेशे से वकील थे, लेकिन यह बात कितनों को मालूम है? आज उनकी ख्याति उनके सामाजिक कार्यों के कारण है। बाबा आमटे के गाँव की जिस घटना का उल्लेख ऊपर किया गया है उसने उनके जीवन की दिशा ही बदल डाली और उन्होंने अपना कर्म–क्षेत्र कोढ़ियों की सेवा को बना लिया। व्यक्ति–चित्र में इसका उल्लेख निम्नलिखित शब्दों में किया गया है –

*''इस घटना के बाद उन्होंने अपनी पूरी जिंदगी कोढ़ियों की देख–रेख में लगा दी। उन्होंने कुष्ठधाम खोला और खुद कलकत्ता से ट्रॉपिकल मेडिसिन में एक विशेष कोर्स किया। इसी दौरान आनंदवन, हमालकसा में आदिवासियों के लिए एक परियोजना शुरू की। आनंदवन एक कम्यून की तरह खुला। बाबा सिर्फ कोढ़ियों को ठीक करने में नहीं, बल्कि उन्हें जिंदगी जीने की नई रोशनी देने में भी कामयाब रहे। उन्होंने आदिवासियों को उनके अधिकार दिलाने के लिए भी संघर्ष किया।''*

कार्य–क्षेत्र के अंतर्गत व्यक्ति की ऐसी अभिरुचियों का भी उल्लेख किया जा सकता है जो उसके बहुआयामी व्यक्तित्व को उजागर करे। बाबा आमटे के व्यक्ति–चित्र में यह भी बताया गया है कि ''बाबा की दिलचस्पी हिंदुस्तानी और पश्चिमी संगीत–साहित्य में भी है। वे खुद कवि हैं। ''पूर्व उद्धृत पट्टाभिरमन पेशे से इंजीनियर, शौक से नर्तक और साथ ही एथलीट भी हैं। इस तरह की सूचनाओं से व्यक्ति–चित्र को प्रभावशाली बनाया जा सकता है।

### 20.6.3 उपलब्धि और योगदान

व्यक्ति–चित्र का तीसरा महत्वपूर्ण पक्ष है– उपलब्धियों और योगदान का उल्लेख। व्यक्ति का जो भी कार्य–क्षेत्र है उसमें उसकी उपलब्धियाँ ही उसे उल्लेख के योग्य बनाती हैं। ये उपलब्धियाँ पुरस्कार और सम्मान के रूप में ही हो यह आवश्यक नहीं है, बल्कि लोकप्रियता, पद और प्रतिष्ठा भी उपलब्धियाँ ही हैं। उपलब्धियाँ वस्तुतः व्यक्ति के योगदान को व्यक्त करती हैं। इसलिए इन सभी का उल्लेख व्यक्ति–चित्र में किया जाना चाहिए। बाबा आमटे ने सामाजिक सेवा (कोढ़ियों की सेवा) का जो महान अभियान चलाया उसके कारण उन्हें लोकप्रियता मिली और पुरस्कृत भी किया गया। इस व्यक्ति–चित्र में बाबा आमटे की उपलब्धियों का उल्लेख भी किया गया है –

*''मानवता की खातिर त्याग और मेहनत की तस्वीर पेश करने के लिए बाबा आमटे को 1985 में मैगसेसे पुरस्कार से सम्मानित किया गया। इस पुरस्कार की राशि को उन्होंने आनंदवन के ही काम में लगा दिया। 1979 में उन्हें जमनालाल बजाज पुरस्कार मिला था। पद्मश्री से वे 1971 में अलंकृत हुए थे। वे राष्ट्रीय एकता परिषद के भी सदस्य रहे हैं।''*

व्यक्ति के योगदान के कई रूप होते हैं। एक लेखक अपनी रचना में नये प्रयोग करके साहित्य में योगदान करता है। वह अपने कार्य द्वारा साहित्य को नयी दिशा देता है और सम्मानित भी होता है। ऐसे लेखक पर लिखते हुए उसको प्राप्त पुरस्कारों के साथ–साथ उसके साहित्य के इस पक्ष का उल्लेख अवश्य करना चाहिए। इसी प्रकार किसी खिलाड़ी के खेल की अपनी विशिष्ट शैली का उल्लेख भी करना चाहिए ताकि उसके योगदान और उपलब्धियों को सही परिप्रेक्ष्य में समझा जा सके।

### 20.6.4 प्रासंगिकता और महत्व

व्यक्ति–चित्र में व्यक्ति के महत्व का उल्लेख अवश्य होना चाहिए। विशेष रूप से तत्कालीन स्थितियों में उस व्यक्ति के महत्व को रेखांकित किया जाना चाहिए क्योंकि व्यक्ति–चित्र की तात्कालिकता का कारण वही होगा। यह महत्व उसके कार्य के मूल्यांकन द्वारा हो सकता है। इसके लिए किसी अन्य महत्वपूर्ण व्यक्ति के कथन को भी उद्धृत कर सकते हैं। लता मंगेशकर पर लिखे गये व्यक्ति–चित्र में उनके महत्व को लेखक ने निम्नलिखित शब्दों में प्रस्तुत किया है –

*''दरअसल लता जी कुछ उन कलाकारों में से हैं जिन्होंने भारतीय संगीत को न सिर्फ लोकप्रियता प्रदान की, वरन उसमें मूल शास्त्रीय तत्व को भी नष्ट नहीं होने दिया। सुर पर पूर्ण नियंत्रण के साथ लता ने फिल्मी संगीत को अद्‌भुत लय प्रदान की तथा करोड़ों श्रोताओं की भावनाओं को अपने स्वर की गहराई से छुआ। उनकी गायन शैली गीत की विशेषताओं को भली भाँति उभार कर पेश करती है।''*

**(संडे मेल, 6 मई, 1990)**

इसी में उनके गायन की प्रासंगिकता को भी रेखांकित किया गया है –

*''अपने चालीस वर्ष के लंबे कैरियर में उनसे टक्कर लेने वाली कोई गायिका सामने नहीं आयी। आज जब वे अपनी प्रतिभा के चरम बिन्दु पर पहुंच चुकी हैं और अनेक पार्श्वगायिकाएँ उनके आशीर्वाद से इस क्षेत्र में आगे बढ़ने लगी हैं, फिर भी हिन्दी फिल्में, पार्श्व संगीत और पार्श्व संगीतज्ञ लता मंगेशकर के बिना अधूरा है।''*

उपर्युक्त व्यक्ति–चित्र में फिल्म निर्देशक गुलजार और अभिनेता दिलीप कुमार के कथन भी उद्धृत किये गये हैं जिनमें लता मंगेशकर की गायन शैली के महत्व को उजागर किया गया है।

उपर्युक्त बातों के अतिरिक्त व्यक्ति–चित्र में व्यक्ति के विचार और दृष्टिकोण को भी प्रस्तुत करना चाहिए। इससे उसके सोच की दिशा और उसकी वैचारिक क्षमता को भी पहचाना जा सकता है।

**बोध प्रश्न–2**

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर संक्षेप में दें ।

1) व्यक्ति–चित्र के लेखन के लिए अध्ययन की आवश्यकता को स्पष्ट कीजिए।

..........................................................................................................

..........................................................................................................

..........................................................................................................

2) व्यक्ति–चित्र में व्यक्ति के किन–किन पक्षों को प्रस्तुत करना चाहिए?

..........................................................................................................

..........................................................................................................

..........................................................................................................

3) कार्यक्षेत्र के अंतर्गत किन–किन बातों का उल्लेख किया जाना चाहिए?

........................................................................................................

........................................................................................................

........................................................................................................

........................................................................................................

## 20.7 व्यक्ति–चित्र का लेखन

व्यक्ति–चित्र के जिन विभिन्न पक्षों की चर्चा की गयी है, उन्हीं से मिलकर व्यक्ति–चित्र का निर्माण होता है। प्रश्न यह है कि इन पक्षों को किस क्रम में रखा जाए और प्रत्येक पक्ष को कितना स्थान दिया जाए। इन बातों को तय करने के लिए यह जानना आवश्यक है कि "व्यक्ति–चित्र" के लिए पत्र–पत्रिकाओं में कितना स्थान निर्धारित है और आपका पाठक वर्ग कौन–सा है।

### 20.7.1 व्यक्ति–चित्र का आकार

अगर व्यक्ति–चित्र निबंध के आकार में लिखा जाना है अर्थात् 400–600 शब्दों से लेकर लगभग 2000 शब्दों तक तो निश्चय ही उपर्युक्त सभी पक्षों को विस्तार दिया जा सकता है। लेकिन कई बार व्यक्ति–चित्र 100–300 शब्दों तक में भी लिखा जाता है, वहाँ व्यक्ति–चित्र के आवश्यक सभी पक्षों को समेटना संभव नहीं है। वहाँ अत्यंत संक्षेप में बहुत कम सूचनाओं के साथ व्यक्ति–चित्र लिखना होता है। उदाहरण के लिए निम्नलिखित व्यक्ति–चित्र को देखिए –

*"दुबले–पतले और मृदुभाषी लक्ष्मीचंद जैन सरकार की आर्थिक नीतियों पर चर्चा छिड़ने पर जहर उगलने लगते हैं तो एकबारगी अचंभित हो जाना पड़ता है। लेकिन जनसेवा के लिए 1989 को रेमन मेगसेसे पुरस्कार पाने वाले इस 64 वर्षीय अर्थशास्त्री और सामाजिक कार्यकर्ता की आस्था गांधी की अवधारणा के अनुरूप आत्मनिर्भर गाँव बनाने की है। वे करघा उद्योग के लिए भी मदद चाहते हैं, "योजना आयोग लाखों करघा मजदूरों के फायदे के लिए कुछ करता तो यही मेरे लिए पुरस्कार होता।"*

यह लगभग 80 शब्दों में लिखा गया व्यक्ति–चित्र है जो 31 अगस्त, 1989 के हिंदी **'इंडिया टुडे'** के स्तंभ **'चर्चित चेहरे'** में प्रकाशित हुआ था। लेखक ने इतने कम शब्दों में व्यक्ति–चित्र के लिए आवश्यक प्रायः सभी महत्वपूर्ण सूचनाएँ देने की कोशिश की है।

**जीवन परिचयः** लक्ष्मीचंद जैन (नाम), 64 वर्षीय (आयु), दुबले–पतले मृदुभाषी (बाह्य व्यक्तित्व और स्वभाव), गांधीवादी (दृष्टिकोण)

**कार्य–क्षेत्र :** अर्थशास्त्री और सामाजिक कार्यकर्ता

**उपलब्धि एवं योगदान :** 1989 में रेमन मेगसेसे पुरस्कार से सम्मानित, आत्मनिर्भर गाँव बनाने के लिए जनसेवा।

**प्रासंगिकता और महत्व :** सरकार की आर्थिक नीतियों की आलोचना और वैकल्पिक अवधारणा पेश करना।

उपर्युक्त सूचनाओं को अत्यंत संक्षेप में प्रस्तुत किया गया है। इस संक्षिप्त व्यक्ति–चित्र की विशेषता यही है कि इसे परिपूर्ण व्यक्ति–चित्र बनाने की कोशिश की गयी है। यहाँ तक कि व्यक्ति–चित्र को और अधिक प्रामाणिक और सार्थक बनाने के लिए इसमें लक्ष्मीचंद जैन के एक कथन को उन्हीं के शब्दों में उद्धृत किया गया है। साथ में उनकी फोटो भी दी गयी है।

संक्षिप्त व्यक्ति–चित्र लिखते हुए हमें इन्हीं बातों का ध्यान रखना चाहिए। अत्यंत आवश्यक सूचनाओं को संक्षेप में प्रस्तुत करते हुए हमें व्यक्ति–चित्र तैयार करना चाहिए।

## 20.7.2 व्यक्ति–चित्र की शैली

अपेक्षाकृत बड़े व्यक्ति–चित्र में शैली का प्रश्न उपस्थित होता है। विभिन्न पक्षों को समेटते हुए व्यक्ति–चित्र कैसे लिखें, इसका कोई निश्चित फॉर्मूला नहीं है। बेहतर यही रहता है कि व्यक्ति–चित्र का आरंभ उस व्यक्ति से जुड़े उस प्रसंग से किया जाए जिसके कारण वह चर्चा का विषय बना है। इससे सुविधा यह रहती है कि आरंभ में ही पाठक को यह स्पष्ट हो जाता है कि उस व्यक्ति की चर्चा किस संदर्भ में की जा रही है। बाबा आमटे पर लिखे गये व्यक्ति–चित्र का आरंभ इसी ढंग से हुआ है जिसे हम यहां ऊपर उद्धृत कर रहें हैं –

*''यह करिश्मा मुरलीधर देवीदास आमटे ही कर सकते थे। बीमार होते हुए भी मई की चिलचिलाती धूप में वे नई दिल्ली में गोलमेथी चौक पर धरने पर बैठे। दो हजार आदिवासियों के साथ उन्होंने दो बाँधों के फेर में विस्थापित होने जा रहे दस लाख लोगों की तकलीफें दिल्ली दरबार को बताई।''*

गुजरात और मध्य प्रदेश में सरदार सरोवर और नर्मदा परियोजना के तहत बनने वाले बड़े बाँधों से विस्थापन, वन का विनाश और भारी खर्च से थोड़ा ही लाभ ऐसे अहम् मुद्दे थे जिनकी वजह से बाबा आमटे को इस आंदोलन का नेतृत्व संभालना पड़ा। मध्य प्रदेश के हरसूद में मेधा पाटकर और दूसरे लोगों द्वारा चलाए जा रहे आंदोलन को बाबा आमटे ने नई गहराई दी।

मृत्यु के बाद लिखे गये व्यक्ति–चित्र में मृत्यु का उल्लेख किया जाता है, विशेष रूप से तब जब वह व्यक्ति कम परिचित हो। लेकिन लोकप्रिय व्यक्ति पर लिखे जाते वक्त आरंभ में इसका उल्लेख आवश्यक नहीं है। ऐसे में व्यक्ति–चित्र को उस व्यक्ति के किसी ऐसे पहलू से आरंभ कर सकते हैं जो सर्वाधिक महत्वपूर्ण हो। उदाहरण के लिए, गार्बो के जिस व्यक्ति–चित्र का उल्लेख पहले कर आये हैं, उसका आरंभ लेखक विनोद भारद्वाज ने ग्रेटा गार्बो के चेहरे की चर्चा से किया है जिसे वे गार्बो के व्यक्तित्व का सर्वाधिक उल्लेखनीय पहलू मानते हैं –

*''ग्रेटा गार्बो के चेहरे पर एक अनोखी चमक थी, एक डर, एक अकेलापन, एक जादू और आशंका का भी एक अद्वितीय आलोक। सिनेमा के इतिहास में शायद किसी अभिनेत्री को इस तरह से याद नहीं किया जाएगा। गार्बो का चेहरा ही जैसे एक संपूर्ण शरीर था। इस चेहरे की न जाने कितनी व्याख्याएँ की जा चुकी हैं।''*

कभी व्यक्ति–चित्र का आरंभ उस व्यक्ति के कथन से भी किया जा सकता है –

*''इस पुरस्कार के साथ मुझ पर महिलाओं के लिए कुछ सकारात्मक कार्य करने का दायित्व (जिम्मेदारी) आ पड़ा है। इसीलिए मैंने फैसला किया है कि देश में और खासकर देश की राजधानी दिल्ली में बलात्कार, महिलाओं और युवतियों से छेड़छाड़ जैसी घिनौनी हरकतों से बचाने के लिए कदम उठाऊँ। मैं अपनी संस्था 'रक्षक' (जिसकी स्थापना शीघ्र होगी) के जरिए लड़कियों को आत्मरक्षा करना सिखाऊँगी। इस संस्था के लिए समाजसेवी और शहरी नागरिकों से सलाह मशविरा किया जा रहा है। '23 साल की मनीषा वर्मा ने राष्ट्रपति से शौर्यचक्र पाने के बाद अपनी राय जाहिर की।''*

**(जनसत्ता, 29 अप्रैल 1990)**

मनीषा वर्मा पर लिखे इस व्यक्ति–चित्र का आरंभ उसके एक कथन से किया गया है। कहने का अर्थ यही है कि व्यक्ति–चित्र का आरंभ किसी भी तरीके से कर सकते हैं। केवल यह ध्यान रखना जरूरी है कि आरंभ से ही पाठक के सामने स्पष्ट हो कि इस व्यक्ति की चर्चा क्यों की जा रही है।

व्यक्ति–चित्र का शेष कलेवर पूरा करते हुए अन्य पक्षों को सही क्रम में और परस्पर संबद्धता बनाये रखकर लिखिए। हरेक पक्ष जरुरी नहीं कि एक ही स्थान पर उल्लिखित हो। वह जहाँ तक सबसे आवश्यक हो वहीं प्रस्तुत करना चाहिए।

व्यक्ति–चित्र सीधे–सीधे वर्णनात्मक रूप में भी लिखा जा सकता है, परंतु व्यक्ति–चित्र को अधिक प्रभावशाली तभी बनाया जा सकता है जब उसे रचनात्मक रूप दिया जाए। बेहतर हो कि सूचनाओं का उल्लेख और अपनी बात को वर्णनात्मक रूप में रखने की बजाय उन्हें रोचक नवीन और कल्पनाशील ढंग से कहें। बाबा आमटे वाले व्यक्ति–चित्र का उदाहरण लें। बाबा आमटे के कार्यों में उनकी पत्नी का सहयोग भी रहा। इस बात को व्यक्ति–चित्र में निम्नलिखित रूप में प्रस्तुत किया गया –

*''बाबा आमटे ने जो कुछ किया वह शायद संभव न होता अगर उनके साथ उनकी पत्नी साधना ताई न होती। ताई के नाम से हर किसी की जुबान पर छाई रहने वाली ''ताई'' ने बाबा आमटे को समझा और उनके काम को पूरा सहयोग दिया।''*

उपर्युक्त बात निम्नलिखित रूप में लिखने पर मात्र तथ्य का उल्लेख होकर रह जाती :

*''बाबा आमटे को अपने कार्यों में पत्नी साधना ताई का भी सहयोग मिला।''*

दोनों तरह की प्रस्तुति का अंतर आप स्वयं अनुभव कर सकते हैं। अपनी शैली को जटिल और आलंकारिक भी न बनाइए। जटिलता से व्यक्ति–चित्र में रोचकता खत्म होगी और आलंकारिकता से लोग आपकी बात के मर्म तक नहीं पहुँच पायेंगें।

अपने व्यक्ति–चित्र को समाप्त भी रोचक ढंग से कीजिए। व्यक्ति के महत्त्व को उजागर करते हुए, उसके योगदान को रेखांकित करते हुए, उस व्यक्ति के संबंध में किसी अन्य के कथन को उद्धृत करते हुए या स्वयं उस व्यक्ति के कथन को उद्धृत करते हुए व्यक्ति–चित्र को समाप्त किया जा सकता है। व्यक्ति–चित्र जहाँ भी खत्म करें, वह अधूरा नहीं लगना चाहिए। उसे नकारात्मक कथन के साथ भी समाप्त नहीं करना चाहिए। व्यक्ति–चित्र को खत्म करते हुए पाठक को यह संतोष मिलना चाहिए कि उस 'व्यक्ति' के संबंध में उसे कुछ "नया" जानने को मिला है 'नया' का अर्थ नयी

सूचनाओं और तथ्यों से ही नहीं है वरन नये दृष्टिकोण और नये ढंग की प्रस्तुति से भी है।

### 20.7.3 व्यक्ति–चित्र की भाषा

व्यक्ति–चित्र की भाषा समाचार लेखन की भाषा से भिन्न होनी चाहिए। वह न तो तथ्यों का कथन मात्र व्यक्त करने वाली सरल और सपाट होनी चाहिए, न ही निबंध की तरह गूढ़ और जटिल। इसे संस्मरण और रेखाचित्र की तरह सहज, रोचक और रचनात्मक होना चाहिए। व्यक्ति–चित्र लिखते हुए लेखक संस्मरण और रेखाचित्र वाले लेखक की तरह 'गहरे जुड़ा हुआ' तो नहीं हो सकता, परंतु उसे इतना निर्लिप्त भी नहीं होना चाहिए कि वह व्यक्ति को ठीक से समझ ही न सके। व्यक्ति–चित्र का मुख्य उद्देश्य ''व्यक्ति'' को अन्य लोगों से परिचित कराना है। भाषा में कुछ सीमा तक वस्तुपरकता आवश्यक है। लेकिन यह 'परिचय' किस स्तर पर कराया जा रहा है, व्यक्ति–चित्र की भाषा पर निर्भर करेगा। अति विशिष्ट और लोकप्रिय व्यक्ति को सामान्य अर्थों में परिचित नहीं कराया जा सकता। उसके व्यक्तित्व के कुछ नये पहलू उजागर करने होंगे। अगर उन्हें प्रभावशाली ढंग से नहीं रखा जाता है तो व्यक्ति–चित्र की सार्थकता नहीं रहेगी। व्यक्ति–चित्र की भाषा सामान्य बोलचाल के नजदीक होनी चाहिए। नितांत किताबी भाषा निबंध की तरह जटिल हो सकती है। भाषा सहज और प्रवाहमय हो। तथ्यों को भी रोचक और प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत करे। न भाषा अधिक भावुक और न ही शुष्क हो। वाक्य छोटे और अर्थ स्पष्ट देने वाले हों।

पूर्व में उद्धृत व्यक्ति–चित्रों के अंशों की भाषा का रेयक्टर आप समझ सकते हैं कि व्यक्ति–चित्र के लिए किस तरह की भाषा उपयुक्त है।

### 20.7.4 व्यक्ति–चित्र का शीर्षक

छोटे व्यक्ति–चित्रों में प्रायः शीर्षक की आवश्यकता नहीं होती, परंतु बड़े व्यक्ति–चित्र में शीर्षक अवश्य दिये जाते हैं। शीर्षक पत्रिका का संपादकीय विभाग भी निर्धारित करता है।

शीर्षक लंबे भी हो सकते है और छोटे भी। परंतु उन्हें सहज और आर्कषक होना चाहिए। शीर्षक में व्यक्ति के नाम का उल्लेख होना अनिवार्य भी नहीं है। कभी उस व्यक्ति के कथन का उपयोग किया जाता है तो कभी व्यक्ति के महत्त्व को उजागर करने वाला शीर्षक दिया जाता है। पूर्व उद्धृत व्यक्ति–चित्रों के शीर्षक नीचे दिये जा रहे है। आप विचार करके देख सकते हैं कि ये शीर्षक व्यक्ति के किसी–न–किसी महत्त्वपूर्ण पक्ष को उजागर करते हैं :

**बाबा आमटे** : इस समाज में अब भी बाबा आमटे हैं।

**मनीषा वर्मा** : आत्म–रक्षा दिलाती है सम्मान

**ग्रेटा गार्बो** : आध्यत्मिक ग्लैमर की रोशनी और अँधेरा

**लक्ष्मण राव** : अंततः लक्ष्मण राव का सपना साकार हुआ

**लता मंगेशकर** : लता मंगेशकर : वे संगीत की ''दादा साहब फालके'' हैं

आप देखेंगे कि कुछ शीर्षकों में नाम का इस्तेमाल किया गया है। लता मंगेशकर और बाबा आमटे वाले शीर्षक उनके महत्त्व को उजागर करते हैं तो मनीषा वर्मा और लक्ष्मण राव के शीर्षक उनके कार्यो की सफलता को। ग्रेटा गार्बो का शीर्षक वैचारिक अधिक है और वह ग्रेटा के व्यक्तित्व के विश्लेषण से उपजी वैचारिक टिप्पणी के रूप में है।

हमेशा सोच–विचार कर और सर्वाधिक उपयुक्त और प्रभावशाली शीर्षक दीजिए।

**बोध प्रश्न–3**

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर संक्षेप में दें।

1) संक्षिप्त व्यक्ति–चित्र में क्या विशेषताएँ होनी चाहिए? लगभग पाँच पंक्तियों में उल्लेख कीजिए।

......................................................................................................

......................................................................................................

......................................................................................................

2) व्यक्ति–चित्र के आरंभ में किस पक्ष को लेना चाहिए और क्यों?

......................................................................................................

......................................................................................................

......................................................................................................

3) व्यक्ति–चित्र की भाषा की क्या विशेषताएँ होनी चाहिए? लगभग पाँच पंक्तियों में उत्तर लिखिए।

......................................................................................................

......................................................................................................

......................................................................................................

## 20.8 किसी संस्था के प्रोफाइल का लेखन

जैसा कि प्रस्तावना में कहा गया है, प्रोफाइल का संबंध संस्थाओं से भी होता है। जब कोई संस्था किसी कारण से चर्चा का विषय बनती है तो लोगों का ध्यान बरबस ही उधर चला जाता है। लोग उस संस्था के विषय में अधिक से अधिक जानकारी पाना चाहते हैं। ऐसे में समय और अवसर का सदुपयोग करते हुए पत्र–पत्रिकाएँ उस संस्था का प्रोफाइल प्रकाशित करती हैं और उसमें उससे जुड़ी लगभग सभी महत्त्वपूर्ण जानकारियाँ शामिल होती हैं। उदाहरण के लिए, पिछले दिनों केन्द्रीय विश्वविद्यालय बनाए जाने के प्रसंग में इलाहाबाद विश्वविद्यालय की खूब चर्चा हुई। वैसे तो वह भारत के सबसे प्रतिष्ठित विश्वविद्यालयों में से एक है, लेकिन पिछले कई वर्षों से उसे केन्द्रीय विश्वविद्यालय का दर्जा दिए जाने की माँग चल रही थी। अब यह माँग पूरी हो चुकी है। उसे केन्द्रीय विश्वविद्यालय का दर्जा मिल चुका है जो कि उसकी प्रतिष्ठा के बिल्कुल अनुकूल है। उसे केन्द्रीय विश्वविद्यालय बनाए जाने के बाद जनसत्ता में 23 अक्टूबर 2005 को दामोदर अग्रवाल का एक फीचर 'सुध अपने ऑक्सफोर्ड की' शीर्षक से प्रकाशित हुआ है। इस प्रोफाइल में विश्वविद्यालय के अतीत और वर्तमान

की चर्चा के साथ ही भविष्य की चिन्ता भी प्रकट हुई है। अपने कथ्य, अपनी भाषा और प्रस्तुति में यह एक सुदंर और पठनीय प्रोफाइल है। इसकी शैली भी प्रभावशाली है। इस 'प्रोफाइल' का आरंभ बहुत रोचक ढंग से हुआ है –

*''इलाहाबाद विश्वविद्यालय देश के अत्यंत गौरवशाली और भारत में सबसे पहले खोले जाने वाले चार बड़े आधुनिक विश्वविद्यालयों में से एक रहा है। इसकी गोथिक इमारतें हमें अब भी ऑक्सफोर्ड विश्वविद्यालय की याद दिलाती हैं। इमारत ही नहीं एक समय में इसके पाठ्यक्रम भी ऑक्सफोर्ड विश्वविद्यालय के मुकाबले के समझे जाते थे। शिक्षकों की ख्याति भी दूर–दूर तक फैली थी और जिन छात्र–छात्राओं में इसमें दाखिला लेकर पढ़ने का जोश था, उन्हें बहुत अच्छा समझा जाता था। जो पढ़ने का अवसर पाते थे वे अपने भाग्य को सराहते थे।*

*अंग्रेजों के जमाने में भी बड़े से बड़े ओहदे भी इलाहाबाद विश्वविद्यालय से निकले छात्रों को ही दिए जाते थे। इंडियन सिविल सेवा में भी वे ही सबसे आगे होते थे। राज्य सिविल सेवा तो मानों उन्हीं के खातों में होती थी। कई सालों तक आजादी के बाद भी यही सिलसिला चलता रहा। बाद में जब भारतीय प्रशासनिक सेवाओं की स्थापना हुई तो उसमें भी इलाहाबाद विश्वविद्यालय के विद्यार्थियों का ही जौहर चमकता रहा। गोविंद वल्लभ पंत और लालबहादुर शास्त्री जैसे बड़े नेता और प्रशासक भी अपने मंत्रालयों में उन्हीं को रखना अधिक पसंद करते थे। एक दृष्टि से देखें तो 1947 से लेकर 1970 तक केंद्र सरकार का पूरा प्रशासनिक कारोबार जिन बड़े अफसरों के हाथ में था, वे इलाहाबाद विश्वविद्यालय के ही थे।''*

इस प्रोफाइल का मध्य विश्वविद्यालय के गरिमापूर्ण अतीत और उस गरिमा को लगे ग्रहण को सामने लाता है –

*''शिक्षकों की तब एक गरिमामयी और गौरवशाली परंपरा थी। विभागों के बीच आपस में जो तालमेल था वह देखते ही बनता था। हिन्दी और अंग्रेजी विभाग के बीच जरूर एक जबरदस्त रस्साकशी थी, जिसमें खिलाड़ियों को मजा आता था। हिंदी विभाग में डॉ. धीरेंद्र वर्मा, डॉ रसाल, डॉ. राम कुमार वर्मा आदि उद्भट विद्वान थे। नई पीढ़ी के प्रध्यापकों में डॉ. जगदीश गुप्त और डॉ. धर्मवीर भारती आ गए थे। इनका नाम यहां इसलिए गिनाया जा रहा है कि साहित्य रचना और साहित्य की समालोचना के क्षेत्र में ये विख्यात हो चुके थे।*

*अंग्रेजी विभाग भी कोई कम नहीं था। उसकी गौरवशाली पठन–पाठन की परंपरा की नींव डाली थी डॉ. अमरनाथ झा ने, जो स्वयं अंग्रेजी के प्राफेसर और हिन्दी, संस्कृत के विद्वान थे। उस समय भी वे ऑक्सफोर्ड विश्वविद्यालय में अंग्रेजों को अंग्रेजी पढ़ाने जाते थे। बाद में विभाग के नाम चमकाने वालों में एस.सी देव साहब और डॉ. पी.ई दस्तूर हुए। रघुपति सहाय 'फिराक' (फिराक साहब) और डॉ. हरिवंश राय बच्चन भी अंग्रेजी विभाग में ही थे। प्रगतिशील हिन्दी समालोचना के अग्रणी डॉ. प्रकाशचंद्र गुप्त भी वहीं थे। इसके आलावा डॉ. ईश्वरी प्रसाद, डॉ. रंजन, डॉ. गोरख प्रसाद और डॉ. अमरनाथ अग्रवाल आदि अन्य विभागों के दूसरे सितारे भी इलाहाबाद विश्वविद्यालय में पढ़ाते हुए अपनी चमक लगभग पूरे देश में बिखेर रहे थे।*

*लेकिन तभी एक बौद्धिक अकाल सा आ गया। लोग इलाहाबाद विश्वविद्यालय छोड़कर जाने लगे। माहौल बिगड़ने लगा। दक्षिण से आने वाले विद्यार्थी दक्षिण में ही पढ़ने को*

*मजबूर होने लगे। जो आते वे मन मारकर आते और बेमन से पढ़ते थे। विश्वविद्यालय को गंदी राजनीति का आखाड़ा बना दिया गया। छात्र–संघ हावी होने लगा।''*

प्रसन्नता के माहौल को रेखांकित करने के साथ ही इस प्रोफाइल का अंत कुछ वाजिब चिन्ताओं के साथ हुआ है –

*''विश्वास किया जा रहा है कि विश्वविद्यालय के पुराने दिन एक बार फिर लौटेंगे। खर्च का पूरा पैसा सीधे विश्वविद्यालय अनुदान आयोग से आयेगा और उत्तर प्रदेश सरकार पर उसकी निर्भरता समाप्त हो जाएगी। शिक्षकों को केंद्र के समान वेतनमान और भत्ते मिलने लगेंगे, छात्रों को केंद्रीय विश्वविद्यालय की डिग्री मिलेगी। संबद्ध कॉलेजों का स्टेटस बढ़ेगा, वे विश्वविद्यालय के अभिन्न अंग बन जाएंगे। पुस्तकें खरीदी जाने लगेंगी, भवनों का जीर्णोद्धार होगा, प्रयोगशालाएं एक बार फिर सांस लेने लगेंगी। इसलिए माहौल जश्न का है।*

*इलाहाबाद विश्वविद्यालय की स्थापना 1887 में हुई थी और बीसवीं शताब्दी के शुरू होते ही देश में शिक्षा का यह एक प्रमुख केंद्र बन चुका था। 1987 में जब इसकी सौवीं जयन्ती मनाई जा रही थी, तब तक यह काफी बिगड़ चुका था। 2005 में अब आशा की एक किरण जागी है इसकी गौरवशाली बहाली की दिशा में। लेकिन इसके केंद्रीय विश्वविद्यालय हो जाने से ही दशकों का कूड़ा साफ नहीं हो जाता। बिगड़े हुए संस्कारों को सुधारना होगा। संबद्ध डिग्री कॉलेजों को प्रतिष्ठा देने का काम विश्वविद्यालय की नई कार्यकारिणी को करना होगा। सबसे बड़ी समस्या होगी उन्हें उत्तर प्रदेश सरकार के हायर एजुकेशन कमीशन की नियुक्ति–प्रणाली से छुटकारा दिलाना। शिक्षकों को भी अपनी योग्यता बढ़ानी होगी और काम के प्रति समर्पित होना पड़ेगा। सिर्फ ताज पहन लेने से ही ओहदा नहीं बढ़ जाता। इसके लिए काम भी करना होगा।''*

इलाहाबाद विश्वविद्यालय के इस प्रोफाइल का अध्ययन करते हुए आपने यह देखा कि किसी संस्था के प्रोफाइल लेखन में कैसी भाषा और शैली का प्रयोग किया जाता है। आप इस भिन्न भाषा – शैली को भी अपना सकते हैं, लेकिन यह ध्यान रखते हुए कि आप द्वारा लिखित प्रोफाइल को हर वर्ग के लोग पढ़ेंगे। किसी भी दशा में सहजता और सरलता का लोप नहीं चाहिए। किसी संस्था का प्रोफाइल लिखने से पूर्व आप उससे संबद्ध कुछ लोगों का साक्षात्कार भी ले सकते हैं। यदि आवश्यक लगे तो जनता में कुछ लोगों को चुनकर उनसे भी बातचीत कर सकते हैं। संस्था के इतिहास पर भी अवश्य दृष्टि डालनी चाहिए। उसकी कार्य प्रणाली भी आपके प्रोफाइल में आनी चाहिए।

## 20.9 सारांश

- फीचर लेखन से संबंधित व्यवहारमूलक पाठ्यक्रम की इस इकाई में आपने व्यक्ति–चित्र लेखन के बारे में अध्ययन किया है। व्यक्ति–चित्र फीचर लेखन का एक महत्त्वपूर्ण अंग है। व्यक्ति–चित्र का उद्देश्य ऐसे व्यक्तियों का परिचय देना है जो अपने कार्यों द्वारा उल्लेख योग्य हों। व्यक्ति–चित्र का उद्देश्य ऐसा परिचय प्रस्तुत करना है जिसके माध्यम से व्यक्ति विशेष की एक नयी पहचान कायम हो सके। इस इकाई को पढ़ने के बाद आप व्यक्ति–चित्र के महत्त्व और उद्देश्य पर प्रकाश डाल सकते हैं।

- व्यक्ति–चित्र के लेखन के लिए व्यक्ति विशेष के संबंध में पर्याप्त और सही जानकारी आवश्यक है और इसके लिए अध्ययन, साक्षात्कार आदि जरूरी हो सकते हैं। व्यक्ति–चित्र के साथ प्रकाशन हेतु फोटो–चित्र आदि भी दिये जा सकते हैं। इस इकाई को पढ़ने के बाद आप व्यक्ति–चित्र के लेखन के चारों पक्षों को समझ सकते हैं और लेखन के दौरान उनका समुचित ढंग से प्रयोग कर सकते हैं।

- व्यक्ति–चित्र के चार प्रमुख पक्ष हैं : जीवन परिचय, कार्य–क्षेत्र, उपलब्धि, योगदान एवं प्रासंगिकता और महत्त्व। व्यक्ति–चित्र लेखन के लिए इन चारों पक्षों को संतुलित ढंग से प्रस्तुत करना होता है। इस इकाई को पढ़ने के बाद आप व्यक्ति–चित्र के लेखन के चारों पक्षों को समझ सकते हैं और लेखन के दौरान उनका समुचित ढंग से प्रयोग कर सकते हैं।

- व्यक्ति–चित्र की भाषा समाचार लिखने से किंचित भिन्न परंतु निबंधों की भाषा से अधिक सरल होनी चाहिए। उसमें सहजता के साथ रोचकता भी होनी चाहिए। उसकी शैली विवरणात्मक नहीं होनी चाहिए, न ही लेख की तरह सपाट होनी चाहिए। व्यक्ति–चित्र में व्यक्ति का एक खास रेखाचित्र प्रस्तुत होना चाहिए जो संक्षिप्त तो हो परंतु आर्कषक और ज्ञानवर्द्धक भी हो। इस इकाई को पढ़ने के बाद आप व्यक्ति–चित्र का आरंभ कर सकते हैं।

**अभ्यास**

1) पत्र–पत्रिकाओं में से कोई व्यक्ति–चित्र चुनिए और उसको पढ़कर बताइए कि इसे प्रकाशित करने का उद्देश्य क्या था? अपना उत्तर लगभग पाँच पंक्तियों में लिखिए।

........................................................................................................................

........................................................................................................................

........................................................................................................................

........................................................................................................................

2) पत्र–पत्रिकाओं में प्रकाशित किन्हीं दो व्यक्ति–चित्रों की परस्पर तुलना कीजिए। एक ही व्यक्ति पर लिखे दो व्यक्ति–चित्रों को तुलना के लिए चुनना बेहतर होगा। उत्तर लगभग दस पंक्तियों में लिखिए।

........................................................................................................................

........................................................................................................................

........................................................................................................................

........................................................................................................................

3) पत्र–पत्रिकाओं में प्रकाशित सामग्री के आधार पर प्रसिद्ध क्रिकेट खिलाड़ी सचिन तेंदुलकर का जीवन परिचय लिखिए। यह जीवन परिचय व्यक्ति–चित्र के एक अंग के रूप में लिखा जाना चाहिए। जीवन परिचय पाँच पंक्तियों से अधिक में न हो।

........................................................................................................................

........................................................................................................................

........................................................................................................................

........................................................................................................................

4) एक क्रिकेट खिलाड़ी के रूप में सुनील गावसकर के योगदान पर पाँच पंक्तियों में प्रकाश डालिए।

........................................................................................................................

........................................................................................................................

........................................................................................................................

........................................................................................................................

5) अपने पड़ोस में रहने वाले किसी ऐसे व्यक्ति से मिलिए जो सामाजिक कार्यों में गहरी रुचि रखते हों। अपनी मुलाकात के आधार पर लगभग 15 पंक्तियों में उनका एक व्यक्ति–चित्र लिखिए।

........................................................................................................................

........................................................................................................................

........................................................................................................................

........................................................................................................................

6) मुंशी प्रेमचंद पर एक व्यक्ति–चित्र लिखिए जिसमें निम्नलिखित पक्ष प्रस्तुत हों :प्रेमचंद का जीवन परिचय

........................................................................................................................

........................................................................................................................

........................................................................................................................

कार्य–क्षेत्र

........................................................................................................................

........................................................................................................................

........................................................................................................................

साहित्यिक योगदान

........................................................................................................................

........................................................................................................................

........................................................................................................................

महत्त्व

........................................................................................................................

........................................................................................................................

........................................................................................................................

यह व्यक्ति–चित्र लगभग 200 शब्दों में हो। प्रत्येक पक्ष संतुलित हो। इसके लिए आवश्यक सामग्री हेतु आप पुस्तकालयों का प्रयोग करें और व्यक्ति–चित्र के अंत में अपने स्रोत का हवाला दें।

7) उपर्युक्त व्यक्ति–चित्र को 80–100 शब्दों में संक्षिप्त कीजिए और उनमें उपर्युक्त सभी पक्षों को समेटिए।

..........................................................................................................................

..........................................................................................................................

..........................................................................................................................

8) उपर्युक्त व्यक्ति–चित्र के कम–से–कम दो शीर्षक दीजिए।

..........................................................................................................................

..........................................................................................................................

..........................................................................................................................

## 20.10 बोध प्रश्नों/अभ्यासों के उत्तर

**बोध प्रश्न 1**

1) प्रोफाइल का अर्थ है पार्श्वचित्र या रेखाचित्र। यह पार्श्वचित्र किसी व्यक्ति का भी हो सकता है और किसी वस्तु का भी। फीचर लेखन के क्षेत्र में प्रोफाइल ऐसे आलेख को कहेंगे जिनमें व्यक्ति–विशेष का संक्षिप्त जीवन–परिचय दिया गया हो या किसी वस्तु–विशेष का संक्षिप्त विवरण प्रस्तुत किया गया हो।

2) समाचार पत्रों में तरह–तरह के समाचार प्रकाशित होते हैं, नयी–नयी घटनाओं और समस्याओं से लोगों का परिचय होता है। इनके प्रति पाठकों की उत्सुकता बढ़ती है। वे उनके संबंध में और अधिक जानना चाहते हैं। उनसे संबंधित लोगों के बारे में वे जानना चाहते हैं। अपने पाठकों की इसी जिज्ञासा को शांत करने के लिए समाचार पत्र और पत्रिकाएँ व्यक्ति–चित्र प्रकाशित करती हैं।

3) मामूली–से–मामूली आदमी के जीवन में कुछ न कुछ ऐसा अपूर्व और उल्लेखनीय अवश्य होता है जिसे उजागर किया जाए तो वह लोगों के लिए प्रेरणास्पद, ज्ञानवर्धक और रोचक हो सकता है।

4) i) उल्लेखनीय घटनाओं के आधार पर

ii) उल्लेखनीय उपलब्धियों के आधार पर

iii) जन्म दिवस, पुण्य दिवस या मृत्यु के अवसर पर

iv) आम आदमी के जीवन पर ।

**बोध प्रश्न –2**

1) व्यक्ति–चित्र के लिए अध्ययन आवश्यक है क्योंकि जिस व्यक्ति पर व्यक्ति–चित्र लिखना है, उसके बारे में पर्याप्त और सही जानकारी होना आवश्यक है। अध्ययन के बाद लिखने पर यह भी संभव है कि उस व्यक्ति के बारे में कोई नयी महत्वपूर्ण जानकारी आप पाठकों को दें।

2) i) जीवन परिचय

ii) कार्य–क्षेत्र

iii) उपलब्धि और योगदान

iv) प्रासंगिकता और महत्व

3) i) जीविकोपार्जन के लिए किया जाने वाला कार्य

ii) अभिरुचि का वह क्षेत्र जिसमें उल्लेखनीय उपलब्धि के कारण वह चर्चा के योग्य बना है।

**बोध प्रश्न–3**

1) संक्षिप्त व्यक्ति–चित्र 50 से 150 शब्दों के बीच लिखा जा सकता है। इन व्यक्ति–चित्रों में व्यक्ति–चित्र के सभी पक्षों को समेटना संभव नहीं होता। परंतु यह प्रयास अवश्य रहता है कि उल्लेखनीय सभी बातें संक्षेप में आ जाएँ।

2) व्यक्ति–चित्र के आरंभ में उस प्रसंग का उल्लेख होना चाहिए जिसके कारण वह व्यक्ति चर्चा का विषय बना है। इससे लाभ है कि आरंभ में ही पाठक को यह स्पष्ट हो जाता है कि इस व्यक्ति की चर्चा किस संदर्भ में की जा रही है।

3) देखिए उपभाग 20.7.3

**अभ्यास**

1) और 2) स्वयं कीजिए। अगर आपने इकाई को ध्यान से पढ़ा है तो आप आसानी से बता सकते हैं कि व्यक्ति–चित्र क्यों लिखा गया है और दो व्यक्ति–चित्रों की पारस्परिक तुलना भी कर सकते हैं। तुलना में व्यक्ति–चित्र के उद्देश्य और महत्व पर ध्यान केंद्रित कीजिए।

3) इसमें सचिन तेंदुलकर का जन्म वर्ष, जन्म स्थान, क्रिकेट जीवन का आरंभ, क्रिकेट में खास–खास उपलब्धियाँ, मुख्य उल्लेखनीय घटनाओं का उल्लेख कर सकते हैं।

4) इसमें सुनील गावसकर की बल्लेबाजी और कप्तानी पर प्रकाश डालना चाहिए।

5) आप व्यक्ति के जीवन का संक्षिप्त परिचय दें। उसके सामाजिक कार्यों के क्षेत्र का महत्व बताएँ। उसकी गतिविधियों का संक्षिप्त विवरण दें। व्यक्तित्व की कोई उल्लेखनीय विशेषता बताएँ और उसका कोई महत्वपूर्ण कथन उद्धृत करें।

6) स्वयं कीजिए

7) स्वयं कीजिए

8) स्वयं कीजिए। इसके लिए अपने आस पास के पुस्तकालय से प्रेमचंद के बारे में जानकारी प्राप्त कीजिए।

## 20.11 उपयोगी पुस्तकें

चतुर्वेदी, प्रेमनाथ : **फीचर लेखन**, प्रकाशन विभाग, सूचना और प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, पटियाला हाउस, नई दिल्ली–110001

शुक्ल, विष्णुदत्त :**पत्रकार कला,** सहयोगी प्रकाशन, कानपुर

दीक्षित, प्रवीण :**जनमाध्यम और पत्रकारिता,** सहयोगी साहित्य संस्थान, कानपुर

चौहान, कर्ण सिंह (संपादक) : **साक्षात्कार : डॉ रामविलास शर्मा से बातचीत,** राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली

जोशी, **मनोहरश्यामः** बातों–बातों में, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली